

पाठकों में बलवन्त सिंह एक सिद्ध उपन्यासकार भी हैसियत से काफी प्रसिद्धि पा चुके हैं।
इनके उपन्यास, यानी रात, चोर श्रीर चांद श्रीर उजाका दोनों ने इन्हें पाठकों में बहुत प्रिय बना दिया है। लेकिन पाठक गए। शायद इस भने। रंजक सत्य से श्रामिक्त हों कि बलवन्त सिंह उद्दें के सर्वश्रेष्ठ कथाकारों में से एक हैं।

इस संग्रह की सभी कहा नियाँ कल के श्रीर श्राज के पंजाब से सम्बन्ध रखती हैं। पंजाब का इतना यथार्थ चित्रण अभी तक किसी ने नहीं किया था। इसलिए इन कहानियों के रूप में पाठक कुछ ऐसे चित्र देखेंगे जो उनके हृदय पर श्रमिट हो कर रहेंगे। कहानी कला श्रीर विषय बस्त की हिष्ट से भी ये कहानियां बहत ऊँचे स्तर की मानी गई हैं। ग्राज के युग में सद (के 'सहरत' गरीर 'सर्वश्रेष्टर' जैसे शहरों का साधारण प्रयोग होने लगा है तब इन कशनियाँ की इस प्रकार तारीफ करने में फिलक सी मह-सूस होती है, परन्तु इतना कहे निना नहीं रहा जाता कि इस पुस्तक का एक पृष्ठ पढ़ते ही श्राप किसी दूसरी दुनिया में श्रवने को पाने लगें-गे। उर्द कहानी के महान श्रालोचक श्री सला-हुद्दीन ग्रहमद ने इन कहानियों को 'पंजाब की श्रालिफ लैला' का नाम दिया है। श्रीर हमारा विश्वास है कि कहानियां पढ़ कर स्त्राप श्रवश्य ही उनका समर्थन करने को विवश होंगे।



₩

बलवन्त सिंह

#### लेखक की अन्य कृतियाँ

```
स्पन्यास

रात, चोर ग्रीर चाँद

उजाला

एक मामूली लड़की

काले कोस (प्रेस में)

तीसरा त्रादमी (")

उद्दू में

जग्गा (कहानियाँ ग्रीर ड्रामे)

तारोप् (नावलेट व कहानियाँ)

सुनहरा देश (कहानियाँ)

हिन्दुस्तान हमारा (")

शीराजा (")

उजले फूल (")

खुदा की वसीयत (नावलेट संग्रह)
```

[पंजाब के जीवन पर लिखे गए छोटे-उपन्यासीं स्रोर कहानियों का संग्रह ]

> सेखक बलवन्त सिंह



### मूल्यं-तीन रुपया

[प्रथम संस्करण]

प्रकाशक, स्रोंकार शरद लहर प्रकाशन २ मिंटो रोड : इलाहाबाद-२

मुद्रक, प्रताप गुप्त राजीव प्रेस १७ लूकरगंज : इलाहाबाद-१

₹	ख वितरम्पा क्रि. Sah Municipal Library, नकमल प्रकाशन Naini Tal. न्ती: व्यक्तिमाह्यसम्बद्धानिस्थल लाइन्नरी
	निनास Class No, (बिभाग Book No, (पुस्तक)

2982

#### लेखक की बात

इस संग्रह में तीन लघु-उपन्यास ऋँौर सात कहानियाँ शामिल की गई हैं। इन रचनाऋों की पृष्ठ-भूमि पंजाब है।

पिछले कई वर्षा में मैंने सैकड़ो कहानियाँ लिखीं। उनमें ऋनेक पंजाब के बारे में, और इसमें उनमें से चुनी हुई कहानियाँ संग्रहीत हैं।

ं इन कहानियों को तीन हिस्सों में बॉटा जो सकता है। अर्थातं १-विभाजन से पहले का पंजाब, रं-विभाजन के बीच का पंजाब और १-विभाजन के बाद का पंजाब।

ऐसा करने के दो कारण हैं। पहला यह कि इसे पढ़ने के बाद पंजाब का हर रूप पाठकों के सामने छा जाये, दूसरा यह कि इस तरह विभिन्नता पैदा हो जाय। उपर्युक्त क्रम के त्रप्रतिरिक्त इस बात का विशेष रूप से ध्यान रक्खा गया है कि पाठकों के मनोरंजन की यथेष्ट सामग्री एकत्र हो जाय।

पंजाब के बारे में साधारणतया जो दृष्टिकोण गैर पंजाबियों का है, मैंने जान बूभकर उसमें कोई उत्तर-फेर करने की कोशिश नहीं की । लेकिन पंजाबी चरित्र की छिपी हुई नमीं, पंजाब के गीतों का लोच, उसकी ग्रात्मा की सरसता, ग्रत्यिषक तबाही ग्रीर बरबादी के बावजूद उसकी दृदता ग्रीर श्राशाबादिता, इन कहानियों को ध्यान से पढ़ने वालों से छिपी नहीं रह सकती ।

'द्राड', 'जग्गा', 'चोर', ऋौर 'ग्रन्थी' पंजाब के विभाजन के पहले के समय से सम्बन्ध रखती हैं। दो छोटे उपन्यास ग्रर्थात् 'काली तित्तरी' ऋौर 'ऋलवेले' भी उसी समय से सम्बन्धित हैं। 'तीन बातें' दूसरे महायुद्ध की फौजी भर्ती पर एक व्यंग है। इस कहानी के कारण पंजाब पुलिस ने सुक्ते काफी परेशान भी किया।

'पहला पत्थर' पंजाब के विभाजन काल से सम्बन्धित एक छोटा उपन्यास है।

'कुछ चरा' श्रौर 'वैवले ३८' दंगों के बाद की चीजें हैं।

ये कहानियाँ उर्दू में प्रकाशित हो चुकी हैं। इनमें से हर कहानी ब्रौर नाविलेट को उर्दू के पाठकों ब्रौर समालोचकों ने बेहद पसन्द किया है।

मुफे इस बात का अप्रसोस है कि इसी पृष्ठ-भूमि पर लिखी गई कुछ दूसरी अच्छी कहानियाँ भी इस संग्रह में शामिल नहीं की जा सकी । पाठक किसी दूसरे संग्रह में उन्हें पढ़ सकेंगे।

-बलवन्त सिंह

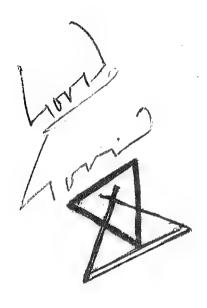
मनजीत को,

जिसने पंजाब के देहात कभी नहीं देखे ब्रौर जिसे चोरों से बेहद डर लगता है ।

Gois

### सूची

त्तघु-उपन्यास			
श्रलवेले	• • •	•••	4
काली तित्तरी		•••	१५१
पहला पत्थर	•••	• = =	२०७
कहानियाँ			
दग्ड	***	•••	٤
जगा	***	• • •	२७
चीर			48
ग्रंथी	***	***	७१
कुछ चग		•••	१२६
तीन वार्ते	***		१३६
वैवले⊸३८			१८८



હેંચહ

यह कहानी पंजाब के एक गाँव से सम्बन्ध रखती है।

छोटा सा गाँव था । दो एक हवेलियों को छोड़ कर बाक़ी सारे घर गारे के बने हुये थे। वहीं पोखरा, वहीं बबूल, रीह ग्रौर वेरियों के इन्त; वहीं धने पीपल के नीचे लॅंक करते हुये रहट, वहीं मुबह के समय कुन्नां पर कुमारियों के जमघट; टोपहर के बड़े बूढ़ों की शतरख़ ग्रौर चौपड़; संघ्या समय नवयुवकों की काइडी ग्रौर शान्तिपूर्ण रातों में वारिसम्रली शाह की हीर, हीर ग्रौर काजी के सवाल जवाब, वहीं मज़बूत, नटखट ग्रौर चञ्चल छोकरियाँ ग्रौर वहीं सीधे-साथे ऊँचे कद के चौड़-चकलें नवयुवक।

संध्या हो चुकी थी।

घर में पकाने के लिये कोई वस्तु न थी इसलिये जीतकोर, पैसा ग्राँचल में बाँध कर दाल लेने के लिये घर से बाहर निकली । लेकिन चार क़दम चल कर कक गई। सामने पीपल के नीचे मुगदर के निकट फ़म्मन सिंह चारपाई पर बैठा मूछों को एंठ रहा था।

जीतकोर जानती थी कि जब वह उसके पास क्रे निकलें भी, तो वह उसे बिना छेड़े कभी न मानेगा, श्रतः उसने सोना कि बाल के बजाय किसी खेत से शाक लेती श्राऊँ। ऐसा करने कि वह पैसा छोटा भाई चन्नन खर्च कर लेगा। श्राज दोपहर भर वह खोड़ की रङ्गदार गोलियों के लिये रोता रहा था। यह सोच कर वह खेतों की श्रोर चली दी।

सूर्य अस्त हो रहा था। बन्नल और गन्नां की छाया लम्बी होती जा रही थी। जीतकोर छोटी-छोटी कॉंटेदार माडियों से शलवार बचाती हुई चली जा रही थी। जामुन के निकट वेरों की माडियाँ थीं। उसने थोंड़े से बेर चन्नन के लिये तोड़ लिये, फिर स्रागे बढ़ी। उसके चेहरे से उदासीनता ग्रौर क्रोध के भाव प्रकट हो रहे थे । इस समय वह फ़म्मन सिंह के विषय में सोच रही थी । श्रांखिर फ़म्मन सिंह उसे क्यों दिक करता है। अगर और कोई नहीं, तो समित्री तो उससे कम सन्दर कभी नहीं थी, वह उसे क्यों नहीं छेड़ता? लेकिन सुमित्री के तीन जवान भाई थे। ऋगर कोई उसकी ऋोर ऋंगुली भी उठाये, तो वे उसका खून पी जायँ, यह विचार ऋाते ही उसे ऋपना माई याद ऋा गया। तीन वर्ष पूर्व, जब कि उसकी आयु पन्द्रह वर्ष की थी, उसका माई वर से भोजन करके कुएँ पर गया, जहाँ उसने तरबूज खा लिया श्रीर साँभ तक हैजे से मर गया। उसका भाई गाँव भर में सब से श्रिधिक लम्बा-तगड़ा था। उसकी छाती ऐसी थी, मानो किसी बड़ी चकी का पाट। एक बालिश्त ऊँची ग्रौर मोटी गर्दन, चौड़े-चकले मज़बूत हाथ, कलाई पकड़ने और कबड्डी खेलने में दूर-दूर तक कोई

उसकी बराबरी न कर सकता था। एक बार कबड्डी में उसने थण्पड़ मार कर अपने प्रतिद्वन्दी नवयुवक की हँसुली की हड्डी तोड़ दी थी। यह बातें याद कर करके जीतकोर की आँखों में आँस् आ गये। भला, आज उसका माई जीवित होता, तो क्या फुम्मन सिंह की हिम्मत पड़ सकती थी कि उससे छेड़खानी करे। कल ही की बात तो है कि उसी हुए ने उसका आँचल खींच कर उसका सिर नंगा कर दिया था। यह सब इसीलिये तो था कि वह नम्बरदार का लड़का था और ये उनके ऋणी थे। माँ की मृत्यु के बाद उन पर संकटों के पहाड़ टूट पड़े। माँ के बाद पिता का स्वर्गवास हुआ; पिता के बाद उसका माई मरा और अब बूढ़ा बाबा रह गया था, जिसे वह बापू कहा करती थी, या चन्नन था, इन वर्ष का बालक—माता-पिता की अन्तिम निशानी। कई बार फसलें खराब हुई और नम्बरदार का डेढ़ सौ रुपये का कर्ज़ा सिर पर हो गया। भूमि अलग रेहन थी। बापू बूढ़ा था और इन सब विपत्तियों पर सबसे बड़ी कठिनाई यह थी कि निर्लंज फुम्मन सिंह उसे दम न लेने देता था।

श्रव जीतकोर का फिर से रक्त उबलने लगा। उसके हृदय में सभी पुरुषों के लिये घृणा उत्पन्न हो रही थी। मन ही मन वह कहने लगी— "श्रव तारा सिंह को ही देखो। उसके न कोई श्रागे न पीछे, वस ले दे के उसकी माँ हैं; थोड़े दिन की मेहमान। उसे भला काहे की चिन्ता? भूमि है, एक कचा मकान, तीन बैल, एक मैं स श्रीर एक गाय भी है। उसे श्रकेले श्रपने के लिये यह काफ़ी से श्रिधिक है। निश्चिन्तता के कारण राँड़ का साँड़ हो रहा है। जब देखो, मूँ अपर हाथ। इतना लम्बा चौड़ा जवान होकर बेचारी निर्वल लड़िक्यों पर श्रावाजों कसते हुये शर्म नहीं श्राती। मैं तो कहूँ भी कि सभी पुरुष परले दर्जे के गुरुडे श्रीर पाजी होते हैं। जब कभी पानी का घड़ा कुएँ से उठा कर लाती हूँ, तो कैसे भद्दे स्वर से गाता है—

'निका घड़ा चक लिछ्ये! तेरे लकन्ं जरब न श्रावे! निका घड़ा चक लिछ्ये!

( हे युवती, तू छोटा घड़ा उठाया कर । मुमे मय है कि कहीं तेरी पतली कमर में बल न आ जाये।)

बापू का विचार है कि मैं उससे विवाह कर लूँ, मगर मैं ऐसे लक्जों के साथ विवाह क्यों कहूँ ? माना कि फुम्मन सिंह की भाँति उसने कभी हाथ नहीं फेंका, मगर इस तरह नवयुवतियों को मुना-सुना कर गाना भी तो भत्ते ब्रादमियों का काम नहीं।

उस समय जीतकोर को रह-रह कर विचार श्राता था कि काश, वाह गुरू श्रकाल पुरख उसे शक्ति देता, तो वह इन दिल-फेंक प्रेमियों को ईट का जवाब पत्थर से देती।

चलते-चलते वह रक गई। सामने गन्ने के खेता के पास ही हरा-मरा शाक का खेत था। लेकिन वह खेत था ताराशिह का। उसने इघर-उधर देखा। पशुत्र्यों का वाँधने का मकान खाली मालूम होता था। रहट चल रहा था श्रौर पास ही बैल बाँधा हुआ था।

उसने जब अच्छी तरह देख लिया कि कोई निकट नहीं है, तो वह खुपके से खेत में सिमट-सिमटा कर बैट गई और जल्दी-जल्दी शाक तोड़ने लगी। सहसा एक आवाज सुन कर उसने सहम कर सिर ऊपर उठाया। देखा, तो दूर गन्ने के खेतों से तारू हाथ में फावड़ा लिये उच स्वर में गालियाँ देता चला आ रहा है। उसके शारीर में सनसनी सी उत्पन्न हुई और वह शाक वहीं फेंक कर जल्दी-जल्दी दूसरी और को चल दी। इतने में तारू वहाँ आ पहुँचा। उसने तोड़ा हुआ शाक हाथ में उठा कर देखा और फिर उसकी ओर लपका। इधर उसकी छोटी-छाटी फटी हुई स्लीपर हरी घास पर आर-बार फिसलती थी। यह देखकर कि तारू उसको पकड़ा ही चाहता है, वह माग खड़ी

हुई । तारू भी दौड़ा। थोड़ी ही दौड़ में तारू ने उसे जा दशेचा श्रीर उसकी कलाई को मज़बूती से पकड़ कर बोला— "क्यों री जीतो! हम से यह चालाकी ? रोज तू ही शाक चुराकर ले जाती थी न ? श्राज मैं भी इसी ताक में बैठा था।"

जीतो रोती हुई ग्रौर उसकी कड़ी पकड़ से हाथ छुड़ाने की चेष्टा करती हुई बोली—"मैं तो तेरे खेत में पहिले कभी नहीं ग्राई...छोड़ मुभे।"

"कभी नहीं ग्राई थी..." तारू दाँत पीसते हुये बोला— "चल ग्राज मैं तुभे चलाता हूँ मजा।"

तारू उसे घसीटता हुन्ना कच्चे मकान की न्नोर ले गया न्नोर दर-वाजा खोल कर उसे जोर से न्नान्दर दकेल दिया। वह भैंस के ऊपर गिरने से नाल-वाल बची। उसकी एक चूड़ी भी टूट गई। चूड़ी को टूटते देखकर उससे सहन न हो सका। चिल्ला कर बोली—"त्ने मेरी चूड़ी तोड़ दी; मैंने कैसे चाव से मेले में ली थी।" उसका स्वर भरी गया न्नोर वह टूटी हुई चूड़ियों को देख-देख कर रोने लगी।

त्राव तारू नर्म पड़ गया। उसे दुख भी हुत्रा। सहसा उसकी दृष्टि जीतों की कलाई पर पड़ी जिसमें से चूड़ी का दुकड़ा चुम जाने से खून बह रहा था। वह एकदम त्रागे बढ़ा—"श्रोहो! जीतो, तुम्हारी कलाई से खुन बह रहा है, लाश्रो..."

''हट ।'' जीतो ने दो कदम पीछे, हट कर कहा—''बदमाश... कत्तर्मुंहा...मुसटंडा...''

तारू गालियाँ खाकर चुप हो गया । उसे यह पता नहीं था कि बात का वतंगड़ बन जायगा । वह तो चाण भर के लिये जीतो को परेशान करना चाहता था, क्योंकि उसे दिक करने में उसे ह्यानन्द ह्याता था । उसका यह उद्देश्य कभी न था कि जीतो की कोई हानि हो या वह उसे कोई शारीरिक कष्ट पहुँचाये ।

जीतो दीवार के पास खड़ी चुपके-चुपके रो रही थी और तारू अपनी गर्दन खुजला रहा था। उसके मन में दया के भाव उत्पन्न हो चुके थे, पर वह सहानुभूति नहीं प्रकट कर सकता था। च्रण भर के बाद वह बाहर निकल आया और द्वार बन्द करके खेतों की ओर चला गया।

थोड़ी देर के बाद तारू सरसों का बिह्या शाक लिये सहन में ग्राया। जीतो ने ग्राँख उठाकर उसकी ग्रोर देखा:। उसकी भींगी-भींगी लम्बी पलकों को देखकर तारू के हृदय में हूक-सी उठी। उसे ग्रापने किये पर बड़ा खेद हो रहा था। वह फिफ्कता हुग्रा ग्रांगे बढ़ा ग्रीर शाक का गट्टा ग्रागे बढ़ाते हुये बोला—"जीतो! ग्राब तुम घर जाग्रो, लो यह शाक।"

जीतो पहिलो ही भरी बैटी थी। उसने भरपट कर शाक लिया ख्रौर उलटा उसके मुँह पर दे मारा। सारा शाक बिखर कर ज्मीन पर गिर पड़ा ख्रौर दो-चार पत्ते तारू की छोटी-छोटी दाड़ी में धुस कर रह गये। तारू मुँह से कुछ न बोला ख्रौर भुक कर फिर शाक चुनने लगा।

जीतो जल्दी से बाहर निकल आई। तारू भी शाक लिये पीछे-पीछे लपका। जीतो पानी की नाली फाँदने लगी, तो उसका पाँव जमीन में धँस गया, क्योंकि जमीन नमी के कारण नमें हो रही थी। उसने पाँव बाहर खींच लिया, लेकिन स्लीपर फँसी रह गई। तारू ने बढ़कर जल्दी से स्लीपर बाहर खींच ली और कहने लगा—"तुम ठहरों, मैं ग्राभी धोये देता हूँ।"

नाली के किनारे कपड़े धोने की सिल पड़ी थी। जीतो उस पर मुँह फुलां कर बैठ गई श्रौर तारूं पानी की धारा में पहिले शाक धोने लगा। वह श्रव कोई संधि-वार्ता करना चाहता था। धीमे स्वर में श्रौर श्रपनी समभा में बहुत नर्म स्वर में उसने कहना शुरू किया—"जीतो! यह भैंस तो श्रव दो कौड़ी की भी नहीं रही। तीन सेर, केवल तीन सेर दूध देती है। भला ऐसी भैंस रखने से क्या लाम ?—एक भूरी भैंस मेरी नज़र में है, कम से कम सोलह सेर दूध देने वाली। दाम श्रिधिक है, मगर फुछ हर्ज नहीं। मुक्ते भैंस रखने का बहुत शौक है। मैंने एक सौ पचपन रुपये जमा किये हैं—बड़ी कठिनाई से—बड़ी ही कठिनाई से। उस भैंस को श्रवश्य खरीदूंगा। ऐसी मरियल भैंस रखने से क्या लाभ ? ऐसी भैंस..."

तारू को ये बातें बिल्कुल अर्थहीन सी लग रही थीं। उसे इतना भी साहस न होता था कि दृष्टि उठा कर जीतो की आर देख ले। उसने शाक धोकर एक आर रख दिया और अब दूटी हुई स्लीपर धोने लगा। एक और बात स्भी, बोला—"और हाँ, तुम वरयामू को तो जानती ही हो, बहुत ही खोटा आदमी है। एक दिन क्या देखता हूँ कि चन्नन के कान ऐंठ रहा है। मैंने कारण पूछा तो कुछ डर गया। कहने लगा कि इसने खेत से एक खरबूजा चुराया था। मैंने चन्नन को उसके हाथ से छुड़ाया। बेचारा चिड़िया की भाँति सहमा हुआ था और फिर मैंने वरयामू की गर्दन पर धप दिये और कहा—"तू इतनी सी बात पर बच्चे को मारे डालता है। खनरदार! जो इसे कभी हाथ लगाया तो...जानता नहीं चन्नन किसका भाई है ११७

यह कहकर तारू चुप हो गया श्रीर उसने कनिखयों से जीता की श्रीर देखा। परन्तु वह श्रभी तक मुँह फुलाये चुपचाप श्रपने कबूतरां के से सफ़ द-सफ़ द पैरों को ठीकरी से रगड़-रगड़कर थे। रही थी। तारू उठा श्रीर खीपर उसके पाँवां के पास रख दी श्रीर शाक उसकी फोली में डाल दिया। वह उपेचा से उठी श्रीर इठलाती हुई चल दी। वह समीप के मार्ग से जल्दी से पहुँचना चाहती थी, क्योंकि श्रव श्रुंचेरा हो चला था। मगर रास्ता खराब था; खेतां में पानी भरा था श्रीर मेंड बहुत कम चौड़ी थी। जीतो ने स्लीपर हाथ में लेकर जजाय मेंड के, पानी में से होकर जाने की ठानी। तारू जल्दी से श्रागे बढ़ा

ग्रोर उसका हाथ थाम कर बोला—"तुम स्लीपर पहिन कर मेंड पर से चली चलो, क्योंकि पानी के ग्रन्दर कॉंटेदार भाड़ियाँ हैं.....मैं तुमको सहारा दिये रहूँगा।"

जीतों ने सन्के से हाथ छुड़ा लिया ग्रौर कहने लगी—"तुम लोगों को लाज नहीं ग्राती, तुम लोग हर एक काम बुरी नीयत से करते हो। मगर मैंने ग्रव निश्चय कर लिया है कि तुम लोगों की इस प्रकार की धृष्टता चुपके से न सहूँगी।"

यह 'बुरी नीयत' के शब्द सुनकर तारू ने ऋपनी सफ़ाई पेश करनी चाही मगर जीतो चमक कर बोली—"और ऋाज मैं तुम्हें सावधान किये देती हूँ कि भविष्य में मुफे हाथ लगाने का साहस कभी न करना, नहीं तो हाथ तोड़ दूँगी।"

तारू ने पहिले उसके नर्म ग्रीर कोमल, नन्हें मुन्ते हाथों को देखा, फिर श्रपने भारी भरकम, मैले-कुचैले ग्रीर खुरदुरे हाथों पर दृष्टि डाली श्रीर तब उसके ग्रोठों पर हल्की सो मुस्कान नाच उठी

जीतों को उसकी यह हरकत देखकर जहर-सा चढ़ गया और उसने आब देखा न ताब, तड़ाक से स्लीपर उसके मुँह पर दे मारी।

"जीता !" तारू श्रकस्मात सिंह की भाँति कोध में गरजा, लेकिन फिर न जाने क्या सोचकर चुप हो गया ।

कुछ देर के लिये दोनों ज्यार सन्नाटा-सा रहा, फिर जीतो बेपरवाही से शलवार उठाकर पानी में चल दी । स्लीपर की एक कील थोड़ी बाहर निकली हुई थी जिसके कारण तारू का माथा छिल गया और रक्त बहने लगा । मगर वह रक्त की कुछ भी परवाह किये बिना जीतों के ज्यागे-त्रागे चल रहा था । मार्ग में जो कॉटेदार भाड़ी होती उसे अपने फावहें के एक बार से उत्लाडकर जीतों का मार्ग साफ़ कर देता । जब यह जलमार्ग समात हो गया, तो तारू ने बढ़कर कॉटेदार भाड़ी में से रास्ता बना दिया और स्वयं ठहर गया । जीतों ने एक च्रण के लिये

उसके रक्त से तर कुर्तें की श्रोर देखा और फिर चुपचाप घर की स्रोर चल दी।

ग्रॅंधेरे में उसने घर का द्वार खोला।

एक ग्रोर दिया जल रहा था। बापू गॅंडासे से ज्वार काटने में व्यस्त था ग्रौर चन्नन कैंची से काराज़ के फूल काट रहा था।

जीतो ग्रन्दर गई तो बापू ने एक बार सिर उठाया ग्रौर फिर फुक गया। चन्नन ने एक बार कहा—"वहिन ग्रा गई।" ग्रौर फिर ग्रपने काम में लग गया।

उसने कोने में से कपास की स्ख़ी छुड़ियाँ उठाईं ग्राँर उन्हें तोड़ कर चूल्हें में रक्खा ग्राँर ऊपर उपले रखकर ग्राग जलाई। फिर मिट्टी की हॅडिया में शाक पकने के लिये रख दिया।

बापू धीरे से बोला—"ग्राज नम्बरदार ग्रौर सिपाही .फिर ग्राये थे।"

वह सब कुछ समभ गई। उसके हाथ एक गये। वह कल्पना लोक में विचरण करने लगी। उसे विनाश श्रौर बदनामी नाचती हुई दिखाई दे रही थी। उसने ठणडी साँस लेकर सिर भुका लिया श्रौर कुछ व्याकुलता से उठकर, श्राटा लेकर तन्दूर पर रोटी पकाने चली गई।

रोटी खात समय बापू ने बताया कि सिपाही कहता था कि यदि परसों तक रुपये का प्रबन्ध न हो सका, तो घर की कुर्क़ी करादी जायगी।

× × ×

मनुष्य पर जब विपत्ति ग्राती है, तो एक नहीं बल्कि सैकड़ों विप-त्तियाँ पारी-पारी से ग्राक्रमण करके उसको विवश ग्रौर लाचार बना देती हैं।

त्राज मानो त्रान्तिम दिन था । सुबह से बाहर गया हुत्रा बापू दोपहर ि १७ }

को घर लौटा । उसके उदास मुरींदार चेहरे से साफ प्रकट होता था कि रुपए का प्रबन्ध नहीं हो सका । जीतो की माँ का एक सोने का गहना बचा था जिसके कुल बाईस रुपया मिले थे। बाक़ी रैंतीस कहाँ से आयँगे ! घर के जानवर बेचने से कुछ रुपया मिल सकता था, मगर उन्हों से तो रोजी थी। यदि वे विक गये, तो दाल-रोटी से भी गये। जीतो दोपहर का कार्य समाप्त कर घर से बाहर थोड़ी देर तक खुली हवा में खड़ी रही। नम्बरदार अभी तक न आया था, लेकिन उसे आना अवश्य था। और कल ! सारी दुनिया उनका तमाशा देखेगी।

सामने से काली घटा भूम कर उठी ख्रौर खाकाश पर छा गई।

जीतां गुरुद्वारे की स्त्रोर चल दी। यह छोटा-सा गुरुद्वारा गाँव से काई दो-तीन फ़र्लांग पर था। इमारत पुरानी थी, दो-तीन कोटरियाँ यात्रियों के लिये बनी थीं स्त्रोर साथ ही एक छोटी सी वाटिका भी थी।

गुरुद्वारे का कार्य एक पवित्रात्मा के सिपुर्द था। जीतो के बापू की उनसे गाढ़ी छुनती थी। ये महात्मा जीतो को सिख गुरुखों के पविष्ठ जीवन की घटनायें, उनके बिलदान और त्याग की कथायें मुनाया करते थे जिससे जीतो के मन को शान्ति मिला करती थी। जब वह वहाँ पहुँची, तो मालूम हुआ कि वे महात्मा किसी काम से दूसरे गाँव में गये हुये हैं। उसने कुएँ पर स्नान किया, पवित्र प्रत्थ साहब के आगे सिर कुकाया और बाबा नानक से रो-रो कर इस विपत्ति के टल जाने की प्रार्थना करती रही। किर उसने चमेली के फूल चुने और चन्नन के लिये माला गूँथने लगी, क्योंकि आज सुबह ही उसने उसको माला देने का पक्का वचन दिया था। इतने में वर्षा आरम्म हो गई। खूब मूसलाधार वर्षा हुई! अन्त में जब पानी बन्द हो गया और वे सिख महात्मा न आये तो जीनो ने माला अपने बालों के जूड़े से लपेटी ओर गाँव की ओर चल दी।

चादत्त ग्रमी तक छाये हुये थे; प्रकाश धीरे-घीरे कम हो रहा था। [ १८, ] यह अभी तक घर से काफ़ी दूर थी कि उसने देखा, एक सिपाही और गाँव का नम्बरदार उनके घर से वाहर आ रहे हैं। वह जहाँ थी, वहीं खड़ी रह गईं। उसके पाँव जम गये। आख़िर क्या हुआ ? कल... हाँ कल ढोल पिट जायगा...वह आगे कुछ न सोच सकी। वह लड़-खड़ाते हुये कदमों से घर की ओर जाने के बजाय और ही किसी और चल दी। वह जानती थी कि इस समय उसके चुद्ध बापू की क्या दशा हो रही होगी, मगर उसे साहस न होता था कि वह घर जाय। वह विचित्र परेशानी में चलती गईं। न जाने कितनी दूर तक—अन्त में उसकी टाँगों ने जवाब दें दिया और वह वहीं खेत के किनारे बैठ गईं।

हम दुख से इतना नहीं घबराते जितना दुख की कल्पना से। वह जानती थी कि इस कष्ट का सामना उसे करना ही पड़ेगा। परन्तु वह चाहती थी कि अन्धकार छा जाय और वह अन्धकार में सब की दृष्टि से बच कर चुपके से अपने घर में चली जाय। उसकी आँखां के सामने अपने घर का चित्र आ गया, जहाँ उसने बचपन से अब तक अपना जीवन बिताया था और अब वह घर दूसरे का होने वाला था।

श्रन्थकार छाने लगा । श्राकाश पर इक्का-दुक्का तारे भिलमिलाने लगे । पशु गाँव को लौट रहेथे । तालाव के किनारे पीले-पीले मेंदक टर्रा रहेथे । भाड़ियों में टिड्डे श्रपने उच्च स्वर में बोल रहेथे श्रौर गिद्ध वेरियों पर बैठे कॅंच रहेथे।

जीतो ने सिर उठाया। सामने धुँध में तारू का कच्चा वर ग्राँर रहट दिखाई पड़ रहा था। ग्राज तारू का कुग्राँ देख कर जीतो पर एक नशा-सा छा गया। पिछली घटना उसकी ग्राँखां के सामने नाच गई जब वह शाक लेने के लिये गई थी। तारू की कहता, उसकी चूड़ी का दूटना, तारू का पछताना ग्राँर उसे शाक लाकर देना, उसकी स्लीपर घोना फिर हाथ लगा देना ग्रौर स्लीपर खाकर भी सहन करना, उसके रास्ते से काँटे साफ़ करना ग्रौर उसके माथे से रक्त का बहना, सब

उसकी दृष्टि के सामने फिर गया। वह सोचने लगी कि तारू में लाख दोष मही, पर दिल का बुरा नहीं और आज जब कि उसका हृद्य उमड़ा आता था, वह चाहती थी कि कोई उसकी विपत्ति-कथा सुने। यदि मुनने वाला सहानुभृति के दो शब्द भी कह देगा, तो उसके हृदय को सन्तोष हो जायगा। मगर ऐसा हमदर्द था कौन ?

तारू के कुएँ की इस समय कैसी शोभा थी। उस रामय रहट की हूँ-कूँ और पशुग्रों की घंटियों की उन्-टन् ने कैसा विचित्र समाँ बाँध रक्ता था। शरीह के ऊँचे वृद्ध वायु में मूम रहे थे। हरे-भरे खेत में सफेद घोड़ी वास चर रही थी; गन्नों के खेत के पास कुत्ते खेल रहे थे वे कमी दुन हवा में उठा कर विचित्र ढंग से चलते, कमी गुरी कर एक दूसरे पर लपकते और फिर इकड़े होकर नये-नये खेल खेलने लगते।

जीतों को अनायास ही विश्वास होने लगा कि तारू उसका दुखड़ा अवश्य सहानुभृति के साथ सुनेगा। यह सीच कर कि इस प्रकार समय भी कट जायगा और उसके हृदय का भार भी हल्का हो जायगा, वह कुएँ की और चल दी। मदार के पेड़ी और कांटेदार भाड़ियों में होती हुई वह कुएँ पर गई। हरी-हरी घास की सीधी-सीधी सुगन्ध आ रही थी। जीतों ने इधर-उधर तारू को देखा, मगर वह दिखाई न पड़ा। यह दरवाने की और वढ़ी, सुद्ध ठिठकी, ठिठक कर बढ़ी और धीरे से कुएडी खटकारई।

"कोन है ?" अन्दर से तारू ने कड़े स्वर में पूछा। जीनो चुप रही। "द्यरे भाई कीन है ? चले आयां, ब्रार खुला है।"

जीतों ने वीरे से द्वार खील दिया। तारू उसे देखते ही उछ्जल पड़ा, "ग्राग्रो जीतो ! तुम केंसे रास्ता चुल पड़ीं ?"

उसने कुछ, जवाब न बन पड़ा। उसने तारू की स्रोर, जो पीड़ी [ २० ] पर बैठा गन्ना चूस रहा था, दबी-दबी दृष्टि से देखा और धीर से बोली--

"माँ १ माँ तो कुएँ पर बहुत कम आती है। आती भी है तो दिन को । इस समय घर पर ही रहती है।"

वह जानती थी कि तारू की माँ कुएँ पर नहीं रहती, गाँव में रहती है। वह लौटने लगी, तो तारू ने डरते डरते पीढ़ी अपने नीचे से निकाल कर उसकी खोर ढकेल दी खौर किमकते हुए बोला—"जीतो! खब खाई हो तो बैठो......खगर तुम्हें जल्दी न हो तो बैठो, साक ले जाख़ों, चब्रन के लिये गन्ने लेती जाना। गन्ने बहुत मीठे हैं।"

जीतो पीढ़ी लेकर ऋँधेरे कोने में बैठ गई।

तारू ने टाट पर बैठते हुये पूछा—"ग्राज तो वर्षा ग्राच्छी है। गई है। हवा मजे की चल रही है...क्या तुम रार्वत पियोगी र गुड़ बहुत बढ़िया रक्खा है।"

''नहीं, प्यास नहीं है इस वक्त ।"

"श्रच्छा, कुछ हर्ज नही, तुम गुड़ घर ले जाना श्रौर कल शर्वत चना कर देखना।"

"ग्रन्छ। ।"

"मैंने चन्नन से कहा था कि गन्ने ले जाय, मगर वह आज तो आया नहीं । उसे यहीं मेजा दिया करो, रास्ता जानता ही है। रस पी जाया करेगा, और यह हमारे पिछ्याड़े वेर लगे हुये हैं—लाल-लाल, बहुत मीठे। मैं तो इधर-उधर के छोकरों को तोड़ने नहीं देता, मैं, कहता हूँ कि चन्नन आये तो खाये। आखिर बचा है न, उसे वेर बहुत माते हैं जब हम तुम छोटे थे, याद है न, हम भी वेर खाने जाया करते थे।"

"क्यों तारू ! तुम्हारे गन्ने तो खूब हुये हैं श्रव की।" जीतो ने वात का रख बदल कर कहा।

"हाँ, सब बाह गुरु ऋकाल पुरख की कृपा है।" ि२१

यह चुप रही । "कहो तो बाहर से गन्ना ला दूँ ?" "नहीं तारू, मे राजी नहीं चाहता ।"

ग्रज्ञ फिर कुछ देर के लिये सन्नाटा रहा। तारू उसके मौन का कारण जानना चाहता था फिर बहुत सावधानी से कहने लगा—"जीतो मुफे वास्तव में डर लगता है कुछ कहते हुये, कहीं...कहीं तुम विगड़ न जाग्रो। ग्राखिर बताग्रो न, तुम ग्राज इतनी चुप क्यों हो ? क्या कोई खास बात है ?"

ये सहानुभृति पूर्ण शब्द सुनकर जीतो की आँखों में आँसू आ गये, मगर ग्रन्थकार के कारण तारू उन्हें देख न सका । परन्तु वह अपने भर्राये हुये स्वर को न छिपा सकी—"नहीं तारू...तुम्हें क्या बताऊँ..."

तारू के चेहरे पर कोध के चिन्ह प्रकट होने लगे, ऋाँखें चमकने लगीं। वह कड़े स्वर में कड़क कर बोला—"फुम्मन सिंह ने कोई दुअता की निं की शवता दो जीतो, वह देख सामने कुपाण लटकी हुई है। मैंने ऋाज ही तेज की है। मैं फुम्मन के विषय में थोड़ा-बहुत जानता हूँ मगर ऋब उसकी मौत दूर नहीं। यह कुपाण उसी का खून पीने के लिये रक्खी है..."

"नहीं तारू !" जीता हाथ उठाकर बोली ।—"यहवात नहीं,यह बात बिल्कुल नहीं...में बताती हूँ, तुमसे, कुछ छिपा नहीं... ग्रसल बात यह है कि..."

दरवाजा धीरे से खुला। तारू चीते की भाँति चौकन्ना हो गया श्रीर उसका हाथ तुरन्त पास ही पड़ी हुई कुल्हाड़ी पर जा पड़ा। जीतों ने चौंक कर दरवाजे की स्रोर देखा।

"क्या मेरी बहिन यहाँ है ?" चन्नन ने भीरे से दरवाजे में से सिर निकाल कर तारू से पूछा । तारू ने इतमीनान की साँस ली ऋौर कुल्हाड़ी पीछे, की ग्रोर सरका दी।

"चाँद, ग्रा जाम्रो, मैं यहाँ हूँ ।"

चन्नन दौड़कर आया और अपनी बहिन की गोद में चढ़ बैठा।

"ढूँढ़ लिया न तुम्हें, मैं तुम्हें बड़ी देर से ढूँढ़ रहा हूँ। फिर मैंने सोचा कि बहिन ज़रूर मेरे लिये बेर लेने के लिये तारू के कुएँ पर गई होगी।"

जीतों उसके माथे पर से बाल हटाते हुए बोली—"क्यों रे, तुमें डर नहीं लगा, श्राँधेरे में ?"

"नहीं।"

तारू बोला—"वाह, भला शेरों के बचों को भी कभी डर लगता है।" चन्नन ने तारू की ऋार देखकर कहा—"ऋंच्छा तुमने कहा था कि गन्ने देंगे, लाऋो ऋब...मैं तो बहुत से लूँगा।"

🦅 "ग्राम्रो, जितने चाहो लो।"

"श्रच्छा लात्रों, दो।" यह कहकर वह गोदी से उतरने लगा मगर फिर रुक गया। "ज्रा ठहरों, एक बात है, तुम्हें नहीं बतायेंगे।" फिर बहिन के कान में कहने लगा—"बहिन, हमें एक पैसा दों, तुमने कहा था।"

"वर पर लेना।"

चन्नन कन्धा पकड़ कर हिलाते हुये हठ करने लगा—"ग्रभी दो।" "तुम बहुत ग्रन्छे हो चन्नन।" जीतो ने चुमकारते हुये कहा— "इस वक्त हैं नहीं।"

"तो तारू से ले दो।" "उसके पास भी नहीं हैं"

''है क्यों नहीं...श्राज जब तुम बाहर चली गई थीं, तारू हमारे घर श्राया श्रीर बापू को उसने छन-छन करके बहुत से स्पये गिन दिये।'' [ २३ ]

"चन्नन!" जीतो श्रारचर्य से बोली।

लेकिन चन्नन स्त्रपनी ही धुन में था। "मगर मैं तो कहता हूँ कि वापू ने बहुत बुरा किया। उसने शाम को सब रुपया नम्बरदार की दे दिया..."

जीतो के आश्चर्य की सीमा न रही। "मगर यह तुमसे किसने कहा?"

"किसने कहा ?" चन्नन चीख कर बीला—''मैंने खुद देखा, अच्छा अब बताओ, तारू से पैसे ले लूँ ?"

"तुमने खुद देखा!" कह कर वह जुपचाप हवा में ताकने लगी। एक वह तूफान और आँधी के बाद मानी एकाएक बादल पट गये। वायु स्तब्ध हो गई और चारां और शान्ति छा गई। उसके मस्तिष्क की चिन्ताएँ दूर हो गई। उसके हृदय पर से एक भार सा हट गया। इस तल्लीनता में जीतो को ज्ञात ही न हुआ कि कब चन्नन ने तारू से पैसा लिया और कब वह कुएँ पर से गन्ने के लिये बाहर दौड़ गया और कब तारू अपनी जगह से उठ कर भैंस के पास जा खड़ा हुआ। इस आनन्द- मिश्रित तल्लीनता में जीतों को तारू का स्थान आया। वह संसार में उसका सच्चा सहायक था। कितना सजन, इतनी देर तक बातें करने पर भी उसने रूपयों की किसी प्रकार की चर्चा नहीं की न कोई संकेत ही किया। वे रूपये उसने किस-किस कठिनाई से जमा किये थे। मगर उसने अपनी निजी इच्छा पर उसकी आवश्यकता को तरजीह दी।

तारू का ध्यान त्राते ही उसकी सूरत उसकी श्राँखों के सामने त्रा खड़ी हुई। जब उसने तारू से कहा था कि वह प्रत्येक काम खराब नीयत से करता है, ये कैसे स्वार्थपूर्ण ग्रौर श्रथ हीन शब्द थे, वह उसका घायल माथा, वह बहता हुआ खून, वह उसकी सहनशीलता— जीता चौंकी ग्रौर उसकी ग्राँखें तारू को ढूँढने लगीं जो कि उसकी स्रोर पीठ किये भेस के पास खड़ा था । जीतो उसके पास जाकर धीरें से बोली—"तारू!"

वह चुप रहा।

"मेरी तरफ़ देखों, तारू !"

तारू ने देखा कि जीतो की बड़ी-बड़ी आँखों में आँसू डबडवा रहे हैं।

वह ऋपने भारी स्वर में बोला—"रोती क्यों हो जीतो, मैं तो हर समय इसी कोशिश में रहता हूँ कि तुम्हारे किसी काम ऋ। सकूँ। सुके ऋपनी उस दिन की हरकत पर बहुत खेद है।"

जीतों ने धीरे से ग्रपना हाथ उसके माथे पर रख दिया—जिस जगह उसके ग्रामागे हाथों ने स्तीपर मारी थी। फिर धीरे से कहने लगी—"तारू, श्रव मैं जाती हूँ। मैं फिर श्राऊँगी, श्रव तुम श्राराम करो। हाँ. मैं श्राऊँगी।"

यह कह कर वह पीढ़ी के पास वापस आई स्त्रीर स्लीपर पिहन कर लौटी, तो देखा कि तारू :रास्ता रोके दरवाजे के स्त्रागे खड़ा है। वह मुस्कुरा कर स्त्रपने कड़े स्वर में बोला—"जीतो। स्त्राज फिर मेरी नीयत खराब हो रही है, स्राज फिर दराड दो।"

जीतो ने भूतेंप कर एक उचटती हुई दृष्टि तारू पर डाली, पिर शरीर को चुराती हुई उसकी श्रोर बढ़ी, श्रपने जूड़े से चमेली का हार खोला श्रोर कुळ मुस्कराकर श्रीर कुळ लजाते हुये वह हार उसके गले में डाल दिया।

तारू ने रास्ते से हट कर द्वार खोल दिया। श्रागे चन्नन गन्ने लिये भागा जा रहा था। जीतों ने गन्ने थाम लिये श्रीर उसे गोद में उठा लिया। गोत्रर श्रीर कोचड़ से पाँव बचाती हुई वह चल दी। चन्नन उसके गले में बाहें डाल कर कहने लगा—"बहिन, तारू मुमे बहुत श्रच्छा लगता है, तुम्हें कैसा लगता है ?"

जीतो मन ही मन लजा गई। उसने इधर-उधर देख कर कि कोई मुन तो नहीं रहा है, जवाब दिया—"हाँ चन्नन! तारू मुफे भी... तारू बहुत ग्राव्छा ग्रादमी है।"

जीतो को ग्राव भी तारू के गाने की भारी ग्रीर वेसुरी ग्रावाज

मुनाई वे रही थी--

निका घड़ा चक लिछिये! तेरे लक मूँ जरव न ग्रावे निका घड़ा चक लिछिये!

#### जगा

माभा के इलाके में भीकन एक छोटा सा और अप्रसिद्ध गाँव था। मुश्किल से सौ घर होंगे। अधिकतर सिक्खों की आवादी थी। यहाँ की एक बात विचित्र थी। वह यह कि समय-समय पर यहाँ कोई असाधारण सुन्दर खड़ की जन्म लेती और उसके जवान होने पर उसके साथ किसी नवयुवक के प्रेम की कहानी इतनी प्रसिद्ध होती कि ससी-पुन्त, सोहिनी-महीवाल और हीर-राँमा की कथा भी फीकी पड़ जाती थी। अब की गुरनाम कौर की पारी थी।

गुरनाम के सौन्दर्भ ने स्रास-पास की बस्तियों के नवशुवकों में एक इलचल सी मचा दी थी। वह जिल्कुल गुड़िया सी थी। चाल ऐसी कोमल ि २७ ी

कि घरती पर पदिचिह्न न पड़ते। मदभरी अंति ऐसे पाप की श्रोर श्रामंत्रित करती थीं कि उससे श्रच्छे पुर्प्य की भी कल्पना नहीं की जा सकती थी। लेकिन वह अबोध थी, जवानी आ रही थी और अभी वह नवयुवकों के इशारों का मतलब नहीं समभती थी। वह हर किसी से मुस्कारा कर बात कर लेती थी, अभी उसे अपने रूप का अभिमान न हुआ था। इसीलिये वह जिस व्यक्ति से भी मुस्करा कर बात कर लेती थी, वह यही समभता था कि गुरनाम उससे प्रेम करती है।

शृं गरासिंह ने तो एक बार स्रतानिया नवयुवकों के मजमे में खड़े होकर कह दिया था कि वह गुरनाम को मगा ले जायगा। उसी समय दिलीपसिंह उधर से निकला तो दूसरों ने उसे समक्षाया कि देखो, दिलीपसिंह मी गुरनाम के प्रेमियों में गिना जाता है, वह मुन लेगा तो स्थित खतरनाक रूप धारण कर लेगी। इस पर शृंगारासिंह ने जोर से टहा लगाया और दिलीप के पीछे खड़े होकर बकरा (किसी की दिल्लगी उड़ाने के लिये मुँह पर हाथ रख कर 'मक-मक' की स्थावाज निकालने को बकरा खुलाना कहते हैं) बुला दिया। इस पर दिलीपसिंह की आँखों में खून उतर स्थाया। उसने कोध से शृंगारा की स्थोर देखा और कड़क कर बोला—''त्ने बकरा क्यों बुलाया?"

शृंगारा ने तहमद कस लिया श्रीर ताल ठांक कर मुकाबला करने श्रा खड़ा हुश्रा। दिलीप की श्रांखों से श्राग वरस रही थी। करीव था कि दोनों नवयुवक श्रापस में गुँथ जायँ कि लोगों ने बीच-बचाव कर दिया।...लेकिन कहाँ तक १ एक दिन खूनी पुल पर दोनों का सामना हो गया। दिलीप का टखना उतर गया श्रीर दिलीप की लाठी के एक बार से शृंगारा का जबड़ा टूट गया। जान तो बच गई पर स्रत विगड़ गई। उस दिन से सब के कान खड़े हो गये श्रीर लोगों को मालूम हो गया कि दिलीप के जीते जी गुरनाम के प्रेम का दावा करना श्रासान बात नहीं।

रात भींग लुकी थी। चाँद जवानी पर था। गाँव पर एक रहस्यमय सन्नाटा छाया था। कमी-कमी कुत्तों के भंकने की आवाज आ जाती या जंगली बिल्ले की म्याऊँ-म्याऊँ की, जो उस समय रहट की चर्ला के पास बैठा दुम हिलाते हुए चिल्ला रहा था।

यह रहट कुड़े के देर के पास गाँव के बाहर की तरफ़ था। वहीं पर पीपल का एक बड़ा ग्रीर घना बुक्त था जिस पर मुला पड़ा था। चूंकि वैलों को हॉकने वाला कोई था नहीं इसलिये जब उनका मन चाहता वे चलते श्रौर जब जी जाहता खड़े हो जाते। इस समय भी चपचाप खड़े सींग हिला रहे थे।

इतने में एक साँडनी सवार सिक्ख युवक पीपल के नीचे त्राकर रुका। उसने साँडनी को बैठाना चाहा तो पहिले तो वह जरा बिलबिला कर मचली ग्रौर फिर धम से बैठ गई। पंजाब के देहातों के लिए छ: फट ऊँचा जवान कोई स्त्रसाधारण चीज नहीं, पर इस युवक के कन्वे मामुली से ऋधिक चौड़े थे। हाथों ऋौर चेहरे की रगें उभरी हुई, ऋाँखें लाल श्रंगार, नाक जैसे तोते की चीच, रंग काला, चौड़े श्रीर मजबूत जबड़े, सिर ऐसा दिखता था मानों गरदन से तराश कर बनाया गया हो, जूड़े पर रंग बिरंग की जाली, जिसमें से तीन बड़े-बड़े फ़न्दने निकल कर उसकी काली दादी के पास लटक रहे थे, कानों में बड़े-बड़े मुन्दरे, काले रंग की छोटी सी पगड़ी के दो तीन बल सिर पर, बदन पर लम्बा क़रता श्रीर मूँगिया रंग की धारीदार तहमद जो उसकी एडियों तक लटक रही थी. गले का तसमा खुला हुन्ना न्यौर उसकी छाती पर घने हुए काले बाल श्रीर हाथ में एक तेज श्रीर चमकदार छवी (एक तेज् टेढ़ा हथियार जो कि लाठी के सिरे पर चढ़ा लिया जाता है )।

श्राते ही उसने बैलां को दुतकारा श्रीर वे चलने लगे। उसने जते उतारे, तहमद को ऊपर उठाया और अपने मोटे कड़े ( जो सिख लोग कलाई में पहिने रहते हैं ) को पीछे हटा पानी की भाल की त्रोर बढ़ा ।

पहिले उसने मुँह हाथ घोया, जोर से खाँसा श्रीर फिर पानी पीने लगा।

जब वह पगड़ी के शमले से मुँह पोछने लगा तो एक तक्सी को देख कर ठिठक गया। लड़की ने पानी भरने के लिये घड़ा भाल के नीचे किया। उसकी गोरी कलाई पर की काली काली चूड़ियाँ एक 'छन्न' के शब्द के साथ एकजा हो गईं। गुलाबी रंग की शलबार, छोंट का घुटनों तक कुर्ता, सिर पर धानी रंग की इलकी फुलकी ख्रोड़नी, कानों में छोटी छोटी बालियाँ, जब उसने ख्रापना कामल ख्राधर दाँतों तले दबाया, घड़े की एक भटके के साथ उठा कुल्हे पर रक्ता तो उसकी कमर में एक ख्राकर्यक सा भुकाव पैदा होकर रह गया।

युवक ने पहिले एक पाँव श्रौलू (जहाँ पानी गिरता है) से बाहर निकाला श्रौर उसे भटक कर जूता पहिन लिया। फिर उसने दूसरे पाँव को भटका दिया श्रौर दूसरा जूता भी पहिन लिया। तब वह श्रपनी छवी हाथ में लिये हुए श्रुरूड़ी पर, जहाँ एक मुर्गी के बहुत से सफ़ दे पर पड़े थे, खड़ा हो गया। पास ही किसी के घर की कच्ची दीवार थी, जिस पर उपले रक्खे थे। जब तक्गी दीवार के निकट से निकलने लगी तो पुक्य ने छुवी से एक उपला नीचे गिरा दिया जो उस लड़की के पास ही जाकर गिरा। उस समय श्रजनवी पुक्ष ने उसके पाँव देखे। ऐसे थे वे पाँच माना सफ़ द सफ़ द कबृतर। तलुवों की हलकी गुलाबी रंगत ऐसी मालूम होती थी मानो वे पाँच श्रमी गुलाव की कलियों को रौंद कर चले श्रा रहे हों।

लड़की ने अपनी लम्बी काली पलकें उठा कर उसकी ओर देखा, शायद उसने उसे सिर्फ एक पथिक समभा था, मगर उसकी डरावनी स्रत देख कर उसकी बड़ी-बड़ी सुरमा लगी आँखों में भव की छाया दिखाई पड़ने लगी। पुरुष ने मारी मरकम और कड़े स्वर में पूछा—"त् कौन हैं?" लड़की की दृष्टि पुरुष के चेहरे पर जमी हुई थी। यह पहिला अवसर था कि किसी पुरुष ने उसे इस बेमुरव्वती से सम्बोधित किया था। उसके लाल-लाल कोमल अधर फड़कने लगे, मानो किसी ने उन पर लाल मिचें छिड़क दी हों। मगर पुरुष असाधारण तौर पर भयावना था। पुरुष ने उसी स्वर में अपना सवाल दोहराया—"तू कौन है ?"

लड़की समभ न सकी कि इस बात का क्या उत्तर दे। उसने श्रापनी पतली श्रीर लाल ऋँगुली उठा कर इशारा करते हुये जवाब दिया—"में वहाँ, उस घर में रहती हूँ।"

पुरुप ने चुभती हुई है। प्टें से उसकी और श्रेष्टा और श्रपने चौड़े कन्धों को हिलाते नुरु बोला—"तेरा नाम क्या है ?"

लड़की की ऋाँखें ऋाँस्र से भर गईं, बोली—"गुरनाम !"

"त् वहाँ किसके साथ रहती है ?"

"मेरी माँ है; भाई, बाप, दादा सभी रहते हैं।"

"मुफे त्रपने घर ले चला" पुरुष ने उसके साथ-साथ क्रदम बढ़ाते हुए कहा।

"मुभे तुमसे डर लगता है।"

पुरुष के माथे पर बहुत सी त्योरियाँ पड़ गईं, उसने ऋपनी दुल्हिन की तरह सजी हुई साँडनी की नकेल पकड़ कर ऋपने विचार से ज़रा नर्म स्वर में पूछा—"क्यां, क्या तुम लोग सिक्ख नहीं हो क्या ?"

लड़की का चेहरा कानों तक लाल हो गया—''लेकिन मुक्ते तुम से भय लगता है।"

"क्यां ?" पुरुष ने उजडुपन से स्राप्तह करते हुये पूछा।

लड़की ने च्चए भर के लिये उसकी चमकदार ग्रांखों की ग्रोर देखा, फिर बोली—"तुम हँसते क्यों नहीं ?"

"ऋरे यह बात !" यह कह कर ऋजनवीं ने एक भयानक ठहाका खगाया। मानो कोई पानी से भरा हुआ मटका ज़मीन पर उंडेल दिया

जाय । उसका ठहाका सुन कर कई चिमगादड़ें श्रपना स्थान छोड़कर उड़ गईं।

× × ×

गुरनाम का घर गाँव से वाहर धरीक के दृद्धों के भुगड़ के पास था श्रीर दूर से दिखाई देता था।

दरवाज़े के सामने पहुँच कर अजनवी रक गया और गुरनाम ने अन्दर से अपने बापू और भाई को बाहर भेजा। उन को देखते ही अजनवी ने ऊंचे स्वर में कहा "बाह गुरु जी का खालसा, श्री बाह गुरु जी की फतह।"

"वाह गुरु जी का ख़ालसा, श्री वाह गुरु जी की फ़तेह।" श्रागन्त्रक विना किसी हिचकिचाहट के वोला—"मैं दूर से श्रा रहा हैं. रात श्रिषक वीत ख़की है. मैं श्राज यहीं ठहरूंगा।"

वापू दराँती ऋपने पाते के हाथ में देकर ग्राजनबी के मुंह की स्रोर देखने लगा। वह बहुत सम्य ग्रीर मुसंस्कृत व्यक्ति था मगर ग्रागन्तुक की भयानक स्रत उसे ग्राचरज में डाले हुए थी। खैर, उसने रज्ञामन्दी मकट करते हुए जवाब दिया—"मैं हर तरह से सेवा के..."

इसके पहिले कि वह ऋपना वाक्य पूरा करता ऋगगन्तुक साँडनी लड़के को सौंप कर दरवाज़े के ऋन्दर दाखिल हो चुका था।

यद्यपि घर के कुल सामान पर रारीबी की छाप थी मगर गोबर से लिपी हुई कच्ची दीवारें इस बात का प्रमाण दे रही थीं कि घर की स्त्रियाँ त्रालसी या त्राराम-पसन्द कदापि नहीं हैं। घर के सब व्यक्ति विवाह वाले घर गये थे, सिवाय चार के।

ड्योदी से निकल कर अनजबी सहन में दाख़िल हो गया। एक बचा छाती से गुल्ली-डंडा लगाये सा रहा था। सहन पशुन्त्रों के मल-मूत्र से अपटा पड़ा था। एक ग्रोर नाँद के पास एक मैंस खड़ी जुगाली कर रही थी। मूसे ग्रौर खली की सानी की गन्ध चारों ग्रोर फैली हुई था। रस्सी पर मैले-कुचैले कपड़े लटक रहे थे। एक स्रोर खरास (बैलां द्वारा चलने चाली चक्की), दूसरी स्रोर तन्दूर स्रौर पास ही दीवार से टिका हुस्रा छुकड़े का पहिया, बड़े-बड़े उपले, कोने में कपास की छुड़ियाँ, चूल्हे के पास जुट्टे बरतनों का देर। एक कमरे में सफ़ द-सफ़ द चमकते हुये बरतन दिखाई देरहे थे। साथ ही तागे पिरोये हुये शलजम के कतले सूखने के लिये लटक रहे थे।

सहन से गुज़र कर बूढ़ा बापू अजनबी को दरवाज़े से बाहर छुपर के नीचे ले गया। थोड़ी सी जगह के तीनों छोर कची दीवार उटा दी गई थी। सूखे हुये उपले, जो जलाने के काम छा सकते, इसी जगह रक्खे जाते थे। यहाँ पर एक चारपाई डाल दी गई। चारखानों वाला ६क खेस और अजनबी के दिल की तरह कटोर एक तिकया उस पर रख दिया गया।

गुरनाम ने कपास की छुड़ियों का एक गड़ा तन्दूर में फेंका ग्रौर स्वयं श्राटा गूँधने लगी। जिस समय वह तन्दूर में रोटियाँ लगाने लगी तो उसकी ग्रोड़नी सिर से खिसक गई। उसकी लम्बी चोटी के रंग-विरंगे फुन्दने उसकी पिंडलियों तक लटक रहे थे। दहकते हुये तन्दूर की रोशनी उसके सुन्दर मुख पर पड़ रही थी—ग्रौर श्रजनबी चुपके-चुपके उसे देख रहा था।

शालजम की तरकारी, एक कटोरे में शक्कर ग्रौर थी, डेलां (बेर की भाँति एक फल) का ग्रचार, दो बड़ी-बड़ी प्याज़ की गंटियाँ, ग्रौर ग्राठ वड़ी-बड़ी रोटियाँ थाल में रखकर गुरनाम उसको दे ग्राई।

जब स्रजनबी ने ऊँचे स्वर मे तीन-चार डकारें लीं स्रौर वह ज़ोर-शोर के साथ मुँह में स्रंगुली फेर कर कुल्ली की तो गुरनाम की मालूम हो गया कि वह मोजन समाप्त कर चुका है।

वह बरतन उठाने लगी तो उसने देखा कि ख्रजनबी कपड़े उतार रहा है। जब उसने तहमद उतारी (सिक्ख हमेशा घुटनों तक एक

जाँचिया पहनते हैं ) और उसे भाड़कर तिकये के पास रखने लगा तो सोने का एक कंटा नीचे गिर पड़ा । गुरनाम ठिटक कर वापस जाने लगा तो अजनबी ने घीरे से पूछा—"गुरनाम, बस जा रही हो क्या ?"

गुरनाम त्रापनी त्रादत के त्रनुसार भोलेपन से मुस्कराई त्रौर त्रोढ़नी संभालती हुई त्राने कुक कर धीरे से बोली—''सब लोग सो जाएंने तो में त्राऊंगी।''

× × ×

श्राजनवीं दूर खेतों की श्रोर देख रहा था। श्रीह श्रीर बब्ल के द्वा काले देखों की भाँति चुप खड़े थे। लुगड-मुगड बेरियों पर बबी के घोंसले लटक रहे थे।

ऐसे मुनसान समय में, तारों भरे त्राकाश के नीचे किसी दूर पर चलते हुए रहट से किसी नवयुवक के गाने की हलकी-हलकी त्रावाज क्रा रही थी।

चारे विच केला ई, निकल के मिल बालो। साढ़े वंभनेदा वाबैला ई, नी निकल के मिल बालो।

अर्थात्—प्रेमी प्रेमिका से कहता है कि अन तू घर से बाहर निकल, मुलाकात कर ले, मैं जल्दी जाने वाला हूँ।

इतने में गुरनाम दवे पाँव, शलवार के पाँयचे उठाये, निचला होट दाँता तले दवाये, चुपके चुपके आई।

× × ×

थोड़ी देर बाद दोनों में घुल-मिलकर बातें होने लगीं। श्रजनबी ने बहुत से सोते के गहने श्रौर मोतियों के हार निकाले। स्राश्चर्य के कारण गुरनाम के मुंह से एक चीख निकलने वाली ही थी लेकिन स्रजनवी ने होंठों पर स्रांगुली रखकर चुप रहने का इशारा किया।

गुरनाम बड़ी देर तक मैना की तरह चहकती रहीं, इघर-उधर की बातें करती रही मगर उसका ध्यान गहनों ही की क्रोर था। क्रान्त में उसने अपनी बातों से आप ही उकता कर एक गहरी साँस ली क्रोर थके हुये स्वर में बोली—"क्यों, तुम ये गहने कहाँ से लाये हो—मेरे विचार में तुम जेवकतरे तो नहीं हो, मुफे जेवकतरों, और डाकुक्यां से बहुत डर लगता है। वे फट से गला दवाकर आदमी का मार डालते हैं।" यह कह कर गुरनाम अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से अधेरे की क्रोर घूरने लगी मानो कोई सचमुच का डाकू उसका गला दवाने को आ रहा हो।

"मत घवरात्रों, तुम भी कैसी बच्चों की सी बातें करती हो ! भला मेरे होते हुए तुमको किस बात का भय। उठा, यहाँ मेरे पास चारपाई पर बैठ जास्रो।"

गुरनाम उठ कर उसके पास बैठ गई। उसने श्रजनबी के चौड़े कन्धों को देखा श्रीर फिर मानो श्रपना इत्मीनान कर कहने लगी—"तुम बहुत श्रच्छे हो—ये गहने तुम श्रपनी पत्नी के लिये लाये होंगे, है न ?"
"हाँ।"

गुरनाम ने श्रपनी हथेली पर श्रपने गाल रखते हुये बड़े चाव से पूछा--- "तुम्हारी पत्नी कैसी है !"

"मगर मेरा तो ऋभी ब्याह ही नहीं हुआ।"

''ग्राच्छा, तो होने वाली पत्नी के लिये लाये हो ?"

श्रनजबी ने श्रापनी दाढ़ी के खुरदुरे बांलों पर हाथ फेरते हु ये कहा— "श्रभी तो मुक्ते यह भी नहीं मालूम कि मेरी पत्नी कौन बनेगी, बनेगी भी या नहीं ?"

गुरनाम ने श्रपनी दोनों हथेलियों पर ठुड्ढी रखकर ऋपनी ऋाँखों ि ३५ ]

को जल्दी-जल्दी भाषकाते हुथे, नाक ज़रा सिकोड़ कर भोलेपन से कहा— ''हाँ, तुम काले हो ज़रा।''

त्राजनवी की छाती में जैसे किसी ने घूंसा मार दिया। मगर गुरनाम बड़ी गम्मीरता से किसी गहरी चिन्ता में डूब चुकी थी। शायद वह अजनवी के लिये पढ़ी पात करने का उपाय सोच रही थी।

'ये गहने तुम ले लो।"

गुरनाम ने चौंक कर ग्राजनवी की ग्रोर देखा।

"फिर तुम ऋपनी पत्नी को क्या दोगे ?"

श्रजनबी को कुछ जवाब न स्का। लङ्खड़ाते हुए स्वर में बोला---"फिर मैं तुमसे ले लूंगा।"

गुरनाम की आँखें चमकने लगीं । उसकी वाह्यें खिल गई, ताली बजाकर बोली—"में इनको उपलों में छिपा दूंगी।—कभी-कभी रात की अच्छे-अच्छे गहने पहिनकर खेतों में जाया करूँगी।"

कुछ देर चुप रहने के बाद अजनबी ने कहा—"गुरनाम, उम भी तो सुभकों कुछ हो।"

गुरनाम ने दोनों हाथों से मुंह छिपा लिया—"मेरे पास क्या है ?" "कुछ भी हो।"

गुरनाम चेहरे से हाथ हटाकर कुछ देर सोचती रही । फिर उसने अपने गले से कोड़ियां और खरबूजे के रंग-बिरंग के बीजों का हार उतार कर अजनवी की ओर बढ़ा दिया। वह अपनी इस तुब्छ, मेंट की देख कर कुछ फेंग सी गई और उसके गाल दहकने लगे ।

थोड़ी देर बाद गुरनाम ने एक श्रंगूठी उठाकर कहा—"यह मेरी श्रंगुली में पहिना दो। देखूँ, कैसी लगता है ?"

श्रजनवी ने अपने काले-काले मैले कुचैले तम्बे हाथों में गुरनाम का कंगल-सा हाथ ले लिया । गुरनाम श्राँखें मुकाये, बच्चों की सी सादगी श्रौर दिलचस्पी के साथ श्रंगृठी की श्रोर देख रही थी। उसके केशों ने उसके कपोलों का एक बड़ा भाग छिपा रक्खा था। श्रजनबी तन्मयता से उसके सुन्दर सीपियों जैसे पपोटों पर नज़रें गाड़े हुये था। जब वह उसकी श्रंगुलों में श्रंगूठी पहिनाने लगा तो उसकी श्रपनी श्रगुलियाँ काँपने लगीं श्रीर उसे ऐसा श्रनुभव होने लगा मानो उसकी चार-चार श्रंगुल चौड़ी कलाइयों की शक्ति छीनी जा रही हो।

गुरनाम चौंकी श्रीर सहमी हुई हिरनी की तरह उठ खड़ी हुई।

"माँ खाँस रही हैं—श्रव मैं जाती हूँ।"

श्रजनबी श्रपने स्पन्न से चौंका।

गुरनाम ने श्रागे भुक्तकर रुपहले स्वर में पूछा—"जाऊँ क्या?"

श्रजनबी की श्राज्ञा लेकर वह गहनों की पोटली वगल में दबाये भट से श्रदर चली गई।

× × ×

प्रातःकाल गाँव के पशु रात भर की गर्मी से धबराकर तालाव में वस पड़े।

ग्रजनवी जाने के लिये तैयार बैठा था। गुरनाम ने उसे एक बासी रोटी पर मक्खन ग्रीर लस्ती का बड़ा कटोरा दिया। ग्रीर जब ग्रजनबी कपड़े पहिन कर तैयार हुन्ना तो गुरनाम रोने लगी।

श्रजनबी ने धीरे से कहा—"रोती क्यों हो ?" श्रजनबी हँस पड़ा। "मैं फिर श्राऊँगा।"

बापू को ग्राते देखकर उसने ग्राँसू पोंछ डाले।

बापू अजनवी को विदा करने के लिये कुछ दूर तक उसके साथ गये। उन्होंने अजनवी से पूछा—"क्या मैं अपने आदरणीय अतिथि का नाम पूछ सकता हूँ ?"

"हाँ" त्राजनवी ने त्रापनी तीव दृष्टि उसके चेहरे पर गाड़ कर जवाब दिया। फिर उसने त्रापनी धूप में चमकने वाली छुवी की त्र्योर

गर्व से देखते हुये कहा—"और तुम को यह भी मालूम होना चाहिये कि अगर मेरे नाम की चर्चा अपने या पराये किसी से भी की तो तुम्हारे और तुम्हारे खानदान के सब लोगों के खून से मुक्ते अपने हाथ रंगने पड़ेंगे।"

बूढ़े का चेहरा फ़्क हो गया I

ग्रजनजी साँउनी पर सवार हो गया ग्रौर महार की भटका देकर ग्रयने भारी स्वर में जोला—"ग्राज रात जग्गा डाकू तुम्हारा मेहमान था।"

#### **x x** ×

जगा डाक्, ग्रासली नाम सरदार जगत सिंह, ऐसा भयानक व्यक्ति या जिसका नाम सुन कर बड़े बड़े बहादुरों के छुकके छूट जाते थे। लूट-मार, हत्या ग्रीर उपद्रव उसका नित्य का काम था। बचपन ग्रीर जवानी रक्त की होली खेलने में ही बीत गई। बहुत-सी जमीन का मालिक था। बड़ां-बड़ां पर हाथ साफ़ करता था, गरीब खुश थे। उसके विरुद्ध गवाही देने का कोई व्यक्ति साहस न कर सकता था। तीस वर्ष से ऊपर ग्रायु थी। मौत के साथ खेलता हुन्ना सो जाता ग्रीर मौत की दिल्लगी उड़ाता हुन्ना जाग उठता। सौन्द्र्य, प्रेम, दया, ग्रीर सज्जनता न्नादि का उसके लिये कुछ भी ग्रर्थ न था। दूर-दूर तक उसकी धूम थी। इलाक्ता भर उससे थराता था। उसका हृदय पत्थर, मुजाएं लोहा, क्रोध प्रलय, जीम न्नाग की लपट—वह कहर था।

लोगों ने उसके माम पर कई गाने बना लिये थे। नवयुवक भूम-भूम कर गाया करते थे। एक घटना पर यह गाना बना था:—

"पक्के पुलते लड़ाइयाँ होइयाँ,

पक्के पुलते।

पक्के पुलते लड़ाइयाँ होइयाँ,

[ ३८ ]

ते छुवियाँ दे किल टुट गए.....जिंगया ! जग्गे मारेया लायलपुर डाका, ते ताराँ खडक गयित्राँ।

ग्रर्थात्—पक्के पुल पर इतनी भीपण लड़ाई हुई कि छ्वियों के कील ही टूट गये।

या फिर लायलपुर में उसने एक बहुत बड़ा डाका डाला था ग्रांर यच कर वापस भी त्रा गया था। उसका वर्णन इस प्रकार होता था।

जब जम्मे ने लायलपुर में डाका डाला तो हर तरफ़ विजली के तारों द्वारा इस बात की सूचना दे दी गई।

उसकी दीर्घ, ग्रंधियरी ग्रौर भयानक जीवन-रात्रि में एक तारा उदय हुन्ना जिसने उसकी ग्राँखों को चकाचौंध कर दिया ग्रौर वह तारा थी—गुरनाम।

गुरनाम बेचारी नादान छोकरी उसे सुन्दरता और प्रेम का पता ही न था। उसे लोग कनखियों से देखते, वह हँस देती। वह भोली-भाली सरल स्वभाव की छोकरी यह जानती ही न थी कि वह वाज, जिसको घायल करने के लिये पंजाब के शक्तिशाली नवयुवकों के धनुप टूट चुके थे, श्रीर जिस पर जो भी वाण फेंका जाता था वह उसे छू कर और गोठिल होकर ज्मीन पर गिर पड़ता था, वही बाज उसके वार का शिकार होकर पैरों के पास घायल पड़ा था और वह वाण प्रकृति ने उसकी पलकों में गुप्त रख छोड़ा था।

रात्रि के श्रंधकार में जग्गा उनके यहाँ श्राता श्रोर प्रातः के प्रकाश से पूर्व ही विदा हो जाता। उसने स्वयं को एक धनी ज़मीदार प्रकट किया। बापू के श्रातिरिक्त घर के सभी लोग उसको धर्मसिंह के नाम से जानते थे। गुरनाम का श्राकर्षण उसे खींच लाता था। उसके हृदय में खटक-सी रहती थी कि वह इस देवी को श्रापनाने के पहिले स्वयं को कैसे उसके योग्य बनाये। उसने कभी उससे प्रेम प्रकट करने की कोशिश

नहीं की। वह नहीं जानता था कि वह इसका स्रारम्भ कैसे करे। वह सोचता था कि न जाने उसके प्रेम प्रकट करने पर गुरनाम क्या रूप धारण करे। वह उसके पास बैठी चहकती रहती थी स्रौर वह भौंचका सा बैठा मुना करता था। कभी-कभी उसको स्रपने से घृणा होने लगती थी। वह कुरूप तो पहिले ही से था मगर उसका स्राचरण तो ऐसा था कि उसे देख शैतान भी लजा जाता। गुरनाम ही थी कि उसने कभी उससे घृणा नहीं प्रकट की। वह बड़े प्रेम के साथ उससे पेश स्राती थी। स्रगर वह उसे स्रपने निकट बैठने के लिए कहता तो वह उसके पास ही बैठ जाती, यद्यपि उसने स्राज तक उसको स्पर्श करने का साहस नहीं किया था। गुरनाम का देवियों जैसा सरल स्वभाव उसके मन में घड़का पैदा कर देता था। उसका देवी सौन्दर्य उसका सिर नीचा कर देता था। उसके मन की व्याकुलता स्रौर पश्चात्ताप का भाव बहुत बढ़ गया। यहाँ तक कि लोगों ने बड़े स्रारचर्य से मुना कि जग्गे ने डाका डालना छोड़ दिया।

×××××

डेढ़ वर्ष का समय पलक ऋपकाते त्रीत गया।

जग्गा सुबह-साम पाठ करता, गरीकों को खिलाता-पिलाता, दान करता, गुरुद्वारे में जाकर सेवा करता और हर एक के साथ नरमी और सिधाई से बातचीत करता।

उसने नापू की ख़ुशामद की कि गुरनाम कौर का विवाह उसके साथ कर दिया जाय। उसने डाका डालना छोड़ दिया है। और जो कुछ़ उसने लूटा वह सब बड़ी तोंद वालों का था। गरीनों की कमाई का एक पैसा भी उसके पास न था। वह अपनी बहुत सी ज्मीन और रुपया उनको देने की तैयार था और बापू को हमेशा पूज्य समम कर उनकी सेवा करेगा लेकिन गुरनाम को यह न मालूम होने पाने कि वह जगगा डाकू है। श्रीर न उसे श्रमी यह मालूम हो कि उसका विवाह किससे होने वाला है, क्योंकि उसको विश्वास था कि वह उसको चाहती थी श्रीर जब वह श्रपने प्रीतम को श्रपने पति के रूप में देखेगी तो उसके श्रारचर्य का ठिकाना न रहेगा। वापू ने सब कुछ स्वीकार कर लिया।

× × ×

जग्गा भीकन से चौदह कोस पर रहता था। उसके ग्राने-जाने की किसी को कानों-कान खबर न होती थी। लोगों ने उस ग्रजनबी को कभी-कभार उनके घर से निकलते हुए देखा था मगर किसी ने विशेष ध्यान न दिया। क्योंकि पहिले तो वह ग्राता ही कभी-कभार था ग्रौर दूसरे वह रातों-रात वापस भी चला जाता था। वह हमेशा ग्रपनी ग्रस्थिक व्यस्तता का बहाना कर देता था। जग्गे को दुनिया जानती थी मगर उसको कोई पहिचानता नहीं था।

जग्गे को विवाह की स्वीकृति मिल ही चुकी थी। ग्राव वह चाहता था कि गुरनाम के मुँह से भी श्रापने प्रेम की स्वीकृति ले ले, चाहे उसे यह न बतलाये कि उसका होने वाला पति वही है।

एक दिन सूर्यास्त हो चुकने के बाद वह भीकन में दाख़िल हुआ। घर पहुँचने के बाद पता चला कि गुरनाम पास बाले गाँव में जुलाहों को सूत देने गई है।

जन्में ने ऋाईने में ऋपनी स्रत देखी। उसने पगड़ी को ज्रा टेड़ी किया, शमले को ज्रा ऋौर ऊँचा किया और फिर उसने सबकी नज़रें बचा कर चिराग में से ज़रा सा सरसों का तेल हथेली पर उलट लिया ऋौर उसे ऋपनी घनी ऋौर खुरहुरे बालों वाली गर्द-जमी दाड़ी पर खूब ऋज्ञी तरह मल लिया। फिर वह मूळों को बल देता हुआ। घर से बाहर निकला ऋौर धीरे-धीरे टहलता हुआ। पाँच-छ: फ़र्लोंग तक चला गया।

चारों त्र्योर घुंध-सी छाई हुई थी। चन्द्रमा की हलकी घुँघली रोशनी में वह एक भूत की तरह दिखाई देता था।

दूर से एक सूरत दिखाई दी। उसने गौर से टकटकी बाँध कर देखा। कोई स्त्री थी, ग्रौर वह ग्रवस्य ही गुरनाम थी।

जग्गा मुर्गे की तरह तनकर खड़ा हो गया।

गुरनाम निकट श्राते ही मुस्करा दी । लेकिन मुस्कान में कुछ गम्मीरता फलकती थी । सिर पर एक गठरी थी । बोली—"मेरी तो गरदन टूट गई।"

"इस गठरी में क्या भर लाई हो ?" यह कहते हुए जग्गे ने एक हाथ से मन भर का बोक्त इस प्रकार उठा लिया जैसे कोई दो वर्ष के बच्चे को पकड़ कर उठा दें।

"उपले—ग्रौर क्या होता ?" गुरनाम ने श्रपनी छोटी ग्रौर पतली सी नाक सिकोड़ कर कहा—"ग्रा रही थी, रास्ते में उपले चुनने लगी, यहाँ तक कि इसी में शाम हो गईं।"

दोनों खेत की मेड़ पर बैठ कर बातें करने लगे।

ग्राज जगो ने गुरनाम की ग्रांर देखा तो उसके मन में ग्राजीब-श्रजीब ख्याल पैदा होने लगे। वह ग्रपनी भावी पत्नी की श्रोर बड़े ध्यान से देख रहा था। उसके हाथ की पकी हुई रोध श्रीर साग की कल्पना उसे बेचैन किये डाल रही थी। कभी तो उसके मन में श्राता कि सारा मेद खोल दे श्रीर कभी सोचता कि ग्रमी न बताये। श्रन्त में उससे रहा न गया, क्योंकि गुरनाम कुळ उदास-सी हो रही थी वह बोला—"गुरनाम!" यह कहते-कहते लार उसकी दाढ़ी पर टपक पड़ी। उसने उसे श्रास्तीन से पींछा श्रीर किर कहने लगा—"गुरनाम, तुमको एक मुख-सम्वाद मुनाना चाहता हूँ।"

गुरनाम ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह अपने पाँव के अँगूठे से जमीन कुरेदने में लगी थी और गहरी चिन्ता में थी। यद्यपि वह पहिली-सी चंचल और अल्हड़ न रही थी मगर चूंकि जमी से काफ़ी हिली मिली थी इसलिये उससे अधिक शरमाती भी नहीं थी।

जग्गे को कुछ उलभान-सी होने लगी। उसने उसका कन्धा हिलाकर पूछा-- 'क्यों गुरनाम, किस सोच में हो ?"

गुरनाम पहिले तो चौंकी, फिर उसने धीरे से कहा—"मैं बहुत परीशान हूँ, मैं बहुत दिन से चाहती थी कि तुमको सब हाल सुनाऊँ लेकिन....."

''लेकिन क्या ?"

"रार्म त्र्राती थी।" गुरनाम ने फ्रेंप कर जवाब दिया। जग्गा कुछ-कुछ ताड़ गया, मूँछों के नीचे मुस्कराया—"अरे मुफ्तें कैसी शर्म ?"

गुरनाम चुप रही।

जग्गा लिसक कर उसके करीब हो गया । उसके बार-बार श्राग्रह करने पर गुरनाम ने बताया—"वे मेरा विवाह करना चाहते हैं।"

"तो इसमें परीशानी की क्या बात है ? विवाह तो सब का होता है ।" गुरनाम की श्राँखों में श्राँख भर श्राये ! भरीये हुए स्वर में बोली— "वे किसी क्यये पैसे वाले से मेरा विवाह करना चाहते हैं, जिसे मैंने देखा भी नहीं, मगर मैं किसी ग्रीर से..."

यह कह वह रो पडी।

जग्गे ने अपने ऊपर की ओर उठे हुए शमले को छूकर देखा कि वह नीचे तो नहीं भुक गया, फिर उसने छाती ऊलाकर कहा—"नहीं गुरनाम, नहीं, जिससे तुम चाहोगी उसी से तुम्हारा विवाह होगा। मैं बापू को खुद समभाऊँगा...हाँ तो...मगर वह है कौन ?"

जगो की ग्राँखें ख़ुशी के मारे चमक रही थीं।

गुरनाम ने उसकी छाती पर सिर रख दिया और फूट-फूट कर रोने लगी। आज उसे उसके चौड़े कंघों और संदूक, जैसी छाती को छूकर कुछ ढाइस हो रही थी।

जगा घवरा गया । उसने उसको चुमकारा श्रौर दिलासा दिया ! श्रौर फिर उस व्यक्ति का नाम पूछा ।

गुरनाम ने कुछ कहना चाहा, फिर रुक गई... ख्रौर जोर से रोने लगी। जग्गे ने टाइस दिलाया तो वह बोली—"तुम ज़रूर मेरी सहायता करोगे, इन सब के हाथों से मैं बहुत तंगहूँ, तुम बहुत श्रब्छे, हो, उसका नाम..."

जग्गे का मन बल्लियों उछ्जले लगा। "क्या नाम है ?"
"उसका नाम है दिलीप...दिलीप सिंह।"

जग्गे को मानो साँप ने डँस लिया । उसका चेहरा एकाएक भयानक हो गया ।

"दिलीप सिंह उसका नाम है !" गुरनाम ने दोहराया । जग्गे की मूळें फड़कने लगीं । उसके माथे पर बल पड़ गये । शरीर के रोंगंटे काँटों की तरह खड़े हो गये । त्र्याँखों से चिनगारियाँ निकलने लगीं। गरदन की रगें फूल गई —गुरनाम ने त्र्याश्चर्य से उसकी स्त्रोर देखा ।

"घर जाग्रो।" उसने भारी स्वर में कहा।
यह कह कर वह उठ खड़ा हुन्ना।
"तुम भी चलो।" गुरनाम बोली।
"तुम तुरन्त घर वापस जान्नो।" उसने गरज कर कहा।

गुरनाम चुपचाप श्राश्चर्य के साथ उठी श्रीर गठरी सिर पर रख कर घर की श्रोर चल दी। जगा उसी तरह खड़ा रहा था। उसका चेहरा च्या प्रति च्या भयानक होता जारहा था। बाज की चोंच जैसी नाक खाल हो गई। श्राँखें खून होकर रह गई श्रीर चेहरे से वर्बरता टपकने खगी।—सहसा उसने खंजर निकाला श्रीर उसे मज़बूती से हाथ में पकड़ लिया। दाँत पीसते हुये घीरे से बोला—"दिलीप सिंह ?" मौत दिलीपसिंह के सिर पर मंडराने लगी।

< x x

खूनी पुल इलाक्ते भर में मशहूर था।

यह पुल एक छोटी सी नहर पर स्थित था। नहर के दोनों किनारों पर शीशम के बहुत बने पेड़ थे। वहाँ न सूर्य की धूप पहुँच सकती थी श्रीर न चाँद की चाँदनी। पुल बढ़े-बढ़े श्रीर भद्दे पत्थरों से बनाया गया था। उसके नीचे सिर्फ एक कोठी थी श्रीर पानी दो भागों में विभाजित होकर बहता था। रात्रि के समय ये बढ़े-बढ़े मुँह ऐसे दिखाई पड़ते थे जैसे दो मुँह वाला कोई दैत्य मनुष्यों को हड़प कर लेने के लिये मुँह खोले बैठा हो। या जैसे किसी मुरदे की दो बड़ी-बड़ी श्राँखें हो, जिनकी पुतलियाँ कों वे नोच-नोच कर खा गये हों।

पास ही एक फ़ब्रिस्तान था और कुछ दूर पर मरघट। रात के समय कोई घर से निकलने का साहस न कर सकता था। क्योंकि उस पुल पर इतनी हत्याएँ हो चुकी थीं कि उस पुल का नाम ही 'ख़ूनी पुल' रख दिया गया था। नौजवान लड़िकयाँ और बच्चे तो दिन के समय भी अप्रकेले उधर न आते थे। मशहूर था कि वहीं एक सिर कटा सैयद रहता था। कभी-कभी उसका सिर पुल के नीचे भयानक स्वर में चिल्लाया भी करता और वह स्वयं बिना सिर के बड़े इत्मीनान के साथ फ़ब्रिस्तान में टहला करता था।

स्राधी रात बीत चुकी थी।

दिलीपसिंह शहर से लौट रहा था। छोटे से गधे पर दो बोरियों में सामान था। वह सुनार का काम भी करता था छौर पंसारी की दुकान भी। उसकी छापनी तैयार की हुई गुलकंद खूब विकती थी:

वह नवयुवक था। सुन्दर सजीला। मसें ऋभी भीग रही थीं, गालों तथा दुड्डी पर जिल्कुल छोटे-छोटे बाल जैसे केसर। आँखें मानो शर्वत से भरे कटोरे हों। सिर पर उस समय लुगी बाँधे हुये था, उसका एक छोट सा

शमला नीचे की स्रोर लटकता हुन्ना स्रोर दूसरा ऊपर की स्रोर उठा हुन्ना। स्रलगोजे खूब बजाता था। जब राँमा, हीर के विवाह के बाद उसके यहाँ भीख माँगने के लिये जाता है, इस घटना को वारिस की हीर से बड़े करूण स्वर में गाया करता था। बल्कि इसमें तो दूर-दूर तक स्रपना जवाब न रखता था।

दिलीप शक्तिशाली ग्रोर साहसी युवक था। मगर खूनी पुल का हश्य श्रीर फिर उससे सम्बन्धित खूनी कथायें उस स्थान को श्रीर भी भयानक बना रही थीं। रात्रि के ग्रंधकार में शीशम के घने वृद्धों के नीचे नहर के सिसक-सिसक कर बहने वाले पानी का शब्द सुनकर उसका मन धबराने सा लगा। उसने ऊँचे स्वर में 'छईं' (पंजाब का एक प्रसिद्ध गीत) गाना शुरू कर दिया। ग्रंधकार ग्रीर निस्तब्धता में श्रपनी श्रावाज सुनकर उसे कुछ संतोष हुग्रा।

उसका गधा पुल पर से पार हो चुका था। वह स्वयं पुल के बीच में था। मन में प्रसक्त था कि कोई दुर्वटना नहीं हुई। सहसा उसे पीछे से अपनी गर्दन में किसी तेज चीज की चुभन महसूस हुई और ऐसा लगा मानो कोई उसके कुरते को पकड़े पीछे की ओर खींच रहा ,हो। उसने घूम कर देखा। एक ऊँचा मनुष्य पुल की दीवार पर से उचका हुआ था। उसने अपनी छवी पीछे से उसकी कमीज़ में अड़ा दी थी। उसकी आँखें अंगारे की तरह दहक रही थीं। "तुम कौन हो ?" दिलीप ने साहस करके उच्च खर में पूछा।

"इधर आर !" भारी और हाकिमाना स्वर में उससे कहा गया।

दिलीप उसकी श्रोर बढ़ा। एकाएक उसने श्रजनबी को पहिचान लिया। बोला—"मुक्ते ऐसा जान पड़ता है कि मैंने तुमको कहीं देखा श्रवश्य है। क्या तुम बही ब्यक्ति तो नहीं जिसने चन्द श्रादिमयों से लड़ते समय मेरा साथ दिया था... हाँ, शायद वह ननकाना साहब का मेला था। तभी की बात है... ग्रौर तुमने दो ग्रादमी जान से भी मार डाले थे।"

"वेशक में वही हूँ, लेकिन में नहीं जानता था कि तेरा नाम दिलीप सिंह है। मैं तुफे एक श्रजनवी श्रीर छोटी श्रायु का छोकरा समफ कर तेरा सहायक बना—श्रीर इत्याएँ तो मैंने बहुत की हैं। इस पुल पर ग्यारह श्रादिमियों को जान से मार चुका हूँ...श्रीर श्राज मुफे बारहवीं इत्या करनी है।"

दिलीप को उसके उजड्डपन पर आश्चर्य हुआ। बोला—"मैं नहीं जानता कि तुम्हें मुफ्तसे क्या बैर है, तुमने तो मेरे साथ उपकार किया है।"

"तू गुरनाम से प्रेम करता है जो कि केवल मेरी है। मुफ्तको यह भी मालूम हुन्ना है कि तू ने र्ष्ट गारासिंह को इसी पुल पर बहुत घायल किया था—न्त्राज मेरा तेरा फैसला होगा।"

यह कह कर अजनवी ने छुवी हाथ से रख दी ख्रोर उसकी ख्रोर बढ़ा-"श्रौर मैं चाहता हूँ कि तृ एक मर्द की तरह मेरे सामने ख्रा जा।"

दिलीप संकोच कर रहा था। उसने कहा—"मैं श्रपने उपकार करने वाले से लड़ना नहीं पसन्द करता।"

त्रजनबी ने गरज कर जवाब दिया—" तू कायर है। यह स्त्रियों की तरह गले में रेशमी रूमाल लपेट कर घूमना ऋगैर बात है ऋगैर किसी मर्द के साथ पंजा लड़ाना दूसरी बात है। यदि तू वास्तव मैं ऋपने बाप का वेटा है तो मेरे सामने ऋग ।" यह कह कर उसने उसके मुँह पर श्रूका।

दिलीप को कोध श्रागया। वह सिंह कि भाँति विफर गया। श्रीर वह डंडा जो गधे को हाँकने के लिये था, उसने श्राजनकी के मुँह पर दे मारा। लेकिन श्राजनकी ने वार रोकने को चेष्टा नहीं की। दिलीप ने दूसरा वार उसके कान पर किया। डंडा ट्रूट गया। उसके माथे श्रीर कान से खून वहने लगा। दिलीप जोश में था, उसने पूरे जोर के साथ एक मुका

उसके मुँह पर मारा जिससे उसका जबड़ा श्रपनी जगह से हट गया श्रौर मुँह बिगड़ गया... मगर श्रजनबी शान्त खड़ा रहा ।

उस समय उसके माथे से रक्त वह वह कर उसकी दाढ़ी को तर कर रहा था। एक कान का जपर वाला माग टूट कर लटक रहा था श्रौर उसमें से रक्त की धार छूट रही थी। मुँह टेढ़ा हो जाने के कारण उसकी सूरत श्रौर भी भयानक हो रही थी—मगर वह श्राश्चर्य-जनक ढंग से शान्त था।

फिर उसने दिलीप की आँखों में आँखें डाल कर अपने गहरे और भारी स्वर में कहा—''इस तरह नहीं दिलीप ! तुम अभी जिल्कुल बच्चे हों । लेकिन जगा कोई बच्चों का सा काम नहीं करना चाहता ।''

यह कह कर उसने ऋपने मुँह पर एक घूँसा दिया ऋौर उसका जबड़ा ठीक ऋसली जगह पर ऋ। गया तब वह लौटा—दिलीप जग्गे का नाम सुन कर कुछ भयभीत सा हो गया।

त्रजनबी त्रपनी छुवि पकड़ कर बोला—''तेरे पास छुवि है ?''

"नहीं।"

"तलवार है ?"

"नहीं।"

"सफाजंग १"

"नहीं।"

"मगर लाठी तो है, वह तेरे गधे की पीठ पर बोरी में डुँसी हुई है।"

दिलीप त्राश्चर्य के मारे चुपचाप खड़ा था।

"जा !' श्रजनवी ने पुकार कर कहा—"लाठी ले श्रा—मैंने मुना है कि त् इलाके भर में सबसे श्रिधिक तेज दौड़ने वाला जवान है। लेकिन में श्राशा करता हूँ कि तेरा स्वाभिमान तुमे एक कायर की मौत कभी न मरने देगा। दिलीप वीर था मगर इस प्रकार के ऋादमी से ऋाज तक उसकी पाला न पड़ा था।

जग्गे ने छुवि उतार कर श्रलग रख दी श्रीर केवल लाठी उठा ली। वे दोनों एक दूसरे को खलकारते हुये मैदान में कुद पड़े।

उनकी ललकार की त्रावाज सुन कर पद्मी घोंसलों में फड़फड़ाने लगे। गीदड़ों ने 'हुत्रा-हुत्रा' का शोर मचाना शुरू किया। चारों स्रोर गर्द ही गर्द दिखाई पड़ने लगी।

लाठी से लाठी बज रही थी। दिलीप हलका-फुलका, चुस्त, चालाक, नौजवान छोकरा, बिजली के सामान फुर्तीला, जोड़-जोड़ में पारा ! जग्गा भारी-मरकम, क्रद्दावर, सिद्धहस्त देव के समान, श्रव भी जिस समय सरक लगाता था तो ऐसा जान पड़ता जैसे पानी की सतह पर टेकरी फिसलती चली जा रही हो। दिलीप ने जोर लगा कर पहिला बार किया। जग्गा उसे खाली देकर चिल्लाया—"एक !"

दिलीप ने फिर वार किया। जग्गा उसे बचा कर गरजा—"दो!" दिलीप ने तीसरा वार किया। जग्गा ने उसे भी रोका ग्रौर कड़का—"तीन!"

यह कहकर वह आगे की ओर लपका । नोला—"ले सँमल वे छोकरे, अब जग्गा वार करता है।"

पसीने के कारण दिलीप के हाथ से लाठी छूट गई। वह तुरन्त छुरा लेकर भपटा। जग्गे ने एक लात उसके पेट में रसीद की ऋौर वह लङ्खङाता हुऋ। पुल की दीवार से टकरा कर गिर पड़ा।

श्रव जग्गे के होंठों पर कुटिल मुस्कान पैदा हुई । उसने एक पागल मेडिये की तरह गले से एक मयानक शब्द निकला श्रौर फिर दोनों एडियाँ उठा, श्रागे की श्रोर उचक उसने मरपूर वार किया श्रौर दिलीप ने छुरा सँमाला श्रौर तड़पकर हवा में कूद गया। मगर सिद्धहस्त उस्ताद का वार श्रपना काम कर गया। शायद पहिली सूरत में यह वार उसके

सिर को तोड़ देता श्रीर लाठी उसके सीने तक पहुँच जाती मगर श्रव भी लाठी काफ़ी ज़ोर के साथ सिर पर पड़ी । सिर फट गया श्रीर वह तड़प कर बाहरसिंघे की तरह नहर के किनारे पर जा गिरा )...कुछ देर तड़पता रहा। श्रीर फिर ठंडा पड़ गया।

गर्म-गर्म रक्त बह-बह कर नहर के पानी में मिलने लगा। नहर के पानी का कल-कल नाद ऐसा जान पड़ता था मानो खूनी पुल टडे लगा रहा हो।

क्रब्रिस्तान में पुरानी कहां के छेदां से हवा सिसकियाँ लेती हुई वह रही थी।

पीला चाँद बदली में से निकल ऋाया मगर उसकी किरणें शीशम के घने पत्तों में उल्लास कर रह गईं।

जगों ने वड़े इत्मीनान के साथ श्रापने रक्त भरे माथ को साफ़ किया । मुँह हाथ धोया । कान पर पगड़ी फाड़ कर पढ़ी बाँधी । उसने दिलीप की छाती पर हाथ रख कर हृदय की गति सुनने की कोशिश की । फिर उसने छवी उठाई श्रीर दिलीप को पीठ पर लाद खेतों की श्रोर चल खड़ा हुआ।

× × ×

इस घटना के पचीस दिन बाद !

गाँव में संध्या होते ही शान्ति छा जाती है, विशेषकर जाड़ों में तो लोग तुरन्त ऋपने घरों में घुस बैठते हैं।

गुरनाम के घर सभी लोग श्रपने-श्रपने कामों से छुटी पा कर वड़े कमरे में बैठे थे। स्त्रियाँ चरखा कात रही थीं, बड़े बूढ़े बातों में लगे थे श्रीर बच्चे शरारतों में।

इतने में जग्गा ग्रन्दर दाखिल हुन्रा।

शायद डेढ़ वर्ष के बाद खाज फिर उसके बिलष्ट हाथ में छुवी चमक रही थी। सब ने उसको देखकर प्रसन्नता प्रकट की। गुरनाम त्राश्चर्य से उसकी त्रोर देखने लगी। माँ ने उसे बैटने के लिये कहा मगर उसने बतलाया कि उसकी साँडनी बाहर खड़ी है त्रौर उसे जल्द ही वापस जाना है।

चन्द मिनट के लिये वह रका, फिर उसने संदोप में श्रीर निर्णायक की तरह कहा—"मैं श्राप लोगों से सिर्फ इतनी बात कहने के लिए श्राया हूँ कि श्राप गुरनाम का विवाह जिस व्यक्ति से करना चाहते हैं वह कभी भी नहीं हो सकता—बिल्क उसका विवाह उस व्यक्ति से होगा जिससे कि मैं चाहूँगा।"

सब लोग चिकत थे। क्योंकि वे जानते थे कि गुरनाम का भावी पति स्वयं वही था। मगर चूँकि उन्हें यह भेद गुप्त रखने की विशेष ताकीद की गई थी, इसलिये वे चुप रहे।

"... और वह व्यक्ति यह है।" यह कहकर उसने दरवाजे की स्त्रोर देखा।—स्त्रीर दिलीप स्नन्दर दाखिल हुस्रा।

हर एक व्यक्ति श्राश्चर्य-चिकत रह गया !

गुरनाम न जाने किस दुनिया में पहुँच गई। उसको लजा जाना चाहिये था मगर वह उठकर उसके पास ऋ। गई।

जग्गे ने दिलीप के कान में कहा—"श्रगर गुरनाम को सुभन्ते प्रेम होता तो तुम त्राज जीवित न दिखाई पड़ते । दिलीप तुम मर्द हो, मैंने तुम्हारी अच्छी तरह परीचा ले ली, मैं चाहता तो तुम्हारी हत्या कर डालता, मगर मदों से सुभे प्रेम है । अब, जब कि तुम्हारी गुरनाम तुमको सौंप रहा हूँ, मैं आशा करता हूँ कि तुम मेरा मेद प्रकट न करोगे।"

दिलीप ने कृतज्ञतापूर्ण दृष्टि से जंगा को देखा।

जग्गा उच्च स्वर में बोला—"बापू, माँ, चाचा, में इनके विवाह के लिये त्रावर्यकता से भी कहीं ऋधिक रुपया दूँगा ! ऋौर इनको बहुत सी ज्मीन दूँगा ।"

बापू ग्रसल बात भाँप गया । लेकिन सब को ग्राधिक ग्राश्चर्य इस बात पर था कि दिलीप जीवित कैसे हो गया । क्योंकि मशहूर हो चुका था कि दिलीप को डाकुग्रों ने खूनी पुल पर मार डाला था ।

दिलीप ने किस्सा गढ़ कर मुना दिया कि खूनी पुल पर डाकु हों ने उसे घर लिया। इस लड़ाई में वह बहुत ऋषिक धायल हुआ और वह डाकु छां के हाथां मरने ही वाला था कि सरदार धर्मसिंह वहाँ पहुँच गये और वे इस तेज़ी से लड़े कि डाकु छों के छक्के छूट गये और उनकां भागते ही बना। किर वे उसे अपने घर ले गये और उसकी सेवा टहल करते रहे।

जग्गे की मूळों के नीचे उसके होठों पर एक कटु मुस्कान पैदा हुई। गुरनाम की ऋाँखों में ऋाँख ऋा गये।

यह आतम-विस्मृत सी हो आगे बढ़ी । उसने जगो का भद्दा हाथ अपने केंचल जैसे हाथों में ले लिया । पहिले उसने जगो के ऊँचे सीने और उसके असाधारण चौड़े कंधों को देखा और फिर जैसे इत्मीनान करके भरांचे हुए स्वर में बोली—"तुम कितने अच्छे हो...तुम यहीं हमारे पास ही रहा करों।"

क्ररीव था कि जग्गा चीखें मार-मार कर रो पड़े, मगर वह जल्दी से पगर्ज़ा के शमले में मुँह छिपाकर ववग्डर की तरह दरवाजे में से बाहर निकल गया।

× × ×

विवाह हो गया !

कुछ दिनों के बाद रात के समय गुरनाम बापू के साथ घर से बाहर करें को बेल के पास खड़ी थी। एकाएक दूर से गर्द उठी। कुछ साँडनी सवार दिखाई पड़े। उनकी सजी-सजाई साँडनियाँ, मर्दाना ग्रीर देव जैसी स्रतें, चमकती हुई छुवियाँ—विचित्र दृश्य उपस्थित कर रहीं थीं। उनका सरदार तो ग्रसाधारण तौर पर चौड़ा चिकला व्यक्ति था।

#### जगा

गुरनाम उसे देखते ही चिल्ला उठी— "बापू , वे कौन लोग हैं ?—यह सबसे स्रागे वाला श्रादमी तो धर्मीसंह दिखाई पड़ता है ।"

"नहीं बेटी, नहीं, वह धर्मीसंह नहीं है।" यह कह कर उसने श्रपनी पोती का सिर श्रपनी छाती से लगा लिया। श्रीर फिर बबूल के बच्चों के अग्रड में गायब होते हुए साँडनी सवारों की श्रोर स्विप्नल दृष्टि से देखते हुए बड़बड़ाया—

"ग्राज जग्गा डाकू डाका डालने के लिये जा रहा है।"

# चोर

सामने खेतां में ऊँची सी जगह पर जिसे वे 'टिब्बा' कहते थे, कोई गुभा व्यूमता किरता त्रा पहुँचा और लगा जोर-जोर से देंचू-देंचू करने । दसकी आवाज ने मानो घड़ी के अलामें का काम किया और फ़लेल सिंह की ग्रॉंच खुल गई।

ग्रभी लड़का ही था और फुलेल सिंह सवेरे उठने का ग्रादी नहीं था। किन्तु ग्राज दमदमें का मेला था, इसलिए वह जाग उठा। नहीं तो गधे का रेंकना क्या, यदि एक छोड़ दस गधे भी उसको रौंदकर निकल जायँ तो भी उसकी नींद में खलत न पड़े।

[ 48 ]

उठकर उसने पहले मुँदी-मुँदी श्राँखों से चारों श्रोर दृष्टि दौड़ाई! वृध के कटोरे में डूबते हुए बताशों की भाँति श्रभी तारे श्राँखें भरणका रहे थे। दूर-दूर तक फैले हुए खेतों श्रीर चुपचाप खड़े हुए बृद्धों पर फैलता हुश्रा मन्द-मन्द प्रकाश कितना मनोहर दिखाई पड़ता था। फुले ल सिंह के लिए यह एक नया श्रनुभव ही सही किन्तु उस समय तक काफ़ी संख्या में लोग खेतों को जा चुके थे।

फुलेल सिंह अपने भाइयों में सब से छोटा था। किन्तु वह डील-छोल में सबसे बढ़ा-चढ़ा था। बाईस वर्ष की उसकी आयु थी, माँ-वाप का लाइला था, काम कुछ नहीं करता था पर खाने में सब से आगे। बड़े भाई कभी-कभी बड़नड़ाते अवश्य थे किन्तु माता-पिता की उपस्थिति में उनका कुछ वश भी नहीं चलता था। अब जो फुलेल सिंह जागा तो उसने उठते ही बाजू फैलाकर ऐंड़ते हुए एक जम्हाई ली और फिर अपने दोनों हाथों को टाँगें सहलाता हुआ टखनों तक ले गया।

यों तो उसका प्रत्येक दिन बेफिकी में हो बीतता था, किन्तु ग्राज उसे बिलकुल कोई परेशानी न थी। चेहरे से न सिर्फ वेफिकी टपकती थी, बिल्क एक ग्रत्यधिक प्रसन्नता भी प्रकट हो रही थी। क्योंकि ग्राज का दिन साल भर के बाद ग्राता था ग्रीर प्रत्येक व्यक्ति को खुल्लम खुल्ला खुशी मनाने का हक था, कोई रोक टोक नहीं थी।

श्रपनी छोटी-छोटी दाड़ी पर, जो उस समय स्वी घास की माँकी लग रही थी, उसने हाथ फेरते हुए सोचना शुरू किया कि श्रालिए कहें श्रमजाने तौर पर इतना प्रसन्न क्यों है ...थोड़ी देर बाद उसके हों पर मुसकराहट खेलने लगी श्रोर श्रॉलें चमक उठीं...प्रीतो निम्हाल से वापस श्रा गई थी। उन दोनों की गाड़ी छनती थी। प्रीतो मजबूत हाथ-पाँव की एक निर्मीक-सी लड़की थी।

जब पीतो निनहाल से वापस ऋायी थी तो उससे मिलकर खूब रोई: थी। मेले से एक दिन पहले फुलेल सिंह ने उससे पूछा।

"कहो, मेले चलोगी ?"

"हाँ...तुम तो जाग्रोगे ही।"

"हाँ...श्रौर रास्ते में मुलाक्वात भी रहेगी।"

"मेरे लिए क्या लाग्रोंगे ११ ... जैसा कि प्रत्येक स्त्री पुरुप से यह त्र्यवश्य पूछती है कि मेरे लिए क्या लाग्रोंगे।

इस बात की कल्पना से ही फुलेल सिंह की बाहों खिल गईं। उसका जूड़ा दीला होकर एक ग्रोर को दलक गया था। पगड़ी टखना में उलक्षी हुई थी। वह मुसकराए जा रहा था ग्रीर न जाने कब तक वह यों ही मुसकराता रहता किन्तु उसके लंगोटिया दोस्त ग्रामर सिंह ग्रीर जागीर सिंह इतने में ग्रा पहुँचे जो कि ताड़ के बच्च के समान लम्बे थे।

त्राते ही उन्होंने उसे ललकार कर श्रपनी श्रोर श्राकृष्ट किया। श्राज मेले का दिन था। उसके दोस्तों ने श्राते ही चारपाई उलट दी। उसने ढीली-ढाली पगड़ी सिर पर लपेटी श्रीर तीनों गाँव की श्रोर चल दिये। इधर सूर्योंदय हुआ, उधर गाँव में चहल-पहल श्रारम्म हो गई। श्राज नित्य की भाँति जीवन में शिथिलता नहीं थी बल्कि बच्चे-बच्चे को जैसे पर लग गए थे। बड़े-बूढ़ों को तो खैर घर पर ही टिके रहना था किन्तु नवजवानों के उमंगमरे हृदय को चैन कहाँ! एक श्रोर कुमारियों ने काजल कंवी सँभाली तो दूसरी श्रोर नवयुवकों ने भी सिल्क के तहमद लहरा दिये। तिरछे-बाँके नौजवान श्रपनी-श्रपनी श्राङ्यल साँडनियों या तीव्रगामी घोड़ों पर सवार शमलों को उड़ाते गाँव के गिर्द चक्कर काटने लगे।

फुलेल सिंह ने आज विशेष रूप से शीशा सामने रखकर पगड़ी गाँधी। खहर की दूधिया कमीज पर मखमल की वासकट और नीचे सिल्क की तहमद। पाँव में पेशावरी जूता और हाथ में पीतल के तारों से बंधी जम्बी और मजबूत लाठी। गाँव से बाहर आकर नवयुवक एक दूसरे से गलें मिलने लगे और फिर फब्तियाँ कस-कसकर एक दूसरे का मज़ाक उड़ाने लगे । विभिन्न रुचियों के लोग श्रालग-श्रालग गिरोहों में बँटकर चल दिये। फुलेल सिंह श्रापनी घोड़ी की नंगी पीठ पर बैठा इधर-उधर ताक- काँक कर रहा था। जागीर सिंह श्रीर श्रामर सिंह एक श्रात्यन्त श्राड़ियल साँडनी पर सवार थे, जो च्ला भर को भी चैन से खड़ी न होती थी श्रीर बेतरह बलबलाए जा रही थी।

् फ़लेल सिंह पीतो की प्रतीन्ना कर रहा था। रवाना होने से पहलें वह जानना चाहता था कि प्रीतो किन स्त्रियों के गिरोह में शामिल है ताकि उसे रास्ते में तलाश करने में कठिनाई न हो...वह बार-बार अपनी गेहुएँ रंग की छाती पर लटकते हुए सुनहरे करठे को उंगलियों से छूता और गर्दन उठा-उठाकर गाँव से वाहर निकलने वाली सबसे बड़ी गली की स्त्रोर देखता।

श्रन्त में जैसे खरबूजों से भरा हुश्रा छुकड़ा बाहर निकला। उसमें गाँव की कुमारी श्रीर विवाहिता युवितयाँ सवार थीं। बैल दाल की श्रोर बड़ी तेज़ी से सींग हिलाते हुए भागे। श्रीर उनकी घंटियों की टनटनाहट से वायु मगडल गूँज उठा। पीतो छुकड़े के सबसे पिछुले भाग में बैठी थी। उसे देखकर इधर फुलेलिसिंह की मूँछे फड़कीं श्रीर उधर वह श्रपने प्रेमी की सज-धज देखते ही खिल गई। उसने श्रपना हाथ विशेष दंग से ऊपर उठाकर फुलेलिसिंह को संकेत किया श्रीर फिर बड़ी सफ़ाई से उसी हाथ से दुपड़ा खींचकर उसने छोटा सा घूँघट निकाल लिया।

श्रव क्या था, फ़लेल सिंह ने श्रपनी चुलबुली घोड़ी की एड़ लगाई श्रीर वह गर्द उड़ाती हुई ऐसी तेज़ी से चल निकली जैसे गुलेल में से गुल्ला निकले।

जब वह छुकड़े के पास से गुज़रा तो श्रपने विशेष स्वर में खाँसा... छुकड़े में उसकी श्रपनी बहन भी बैठी थी। उसने प्रीतो को ताकीद कर दी थी कि वे रास्ते में जहाँ कहीं भी उतरें श्रीर मेले में जिस जगह

भी ठहरें या घूमें, साथ-साथ रहें जिसमें कि आपस में बात-चीत करने में कोई कठिनाई न हो।

इस तरह सारा रास्ता हँसते-खेलते कट गया और जब वे मेले में पहुँचे तो घने वृत्त की छाँव-तलें फुलेल सिंह ने एक बड़ी सी दरी बिछा दी। उसकी बहन, प्रीतो और श्रड़ोस-पड़ोस की स्त्रियाँ वहीं पर बैठ गईं। घोड़ी और साँडनी को भी वहीं पर छोड़ दिया गया।

मेले में इर्द-गिर्द के सैकड़ों लोग ग्रा इकड़ा हुये थे। यद्यपि फुलेल सिंह का जी नहीं चाहता था कि पेड़ के नीचे से उठकर इधर-उधर जाय लेकिन दोस्त कहाँ छोड़ने वाले थे।

दोपहर से पहले-पहले स्त्रियाँ भी मेले में शामिल रहती थीं लेकिन इसके बाद यह मेला केवल पुरुषों का रह जाता था क्योंकि पुरुषों की भीड़ श्रीर नशे में बदमस्त नौजवानों के शोर गुल में स्त्रियों का वहाँ रहना उचित नहीं समभा जाता था। स्त्रियों के चले जाने के बाद पुरुष खूब खुल कर खेलते श्रतएव दोपहर के समय जब स्त्रियाँ वापस श्राने लगीं तो उन्होंने घोड़ी श्रीर साँडनी को भी वापस मेज दिया, जिसमें कि रात को चारे का मांभट न रहे। फुलेल सिंह को प्रीतों से खुलकर बातें करने का मोंका न मिला श्रीर श्रव इस विचार से वह बहुत उदास हों गया। उसने मौका पाकर छुकड़े के पीछे प्रीतों को जाकर पकड़ लिया श्रीर उससे बादा लिया कि वह दूसरे दिन शाम को साग तोड़ने के बहाने उसके कुएँ पर ज़रूर श्रायेगी। प्रीतों ने वादा कर लिया श्रीर इस डर से कि कोई देख न ले, पीछे सरक गई श्रीर उसके कंपठे की श्रोर संकेत करती हुई बोली—"श्राप तो करठे पहनते फिरते हो श्रीर हमारे लिये पीतल की जंजीर भी नहीं।"

लोग बाग गा-गा कर लगे भूमने...एक बहुत बड़े मजमे के लोग घेरा बनाकर खड़े हो गये। महकती कलियों में लिपटे हुए खलगोजे बजने लगे ख्रीर एक बाँके ने रान पर हाथ रखकर तान उठाई। बल्ले बल्ले बइ रोटी लैके देवर दी चली सर ते डोरिया गंडे दी छुल वर्गा वई रोटी ले के!

( एक रसीली श्रौरत श्रपने देवर के लिये खेत पर रोटी ले जा रही है श्रौर सिर पर हुपट्टा इतना बारीक है जैसे प्याज् का छिलका।)

पहले बोल के बाद एकदम 'बल्ले-बल्ले' का शोर उठा ख्रौर जागीर सिंह बल खाकर फुलेल सिंह की बग़ल से निकला ख्रौर लाठी को दोनों सिरों पर पकड़कर हवा में ऊँचा किया ख्रौर पाँव से धूल उड़ाकर लगा बेढंगे तरीके से नाचने। उसकी लम्बी लहराती हुई दाढ़ी ने एक समाँ बाँध दिया। वह बड़ी फुतीं से नाच रहा था ख्रौर ख्रपनी लम्बी टाँगों के कारण दो-चार सपाटों में इधर से उधर जा निकलता था।

माँति-माँति के स्वर उठ रहे थे। अपने देवर के लिए रोटी ले जाने वाली ग्रलबेली नारी की कहानी ने जो तूल खींचा तो फिर बात कहीं की कहीं जा पहुँची। जब कहानी ने त्राखिरी मंजिल में प्रवेश किया तो लोगों के धैर्य का बाँध टूट गया। हाय-हाय, वाह-वाह के नारे ऊँचे होने लगे। इस गड़बड़-सड़बड़ में कुलेक लोगों की पगड़ियाँ उछाल दी गई। इस बात पर लड़ बरस गये। पाँच-सात के टखने उतर गये किन्तु अपने-अपने घावों पर धड़िजयाँ लपेट कर वे फिर खेल के मैदान में आ डटे।

सौंची का खेल आरंभ हुआ। जागीर सिंह और अमर सिंह, दोनों तहमद कस कर मैदान में जा खड़े हुए। यद्यपि वे दोनों फुलेल सिंह से दस-दस, बारह-बारह वर्ष बड़े थे किन्तु खेल-कूद में किसी से पीछे रहने वाले न थे। माग-दौड़ में इतने दमदार थे कि मीलों एक चाल से दौड़ जाते थे और थकते नहीं थे। सूर्य के तीव प्रकाश में लम्बे-तगड़े युवकों को एक दूसरे के सामने खड़े देख एक बार तो फुलेल सिंह का मन मी

लहराया किन्तु उसका चित्त वास्तव में उदास था, इसलिए लोगों के बहुत स्राग्रह करने पर भी उसने खेल में हिस्सा नहीं लिया।

ग्रन्थकार छाने लगा तो खेल ख़तम हुग्रा। जागीर सिंह ग्रौर ग्रमर सिंह भी पसीना पोछते हुये उसके पास चले ग्राये। फिर वे लोग गातें करते हुए मेहेर (तन्दूर वाले) की दूकान पर पहुँचे। मोजन के उप-रान्त जागीर सिंह ने कहा—"यार दिन तो ग्रच्छा गीत गया लेकिन पैसा एक भी नहीं बचा। घर वालों के लिए हमें कुछ न कुछ तो ले जाना चाहिए था।"

ं घर-उघर की बातों के बार जागीर खिंह ने सुक्ताव रखा कि क्यों न ग्राज किसी के यहाँ हाथ साफ़ किया जाय!

फुलेल सिंह यह सुन उछ्जल पड़ा। वाह ! कैसा मुन्दर प्रस्ताव था। उसे ख्राश्चर्य हो रहा था कि ख्रालिए उसे यह बात क्यां न सूफी । इसमें उसे ख्रापने छुटकारे का रास्ता भी दीख पड़ा। हो सकता है इस तरह प्रीतों के ताने का कोई उपयुक्त जवाब मिल सके।

अन्त में यह सलाह टहरी कि कुछ रात मींग जाय तो वे लोग अस्ताने के बाद किसी तरफ का रुख करें और रातों-रात कुछ न कुछ ले उड़ें। इस तरह घर वाले भी यह नहीं कहेंगे कि उनके लिए मेले से कें।ई भौगात नहीं लाए। यह निश्चय कर वे लोग भीड़-भाड़ से हटकर एक खेत की मेड़ पर सिर रखकर लेट गए।

कुछ देर ऊँघने श्रीर श्राराम करने के बाद वे उठ बैठे। हर एक ने श्रपनी श्रपनी कमर से बँधा हुन्ना पटके-सा काइन उतारा श्रीर उसमें जुते बाँध कर दोबारा कपड़े से लपेट लिया श्रीर फिर उठकर एक श्रोर को दुलकी चाल से भाग खड़े हुए।

चाँदनी रात थी। दूर-दूर तक कोई ग्रादमी नहीं दीखता था। चारों ग्रोर शान्ति ग्रौर नीरवता का साम्राज्य था। व ग्रापस में वार्ते.करते हुए मजे-मजे दौड़े चले जा रहे थे। जब ये लोग लगभग छः कोस का फ़ासला तय कर चुके तो एक गाँव के निकट कुळ दूर पर कक गये। निश्चय हुआ कि पहले इस बात की कोशिश की जाय कि गाँव के सिरे पर ही किसी मकान में काम बन जाय लेकिन यदि माल मिलने की कोई आशा न हो तब फिर गाँवके अन्दर घुसें। उन्होंने पगड़ियों के शमलों को घुमाकर सिर के दूसरी ओर इस ढंग से टूंस लिया कि देखने वालों को केवल उनकी आँखें नज़र आएँ, बाकी चेहरा न दिखे और फिर सहज-सहज कदम उठते हुए आगे बढ़े। यद्यपि व चौकन्ने थे और धीरे-धीरे चल रहे थे किन्तु अनुभवी चोरों की भाँति उन्होंने इस प्रकार की बातों से अपने को बचाया जिससे किसी देखने वाले को कुळ सन्देह हो। परन्तु भला आधी रात को वहाँ कीन बैठा था।

श्राज चोरी करने का उपयुक्त श्रवसर भी नहीं था। काफी गरिमयों का मौसम, लोग ग्राँगन में या छतों पर सो रहे थे श्रौर किर चाँदनी पूरी जवानी पर थी—लेकिन श्राज उन्हें लाचारीवश चोरी करनी पड़ रही थी। ग्रौंर इसीलिए वे गाँव के श्रन्दर जहाँ साहूकारों के मकान थे, जाने से कतरा रहे थे। सहसा उनके पास ही एक पेड़ की छाया में से एक कुता निकला श्रौर उन्हें श्रपरिचित जानकर गुर्राने लगा। दूसरे ही च्रण फुलेल सिंह ने लाटी का एक ही भरपूर हाथ दिया श्रौर कुत्ता ठएडा हो गया। उसकी दवी-सी चीख भी उसके गले से न निकल सकी।

एक छाया से दूसरी छाया तक ने चारों छोर देखते हुए बद रहे थे। सबसे पहले उन्होंने एक छोटे से मकान को ताका जो गाँव से बिल्कुल द्यालग वसा हुछा था छोर फिर खास चात यह थी कि छत पर पास ही सब नीम के पेड़ की छाया भी पड़ रही थी। मकान के पास एक कूई-करकट का देर था, जिस पर चढ़कर वे लोग बड़ी छासानी से छत पर पहुँच सकते थे।

व लपक कर उस मकान की दीवार की छाया में जा खड़े हुए। कच्ची ई टा का बना हुन्ना साधारण सा मकान था। पिछवाड़े से सेंघ लगाना

भी कुछ मुश्किल नहीं था। लेकिन उनके पास कुछ हथियार भी नहीं था ख्रीर फिर छत पर चूँकि कोई नहीं था ख्रीर न चाँद की रोशनी ही वहाँ पहुँचती थी, इसलिए उचित यही समभा गया कि पहले छत से ख्राँगन की ख्रोर भाँककर मौका देख लिया जाय ख्रीर फिर जो उचित समभा जाय वैसी कार्यवाही हो।

दीवार की ग्रोर मुँह करके ग्रमर सिंह उँकड़ूँ बैठ गया ग्रीर फ़ुलेल सिंह ने उसके दोनों कन्धों पर पाँव रख दिये। पहले ग्रमर सिंह उठकर सीधा खड़ा हुग्रा ग्रीर फिर फ़ुलेल सिंह उठकर उसके कन्धों पर खड़ा हो गया। उसने धीरे से उन्हें बतलाया कि वह ग्रासानी से छत पर पहुँच जायगा।

फुलोल सिंह ने छत पर निगाह दौड़ाकर पहले लाठी आगे सरकाई और फिर स्वयं उचककर ऊपर जा पहुँचा और घुटनों तथा हाथों के बल सरकता हुआ आँगन की ओर बढ़ा। उसके दोनों साथी इन्तजार में खड़े थे कि सहसा वह लौट कर आया और उन्हें जल्दी से ऊपर आने को कहा। एक दूसरे को उठा-खींच कर शीव ही वे सब ऊपर पहुँच गये। एक दूसरे के बराबर रेंगते हुए आगे बढ़े और पहली मुँडेर के निकट पहुँचकर लेट गये। गर्दनें आगे बढ़ाई तो वह हुश्य दीख पड़ा कि जागीर सिंह और अमर सिंह के मुँह से आश्चर्य और प्रसन्नता की हलकी सी चीखें निकल गई।

श्राँगन के बीचो बीच एक जवान श्रौर सुन्दर स्त्री चारपाई पर सोई पड़ी थी श्रौर उसके शरीर पर इतने गहने थे जितने कि वे कल्पना कर सकते थे। सिर पर चौंक, कनपटियां पर जुगनियाँ, कानों में बालियाँ, गलें में हार श्रौर कलाइयों पर यह मोटे-मोटे गोखरू श्रौर लाल चूड़ा। लगता था कि उसके विवाह को श्रभी बहुत दिन नहीं बीते।

तीनां चोर पेड़ की छाया में मूर्तिवान् बैठे थे। कुछ इत्यों के लिये तो उन्हें अपने आप की सुध न रही। और फिर इस दृश्य से ध्यान हटा तो स्त्री के निकट वाली दूसरी चारपाई पर निगाह पड़ी। उस पर एक युवक लेटा था। वह भी हजारों में एक था। स्रत-शकल उतनी अच्छी न थी किन्तु उसका शरीर ऐसा गठा हुआ और सुन्दर था कि अच्छे से अच्छे जवान को देखकर ईर्ष्या हो आती। वह युवक केवल एक जाँधिया पहने सो रहा था। उसकी छाती, उसकी भुजाएँ और रानें, और फिर उसका सम्पूर्ण व्यक्तित्व ऐसा था कि देखकर सब पर रोब छा जाता था। एक बार तो वे तीनों सारी चौकड़ी भूल गये।

वें चुपचाप पेट के बल लेटे हुए स्थिति का निरीक्षण करते रहे। काफ़ी बड़ा ऋगाँगन था। पहलें कोने में दो बहुत ऋच्छी नस ज की भूरे रंग की भैसें बँधी थीं। उनमें शायद एक दूध देने वाली ऋगैर दूसरी गामिन थी सामने की दीवार पर खूँटी से दूध की बिलोनी लटक रही थी। इस तरफ़ के कोने में रसाई बनी हुई थी, जिसमें कुछ बर्तन चमक रहे थे।

मुँडेर से तिनक परे खिसक कर वे ग्रापस में खुसुर-पुसुर करने लगे। वास्तव में खतरे की बात थी। एक ग्रोर सोना था ग्रीर दूसरी ग्रीर लम्बा-तड़ंगा बलशाली युवक। स्पष्ट था कि यदि ऐसे में वह जग उठा तो उनमें से एकाध को तो रख ही लेगा। फुलेल सिंह ने कहा कि इतना भीमकाय मनुष्य उनके बरावर लम्बी दौड़ नहीं लगा सकता। ग्रीर यदि ग्राँगन के बजाय बाहर खुले खेतों में मुकाबिला हो जाय तो वे तीनों उससे शायद ही मात खायँ।

तीनों जवान, जिनकी ताक़त, हथकर हां श्रीर दिलेरी की इलाके भर में धूम थी, डर रहे थे कि कहीं श्रपने घर से श्रद्धारह-बीस कोस परे मुश्त में मारे न जायँ। श्राखीर फुलेल सिंह के गर्म खून ने जोश मारा। उसने कहा—"में श्राँगन में उतरता हूँ श्रीर स्त्री के गहने उतारता हूँ। यदि पुरुप की श्राँख खुल गई, या स्त्री के शोर मचाने पर वह जग उठा

तो स्पष्ट है कि वह पहले उसकी ख्रोर ध्यान देगा । उस समय वे दोनों तुरन्त छत से कूद कर पीछे से उस पर हमला कर दें।"

ग्रमर सिंह ने प्रश्न किया कि क्यों न हम दोनों नीचे उतर कर उसके सिरहाने पर खड़े रहें।

फ़लेल सिंह ने कहा—"यह ठीक नहीं है। क्योंक इस स्थिति में यदि हमें भागना पड़े ग्रौर हम तीनों ग्राँगन में हुए तो भागना कठिन हो जायगा।"

यह कहकर वह चौके के पास उठी हुई दीवार पर पेट रखकर नीचे उतर गया श्रोर दवे पाँवों स्त्री के निकट जा पहुँचा।

जब वह उसकी चारपाई के साथ लग कर बैठ गया तो उसने निकट से स्त्री के शरीर पर निगाह दौड़ाई। उसकी त्वचा की कोमलता, स्वास्थ्य, रंग और महक से उसका हृदय धड़कने लगा। उसने श्रपने मन को इस प्रकार के विचारों से श्राजाद किया और श्रपने कार्य में व्यस्त हो गया।

सोई हुई स्त्री के शरीर से आभूपण उतारने में उसका हाथ बहुत साफ हो चुका था। हर गहना उतारने के बाद उसकी मूँछों के नीचे उसकी बाँछें खिल जाती थीं। वह एक नज़र अपने साथियों की ख्रोर देख लेता था जो रात के सन्नाटे में छुन पर औंचे लेटे थे। उनकी टोदियाँ तीन-चार अंगुल ऊँची मुँडेर पर रखी थीं। चेहरे पगड़ियों के शमलों में छिपे हुए थे और मेड़ियों के सामान दहकती हुई लाल आँखें दीख रही थीं। अलबनता जागीर सिंह की लम्बी दादी मुँडेर से नीचे लक्कती हुई हवा के फोकों से हौले-हौले हिल रही थी। फलेल सिंह ने यह हर्य देखा तो उसे हँसी आने लगी।

फ़्लेल सिंह ने कमर से लिपटी हुई भाइन को जमीन पर बिछा दिया था ग्रौर गहने उतार-उतार कर उसमें रखे जाता था।

उसने स्त्री के माथे और शिर के सब गहने बड़ी सफ़ाई से उतार लिये । दोनों कलाइयों के गोखरू बड़ी तरकीब से उतारे, यानी गोखरूओं के दोनों सिरों में मजबूत डोरी का फन्दा डालकर वह दोनों स्त्रोर स्तींचता श्रीर जब उनके मेंह ख़ल जाते तब वह उन्हें उतार लेता। गले का हार भी उतार लिया ग्रीर फिर कानों की बालियाँ उतारने में उसने ग्रत्यधिक सफ़ाई से काम लिया । लगभग सब मारी गहने उतर चुके थे, केवल दूसरे कान की बालियाँ रह गई थीं। मुश्किल यह थी कि स्त्री का चेहरा दूसरी छोर को भुका हुआ था। और कान नीचे दब गया था। फुलेल सिंह सोच में पड़ गया कि वह स्त्री का सिर कैसे घमाए। उसने साथियों की छार देखा तो वे उसे इशारों ही इशारों में भाग छाने की कह रहे थे । लेकिन वह अपनी सफलता पर इतना प्रसन्न था कि उन चन्द वालियों को भी हाथ से न छोडना चाहता था। अतएव उसने चारपाई की रस्सी में से एक वारीक-सा रेशा निकाला ग्रौर उसे एक सिरे से पकड़कर उसका दूसरा सिरा स्त्री के कान में घुमाया। पहली बार तो कुछ ग्रसर न हुग्रा, जब उसने दूसरी बार घमाया तब स्त्री ने करवट बदलकर मुँह उसकी ग्रोर कर दिया । । वह एकदम भ्राक कर चारपाई के नीचे हो गया फिर उसने धीरे धीरे लिर ऊपर उठाया। ग्राव स्त्री के कपोल ग्रीर उसके होटों में एक बालिश्त का ग्रन्तर था। लेकिन उसने कोई ऐसी हरकत करने से श्रपने ग्राप को रोके रखा। शमले से चेहरे को एक बार फिर भली-भाँति ढाँप लिया और हाथ बढ़ाकर अपने काम में लग गया। दो बालियाँ उतार चुका तो तीसरी, जो त्याखिरी बाली थी, कुछ फँस गई । बड़ी चेष्टा की किन्त छेद इतना तंग था कि बाली उतरने ही में न ग्राती थी।

सहसा स्त्री का हाथ हिला, पल भर में बाली उतरी और उसकी स्रोर बढ़ी।

फुलेल सिंह भौंचका सा रह गया। स्त्री ने ग्रपनी मदभरी ग्रॉलें खोली ग्रीर मुस्कराने लगी। फुलेल सिंह स्त्री के इस व्यवहार पर इतना चिकत हुन्ना कि मूर्तिवत् बैठा रहा। उसे कुछ नहीं सूफ रहा था।

स्त्री ने इतमीनान से हाथ आगे बढ़ाते हुए धीरे-से पुचकार कर

कहा—"श्रच्छा, तुम्हारे लिए उचित तो यही है कि जिस तरह श्रोर जिन हाथों से तुमने सब गहने उतारे हैं उसी तरह श्रौर उन्हीं हाथों से इन्हें पहना दो नहीं तो यदि तुम भाग गये तो भी मेरा पित तुम तीनों को जा पकड़ेगा श्रौर मार-मार कर तुम्हारा भुरकुस निकाल देगा।"

फुलेल सिंह चुप रहा।

स्त्री मत्रुर स्वर में धीरे से हँसी—"हाँ, सोच लो..." यह कह कर उसने इतमीनान से ग्रााँखें मूँद ली ।

फुलेल सिंह का उजडुपन जाग उठा। बोला—"यह में मानता हूँ कि तुम्हारा ग्रादमी बड़ा मज़बूत है, लेकिन हम लोगों को दौड़ कर पकड़ना या हमसे लड़ना उसकी शक्ति के बाहर है।"

यह सुन कर स्त्री ने गहनों की भाड़न उठाई त्र्रौर पोटली बाँधकर उसके हाथ में थमा दी; फिर बोली—''लो, जब तुम सामने वाले उस छोटे से बबूल के पेड़ के पास पहुँच जात्रोगे तो मैं उसे जगा दूँगी।"

फुलें सिंह को ताव भी श्राया श्रीर उसने बड़े श्रपमान का भी श्रमुमव किया किन्तु वह उठ खड़ा हुत्रा श्रीर दीठों की माँति पोटली हाथों में लिए छुत पर चढ़ गया। उसने संदोप में साथियों को सारी बात कह सुनाई श्रीर किर वे तीनों वहाँ से चल दिये। उनका विचार था कि वह व्यक्ति उन्हें दौड़कर नहीं पकड़ सकेगा श्रीर खुले मैदान में पहुँचकर वे यों भी उससे निपट लेंगे।

जब वे बबूल के उस पेड़ के पास पहुँचे तो उन्होंने घूमकर देखा। उन्हें मकान की छत पर वही व्यक्ति दीला। उसके हाथ में लाठी थी ख्रीर ख्रव वह पहले को ख्रपेचा कहीं ख्रधिक विशालकाय दील रहा था। उनके देखतें-देखतें उसने छत से छलाँग लगाई। फुलेल सिंह तो वस वहीं पाँच जमा कर खड़ा हो गया किन्तु उसके साथियों ने ख्राध्यह किया कि ऐसी मूर्खता मत करो। गाँव के निकट लड़ना उचित नहीं। यदि गाँच वालों को मालूम हो गया तो वे सब के सब हम पर पिल पड़ेंगे। सुक्त

की मुसीवत का सामना होगा । यदि लड़ना ही है तो गाँव से तनिक परे हट कर लड़ेंगे।

फुलेल सिंह को उनकी राय ठीक जँची श्रीर तीनों श्रागे-पीछे एक ही पंक्ति से दौड़ने लगे। वे तीन गित से लपके हुए जा रहे थे, किन्तु उनका पीछा करने वाला बहुत तेज निकला इस कारण उन्हें श्रीर भी तेज दौड़ना पड़ा। लेकिन उन्हें श्रान्थ हुश्रा कि इस प्रकार भी काम नहीं चलेगा क्योंकि वह व्यक्ति रेल के इन्जन की-सी तेजी के साथ श्रागे बढ़ा श्रा रहा था श्रीर श्रव उनके बीच दो बढ़े खेतों का फासला रह गया था। फिर वे पूरी शक्ति से दौड़ पढ़े। कुछ मिनट तक इसी प्रकार दौड़ते चले गये। वे तीनों लम्बी श्रोर तेज दौड़ के लिए विशेष रूप से मशहूर थे किन्तु इस समय वे हैरान रह गये। उनकी समक्त में यह बात नहीं श्रा रही थी कि इतना भारी भरकम श्रादमी इतना तेज कैसे दौड़ रहा है। उनका यह विचार भी गलत निकल। कि वह थोड़ी दूर तक दौड़कर हाँप जायगा। वास्तव में वे इतनी तेजी के साथ इतनी लम्बी दौड़ लगाने के कारण स्वयं कुछ हाँप रहे थे। इधर उनका शत्रु कुछ श्रीर भी निकट श्रा गया था।

इसी प्रकार दोंड़ते-दोंड़ते उन्होंने आपस में सलाह की कि सामने भड़बेरियों के जो दो भुष्ड दिख रहे हैं उनके बीच में होकर निकला जाय। भुष्डों के बीच तंग रास्ते से निकलते समय अपले दोनों साथी उचक कर दाई ओर की भाड़ियों की ओट में खड़े हो जायँ और मुलेल सिंह सीधा दौड़ता हुआ चला जाय। यह सब काम इस सफ़ाई से किया जाय कि उनके रात्र को बस यही मालूम हो कि वं तीनों सीधी पंक्ति में एक दूसरे के पीछे भागे चले जा रहे हैं..... और जब वह रास्ते से होकर निकले तो उस पर पीछे से हमला किया जाय और उस समय अपला साथी भी वापस लीट आए। इस प्रकार वे तीनों मिलकर उसे ठिकाने लगा दें।

द्यतएव यही किया गया। जागीर सिंह त्रीर श्रमर सिंह भाड़ियों की ग्रांट में हो गये। फुलेल सिंह सब के पीछे था, इस लिये वह सीधा भागता चला गया। श्रीर जब उनका राजु भाड़ियों में से होकर निकला तो जागीर सिंह ने लाठी तौल कर ऐसा भरपूर हाथ दिया कि यदि उसके सिर पर वालों का बहुत बड़ा जूड़ा न होता तो लाठी उसके जबड़ों तक उत्तर जाती। फुलेल सिंह तुरन्त वापस पलटा, उसके पहुँचते-पहुँचते तक उन्होंने उसकी पीठ श्रीर टाँगों पर दो—चार लाठियाँ श्रोर बरसा दीं। किन्तु उनका शत्रु पहले भरपूर वार से ही गिर पड़ा श्रीर वेहोश हो गया।

फुलेल सिंह ने उनका हाथ रोक दिया ''श्रव मारो मत बेचारे को... श्राक्यो श्रव हम लोग चल दें।"

वहाँ से दो कोस परे वे लोग एक रहट के पास खेत में छिप्पकर लेट रहे। संचा कि कुछ देर श्राराम करेंगे श्रीर दिन चढ़े मेले में वापस चले जायँगे।

कुछ देर तक वे सोये रहे। सुबह हुई तो उन्होंने उठकर रहट में मुँह हाथ घोया। फुलोल सिंह ने साथियों की सम्बोधित कर कहा—"यार जो कुछ भी कहो, रात बाला जवान खूब था।... ऋहा, हा... क्या ख्याल है तुम्हारा, वह मर तो न गया हो गा... भाई मुफ्ते तो उसकी कुछ चिन्ता सी लगी हुई है..."

फुलेल सिंह ने मानो सब के दिल की बात कह दी। वे बाले-"चला हम उसका पता लगाएँ। हमें गाँव में कोई पहचानता तो है नहीं।"

वं वापस चल दिये। पहले उस जगह पहुँचे जहाँ उन्होंने उस पर वार किया था। वहाँ श्रव कोई नहीं था। शायद गाँव वालों में से किसी ने देख पाया हो श्रीर उसे उठाकर ले गये हो। लेकिन धरती रक्त से लाल हो गई थी। लगता था कि खून बहुत श्रिष्ठिक बहु गया है। इतना खून वह ाने के बाद वह शायद ही जीवित बचा हो। वे तीनों उदास से हो गये। वास्तव में वे ऐसे श्रसाधारण युवक को जान से नहीं पारना चाहते थे। श्रव उन्होंने सलाह की वे तीनों अलग-श्रलग गाँव में प्रवेश करें श्रीर उसकी हालत का पता लगायें।

वे बिखर कर ऋलग-ऋलग गाँव की श्रोर चल दिये छोटे-से गाँव में यह समाचार श्राग की तरह फैल चुका था। उन्हें मालूम हो गया कि उसका नाम दरवारा सिंह है श्रीर वह इस समय गाँव के दारे में पड़ा है।

दारे में पहुँचे तो वहाँ कई श्रोर लोग भी जाना थे। उन्हें यह मालूम करके खुशी हुई कि वह मरा नहीं। भीड़ में बुसकर देखा तो दरवार सिंह एक बड़ी चारपाई पर कोहनी के सहारे बैठा था। सिर पर पट्टी वॅधी थी श्रीर वह हँस-हँस कर लोगों से बात कर रहा था।

दिन के प्रकाश में उसका ग्रसाधारण रूप से पत्ता हुआ शरीर देखते ही बनता था। ग्रांफ ! कितना तगड़ा ग्राँर तन्दुरुस्त था वह जवान!

यह इलाके भर में मशहूर जवान था। ग्रीर श्रकेला कई-कई जवानों का हरा देता था। ग्राज तक उसके हाथ से कोई व्यक्ति वचकर नहीं जा सका था।

फुलेल सिंह ने सीधे दरबार सिंह से बात करके पूछा कि व्याखिर मामला क्या है। दरबार सिंह ने उसे परदेशी राहगीर समभक्तर सारी कहानी कह सुनाई और फिर बड़े मजे में हँसकर बोला—"उनकी संख्या तीन थी। यह मानना पड़ेगा कि वे कोई साधारण चीर नहीं थ क्योंकि ब्राज तक दींड़ में भी मैंने किसी ब्रादमी को बहुत ब्राधिक दूर तक नहीं जाने दिया। रात वाले जवान दौड़ने में निश्चय ही मुम्मसे कम न थे। मुभे मिलीं तो उसके हाथ चूम लूँ। जब मैं उसके पिछे दौड़ रहा था तब मन ही मन उनकी प्रशंसा कर रहा था किन्तु मुभे इस बात का यहा दुख है कि ब्रामने सामने मुकाधिला न हो सका।..."

वं तीनों चुपचाप उसे देखते रहे। उनके मन में भी उसके प्रति [ ६६ ]

स्नेह उत्पन्न हो गया था। फिर उन्होंने स्त्रापस में कनखियों से इशारे किये श्रीर वहाँ से चल दिये।

वे तीनों चुपचाप चले जा रहे थे। जब वे रात वाले मकान के पास से गुजरने लगे तो सहसा फुलेल सिंह एक गया। उसने कुछ चए मौन रहकर कुछ सोचा ख्रौर फिर कमर से गहनों की पोटली निकाली ख्रौर दूसरे ही च्या उसे घुमाकर ऐसे निशाने पर फेंका कि पोटली ठीक ख्राँगन के बीच में जाकर गिरी।

फिर वे तीनों जल्दी-जल्दी कदम उठाते हुए ग्रागे बढ़ गये ग्रीर जब गाँव से दूर पहुँच गये तब एक बार फिर उन्होंने रहट का ठएडा पानी पिया।

फुलेल सिंह ने डाढ़ी से पानी की बूँदे पोंछते हुए शिकरे की सी दहकती ग्रॉंखां से साथियों की ग्रोर देखा ग्रौर बोला—"कहो यार, ग्राज रात किसके यहाँ हाथ साफ़ किया जाय ?"

# यंथी

''सतनाम !'' यह शब्द सदैव की भाँति ग्रंथी के मुँह से निकला श्रीर उसके कदम इक गये।

"श्रंथी जी! सी मर्तबा कहा है कि यूँ दनदनाते हुए न बढ़े श्राया करों। जरा परे खड़े रहा करों। किस वक्त श्रादमी न मालूम कैसी हालत में होता है.....।" नल के समीप बैठी हुई श्रीरत ने श्रपनी पिंडली, शलवार के पाँवां से खिसका कर टाँप खिया श्रीर एड़ियाँ रगड़ने लगी। प्रन्थी कब का पीछे, हट चुका था। श्रीरत ने सुफ्त में रामायरा छेड़ दी। प्रन्थी का मुँह ऊपर को उठा हुआ था। मुँह ऊपर उठाये रखने की उसे श्रादत सी हो गई थी।

यह 'सी मरतबा' की भी खब रही। कही तो यह बात उसको पहले भी कई बार गई थी, परन्तु यदि बाहर खड़े रहने पर उसकी भीमी ग्राचाज सन ली जाय तो वह कदापि इस प्रकार दनदनाता हुन्या अन्दर प्रवेश न करे। उसकी ग्रावाज ग्रन्छी खासी थी, लेकिन जोर से ग्रावाज़ देने पर भी उसे टोंका गया था-- "यह क्या बदतमीज़ी है। इस कहर गला फाड़ने की भी क्या ज़रूरत है ?" अब अगर वह उसकी मन पसंद त्र्यावाज में, वड़े संगीत पूर्ण दंग से, सुबह से शाम तक खड़ा-खड़ा--'सतनाम, सतनाम' कहता रहे तो कोई उसकी आवाज न सन पाये और न उसको रोटी दे। गुरुद्वारे के मुसाफ़िर भी एक मुसीवत ही थे। न वे रोज-रोज आवें, न उसको रोटियाँ माँगनी पड़े ! अपने लिये तो वह कभी रोटियाँ माँगने न ग्राये...। ऐडियाँ रगड-रगड़ कर पाँव धोने वाली की सूरत तो देखो ! यह तो खैर, उस ग्राफ़त की परकाला की सूरत भी भला देखने योग्य थी, जिसने उस पर बदनीयती का ग्रापराध थोपा था ? सब से मोटी बात जो उसके बारे में कही जा सकती थी वह यह थी कि उसने ग्रमक श्रीरत की ग्रीर कहिए से ताका। ग्रीर यही ग्रिमियोग उस पर लगा कर वह तमार बाँधा गाया कि बस ! इतने में फाउह सिंह चौंकीदार ने द्याँगन में प्रवेश किया।

श्रीरत ने स्वच्छन्दता से कहा—"श्रा फ़ितया! क्या वात है। चौकीदार फ़िती ने श्रंथी की श्रोर चुसती हुई नजरों से देखा—"क्या सरदार जी घर पर नहीं हैं १ वह श्रायें तो कहना कि रात को कुएँ पर श्रा जॉर्थे।" जस्ती का कटोरा देने पर वह उसे एक ही साँस में चढ़ा गया। पिर श्रंथी के कन्धे से कन्धा भिड़ा कर बाहर निकल गया।..... श्रीरत की भुकटी चढ़ गई।

ग्रंथी इन सब बातों का मतलब समकता था...। त्याज उसको एक अयटित ऋपराध की सजा मिलने वाली थी।

× × ×

उस रात गाँव के बड़े कुएँ पर गाँव भर के प्रमुख लोग जमा हुए । ग्रंथी पर जिरह बहस की गई ग्रीर ग्रंगर कोई बात उसके पन्न में निकलती तो वे मल्ला उठते। सब लोग उससे खफा थे। किसी की ग्रंसली शिकायत यह थी कि वह उनके घर वालों को प्रसाद हमेशा कम दिया करता था, किसी के घर में जाकर उसकी पत्नी ने काम करने से इन्कार कर दिया था, किसी के बच्चों को उसने गुरुद्वारे की फुलवाड़ी उजाड़ने से मना किया था। लेकिन उस पर ग्रंमियोग यह लगाया गया कि लाजो एक दिन गुरुद्वारे में माथा टेकने के लिये गई तो उसने उसका हाथ पकड़ लिया। लाजों को ग्रंच्छा नहीं समझा जाता था। उसका पति मर गया था! ग्रंच वह ग्रंपने तीन माइयों के साथ रहती थी। तीनों भाई बेकार थे। जो भी काम हाथ लगता कर लेते। एक भाई ने पंसारी की दूकान खोल रक्की थी। कभी वे जलेबियाँ बनाते, कभी ताँगा तैयार करते, हाथ लगने पर ग्रंच्छे पैमाने पर चोरियाँ भी करते ग्रीर कभी किसी ग्रारोधी की घोड़ी छीन लेते।

"क्यों लाजो ! क्या यह बात सही है कि ग्रंथी ने तुम्हारा हाथ पकड़ा ?"

लाजो ने बहे विस्तार के साथ बताया कि किस तरह प्रथी ने उसका हाथ पकड़ा ग्रीर फिर किस तरह उसने उसको गले लगाने की कोशिश की।

''ग्रंथी जी, तुमको कुछ कहना है ?'' ''मैंने इसका हाथ नहीं पकड़ा।''

लाजो चमक कर कुळ कहने वाली थी कि उसको रोक दिया गया। ''तो ग्रंथी जी, श्राज तुमने लाजो का हाथ पकड़ा, कल किसी श्रीर का श्राँचल खींचोंगे। गाँव की बहू बेटियों की इज्ज़त तुम्हारे हाथों सुरिच्चित नहीं।"

''मैंने इसका हाथ नहीं पकड़ा.....।"

ि ५० न

"तुमने काम तो वह किया है कि तुम को.....। खैर कल संक्रान्ति का काम मुगता कर परसो यहाँ से चले जाग्रो।"

प्रंथी वापस त्याकर विस्तर पर लेट गया। नींद न त्याती थी। कितने ही दिनों ठोकरें खाते रहने के बाद वह इस गुरुद्वारे का ग्रंथी हुत्या था। यहाँ उसे हर प्रकार का सुभीता था। एक त्योर एतिहासिक इमारत थी, दूसरी त्योर कई इमारतें बन रही थीं। चक नम्बर ३५ त्यौर चक नम्बर ३६ का यह संयुक्त गुरुद्वारा था। दोनों गाँव एक दूसरे के बिलकुल समीप होने के कारण त्यालग गुरुद्वारे की ज़रूरत मालूम न होती थी। फलस्वरूप चढ़ावा भी क्यादा चढ़ता था।

थोड़ी देर तक उसकी पत्नी उसके समीप बैठी रही। वह उदास थी। लेकिन उसको अपने पति पर भरोसा था। वह जानती थी कि उसके पति पर जो अभियोग लगाया गया था वह सरासर भूठा था। वे दोनों इस विपत्ति का मूल कारण भी जानते थे। लेकिन लाचार थे। अगर इस जगह रहने का मतलब यह था कि बात-बात पर बेइज्ज्ती सही जाय, उसकी पत्नी दूसरे के घरों में जाकर न केवल सेवा टहल करे बल्कि उनकी खुशामद भी करे तो इससे अच्छा यही था कि वे इस गुलामी से मुक्त होकर अपने गाँव चले जायें...। लेकिन वह इसके बाद क्या करेगा, यह बात उसकी समभ में न आती थी।

गर्मियों की चाँदनी रात में वह खुले श्राकाश के नीचे चारपाई पर लेटा सही अर्थ में तारे गिन रहा था। उसने तारों की श्रोर कभी ध्यान ही न दिया था, परन्तु तारों की दुनिया भी कितनी सुन्दर श्रीर श्रुनोखी थी। दूर तक फैले हुए श्रगिएत तारों को श्राकाश गंगा कहा जाता है। मरने के बाद मनुष्य की श्रात्मा श्राकाश-गंगा से होकर जाती है। न जाने वह रास्ता कैसा होगा ? कैसी जगह होगी ? पेड़ होंगे या रेत के टीले ? जब श्रात्मा थक जाती होगी तो उसको विश्राम की श्रनुमित मिलती भी होगी या नहीं ? उस रास्ते का श्राह्मिर कहाँ श्रन्त होता होगा ?

उसकी आँख लग गई। जब जागा तो तारे मिलमिला रहे थे और वायु में शीतलता थी। जाड़े में बूढ़ा बैल सींग हिला रहा था, और उसके गले में पड़ी हुई विष्टयाँ बज रही थीं। गुरुद्वारे के अन्दर उसके छोटे-से घर के आँगन में उसकी पत्नी दही बिलो रही थी। दही बिलोने की आवाज़ इस बात का प्रत्यन्न प्रमाण था कि अब सुबह होने वाली थी।

वह उठा। लाठी उठाकर वह बबूल के पेड़ की स्रोर चला गया। एक कोमल सी डाल काटकर उसने तीन दात्नें बनाई — अपने लिए, अपनी बीची के लिए स्रोर अपनी नौ वर्षोया बच्ची के लिये। एक भाड़न कन्धे पर डाले वह खेतों में से होता हुआ बाई में वापस स्राया स्रोर बैल की रस्सी खोलकर रहट की स्रोर बढ़ा।

पुरानी चाल का वह रहट जुमीन से बहुत ऊँचा था। एक ऊँचा, गोल चब्तरा, जहाँ से गोवर मिली मिट्टी नीचे गिरती रहती थी। चब्तरे के दोनों स्प्रोर गारे की बेडौल-सी टेढ़ी-मेढ़ी दो दीवारें खड़ी थीं। उन पर दरखत काटकर एक लम्बा-सा लहा लटका दिया गया था। उसके बीची-बीच चर्खी की लकड़ी धुसी हुई थी। पास ही दूसरी चर्खी उसमें दाँत जमाये खड़ी थी। निचली चर्खी के पास लकड़ी का हका था, जो उसकी पीछे की ग्रीर चुमने से रोकता था। जब बैल की जीत दिया गया ग्रीर चिंदियाँ घुमने लगीं तो हका कर-कर बोलने लगा। कुएँ वाली बड़ी चर्खी भी त्रुमी। रिस्सियों से बंधी हुई टिंडें ( मिझी की छोटी-छोटी हाँ डियाँ ) पानी की ग्रोर लपकी। जो टिंडें रात की भरी बैठी थीं उन्होंने पानी उँडेल दिया। भाल में से पानी की धारा तेजी से निकली। कुछाँ अजीव स्वर में हूँ-हूँ की ग्रावाज निकालने लगा। कमी ऐसा जान पड़ता, जैसे गा रहा हो। कभी रोने की आवाज निकलने लगती और कभी उसमें से हृदय विदारक ग्रार्त्तनाद सा पैदा होता...। ग्रंबेरे में यह ग्राजीब-ग्राजीब ग्रावाजें: छोटी-नडी घूमती हुई चिंत्वी ऐसी दिखाई देती थीं मानी कोई श्रनोखा जानवर रेंक रहा हो।

इस कोलाहलमय घातायरण में सजीवता की लहर दौड़ गई। इधर उधर से दो-चार कुत्ते मूँकने लगे।

ग्रन्थी ने भाल की तरफ तख्ता लगाकर पानी रोक लिया जिससे वह टोटियों की तरफ चला जाय। जब खेत को पानी देना होता तो पानी को ढाल की ग्रोर जाने दिया जाता। चहारदीवारी पर बैठ कर उसने दात्न की। दात्न की कूंची से दाँत ग्रीर मस्दे साफ किये फिर दात्न बीचों बीच से फाडकर उसे कमान की तरह से मोड़ लिया ग्रीर जबान पर रगड़ा।

कुएँ पर भुके हुए शहत्त के दरस्त पर पत्ती पर फड़फड़ाने लगे। दात्न फेंककर उसने कपड़े उतारे। टोटी के मुँह से लकड़ी हटा दी। मुँह श्रीर दाढ़ी धोकर 'वाह गुरू, वाह गुरू' का जाप करता पानी की धार के नीचे बैठ गया। यह रोज की किया थी। कल वह उस जगह की छोड़ कर चला जायगा, इस समय उसे यह बात श्रविश्वसनीय लग रही थी।

कच्छा निचोड़ कर उसने वगल में दबाया। पानी से भरी बाल्टी उठाकर वह ग्रन्दर चला गया। बड़े ग्राँगन में उसकी पत्नी भाड़ू दे रही थी। कच्छा भटककर रस्सी पर डालने के बाद उसने भूमि पर पानी छिड़कना ग्ररू किया। ग्रांज संक्रान्ति थी।

सफ़ाई ख्रौर छिड़काव के बाद टाट विछाया गया। प्रत्थ साहब पर सिल्क के रूपाल डाल दिये गये। चौकी भी साफ़ करके निकट ही घर दी गई। फिर वह अन्दर से हारमोनियम, तबला, ढोलक, चिमटा इत्यादि गाने बजाने के साज उठा लाया। उसकी पत्नी पास खड़ी दातून कर रही थी। उन्होंने एक दूसरे की ख्रोर ताका। दोनों के अन्दर यह विचार था कि जब उनको यहाँ रहना ही नहीं है तो उनकी बला से, वे काम भी क्यों करें ? लेकिन यह गुरू घर का काम था। यह तो गुरहारे की सेवा थी। किसी पर क्या एहसान था। अपनी करनी ही सुधारने का सवाल था। और दोनों के दिलों में आशा की एक हल्की सो किरण भी मौजूद थी कि शायद कोई ऐसा संयोग हो जाय कि उनका जाना हक जाय।

लड़की ग्राज ग्राच्छे-ग्राच्छे कपड़े पहने फूली न समाती थी। कितनी भोली थी वह।

धूप निकल त्राई । उसकी पत्नी मुँह पर छुड़ी मल कर धूप में जा बैठी । प्रन्थी ने बड़े-बड़े मटकां में पानी भरना शुरू किया कि संगत को यदि प्यास लगी तो पानी की तकलीफ न हो । गुरुद्वारे का बूढ़ा बैल कम-जोर हो चुका था । काम कम करता और ग्राराम ज्यादा । यह तो हो नहीं सकता था कि संगत को पानी पिलाने को वह बैल शाम तक छुएँ के ग्रागे जीते रखे ।

शांख हाथ में लिए वह गुरुदारे की हूटी-फ्रुटी चहारदीवारी के वाहर निकल द्याया । दरवाजे के पास दरखत का एक मारी मरकम तना पानी के गहें में घँसा पड़ा था। ब्रास-पास गुरुद्वारे के वे खेत थे, जिनमें उसने खुद इल चलाया था, बीज बीया था, चाँदनी श्रीर श्रॅंबरी रातीं में पानी से सीचा था। नलाई भी की थी। उन खेतों से उसका कितना गहरा सम्बन्ध था। उसका पसीना इन खेतां की अरअरी मिट्टी में सूख जुका था । अन वह अपनी गाढी कमाई का किसी प्रकार हक्रदार न था । पास ही त्ररगढ़ का एक बूढ़ा बृद्धा था जिसके सम्बन्ध में एक कहाबत प्रसिद्ध थी कि गुरुत्रों के समय में एक बहुत ही धार्मिक पुरुष इस गुरुद्वारे में सेवा किया करता था। उसने अपनी उम्र इसी जगह गुरू के चरणों में बिला दी। यहाँ तक कि वह बूढ़ा हो गया...। लेकिन उसकी संगत श्रीर सेवा में पूर्क न आया। उसका हृदय उसी प्रकार श्रद्धा से परिपूर्ण था। एक बार की बात है कि गर्मियों में दीपहर को वह खेतों की नलाई कर रहा था। उसकी पगडी के ग्रन्दर उसके उलके हुए बाल पसीने से तर हो रहेथे। उसे प्यास लगी। उसने टिंड में पानी भर कर रस्सी का बँधना बनाकर बड़ के पेड़ में लटका रखाथा। जब उसने टिंड को छुत्रा तो वह इतनी ठराडी थी जैसे बर्फ । कितना शीतल जल है, उसने सीचा गुरु साहब सच्चे बादशाह इसी श्रोर श्राने वाले है । क्यों न यह [ 00 ]

जल उन्हीं के लिए रहने दूँ। वह इसमें से पानी पी लेंगे तो बचे हुए जल से अपनी प्यास बूमा लूँगा।...निःसन्देह गुरू जी दौरा करते हुए उस अोर को आने वाले थे। लेंकिन उनके आने में अभी बहुत समय था वह निश्चिन्त भाव से दरबार में बैठे संगतों को दर्शन दे रहे थे। अचानक गुरू साहब उठ बैठे और तुरन्त प्रस्थान का आदेश दिया। सभी हैरान थे कि आलिर इसमें भेद क्या है श्यह बैठे-बिठाए अकस्मात इतनी जल्दी काहे की पड़ गई। गुरू साहब सच्चे बादशाह बोले—एक सिक्ख हमारी प्रतीचा कर रहा है। वह प्यासा है। जब तक में वहाँ जाकर पानी न पियूँगा वह प्यासा ही रहेगा...। गुरू साहब घोड़ा सरपट दौड़ाते हुए उस जगह पंहुँचे, जाते हो पानी माँगा। सिख ने वह टिंड आगे बढ़ा दी। वह कितना सुखी था। उसकी आँखों में ख़शी के आँसू आ गये

अन्थी दरखत के तने पर खड़ा हो गया । जब उसने शंख मुँह में खगाया तो सोचने लगा—गुरू साहब दिलों का हाल जानते है। उन्हें मेरी निदींचता ज्ञात है। वह यहाँ से नहीं जायगा। उसे बिश्वास था कि अवश्य ही कुछ न कछ युक्ति निकल ग्रायगी।

शंख फूँकने के बाद वह देर तक गाँव की ग्रोर निहारता रहा, मानो वह भी किसी के ग्राने की बाट जोह रहा हो। कितनी तेज धूप हो गई यो ग्रीर लोग ग्रामी घर से भी न निकले थे। मिटियाले मिटियाले मिकान, मकानों से सिर निकाले हुए हरे पेड़...। कच्ची सड़कों से ग्रागे ढाल पर शंगियों के काले कलूटे, नंग-धड़ंग बच्चे खेल रहे थे। तीन बळुड़े इधर उधर चौकड़ियाँ भरते फिरते थे।

वह गुरुद्वारे की छोटी-सी फुलवारी में गया। अंगूर की बेलें आड़ी तिरछी लकड़ियों परी से गिर पड़ी थीं। एक कोने में से उसने उलकी हुई रिस्सियाँ उठाईं। बेलों को लकड़ियों के साथ लगा-लगाकर रिस्सियों के दुकड़ों से कुछ ढील दे देकर बाँधने लगा।

उसकी मोटी-मोटी उँगलियाँ अपने काम में निपुण थां। पास ही ७८ ो थनिया और मिचों की क्यारी थी। वह उसके किनारे पंजों पर बैठ गया, बीच-बीच में खड़ी-मिड़ी बूटी के छोटे छोटे पौषे भी थे। उसने संभाल कर उन्हें उखाड़ना शुरू किया। बच्चे उन बूटियों को बड़ी रुचि से खाते थे। अनार के पेड़ चुपचाप समाधि लगाए हुए साधुआं की माँति दिखाई दे रहे थे। हवा बन्द थी। पेड़ों की पत्तियाँ तक नहीं हिलती थी। मालूम होता था जैसे परमात्मा से उनकी ली लगी हो। बाग का कितना भाग बेकार पड़ा हुआ था। उसका विचार था कि वह भाड़ियां और मदार के पेड़ों से उस हिस्से को साफ़ करके वहाँ तरकारियाँ बोये—मटर, टमाटर, गोभी...।

हर पेड़ श्रीर पीचे को देखता हुया वह बाहर निकला। फिर उसी तने पर खड़े होकर उसने दूसरी बार शंख बजाया। कोई सूरत नज़र न याती थी। मर्द तो खैर खेतों में काम कर रहे थे, लेकिन श्रीरतें बरों में घुसी पड़ी थीं। बीबी से कहने लगा—"दो मरतबे शंख फूँक चुका हूँ, कोई श्रादमी नज़र नहीं श्राता। कम से कम श्रीरतों को तो श्राना चाहिये।"

उसकी बीवी चुप रही । श्रीरतां के बारे में वह जानती थी । एक तो हर श्रीरत के चार-चार, पाँच-पाँच बच्चे थे । उनको नहलाना धुलाना, फिर हर श्रीरत को श्रपना भी बनाब-श्रांगार करना था । यही वह जगह थी जहाँ श्रपने गहनां श्रीर कपड़ों का प्रदर्शन किया जा सकता था । दुनिया भर की बातें यहाँ की जाती थीं । श्रनेकों गूढ़ समस्याश्रों को यहीं बैठकर मुलभाया जाता था ।

छोटी बच्ची ने खुशी में दोलकी थपथपानी शुरू की । ग्रन्थी चमेली के चारों छोर ईंटों के उखड़े हुए जंगले को सुधारने लगा । कहीं कोई ईंटों गिरी पड़ी थीं, कहीं कोई टहनी ईंटों से उलफकर रह गई थी । किसी जगह पेड़ इतने फैल गये थे कि जँगले की और बड़ा करने की जरूरत हो गई थी ।

लोहे के डोल भर-भरकर उसने फूलों को पानी देना शुरू किया। विचारे गेंदे के फूल तो निरे ग्रनाथ ही थे । कोई उनकी देख-रेख न करता था। बेचारों को सूखी ग्रौर कड़ी सूमि पर ही पनपना पड़ता था। कूड़ा-करकट भी उन्हीं पर फेंक दिया जाता । इस पर भी जब फूल जाते तो हर तरफ़ पीला ही पीला देख पड़ता। फ़ूलों के हार गूँथे जाते, बच्चे भोलियाँ भर-भरकर घरों को ले जाते, कुछ ग्रन्थी साहब के सामने भी चढ़ा दिये जाते । बड़ी दुर्गीत होती बेचारों की । वह जब कभी गेंदे के किसी फूल की ग्रोर देखता तो उसे उनके ग्रानाथ होने का ख्याल ग्राने लगता, जैसे कि वह ख़द ग्रानाथ था। वह पौधे के समीप बैठ जाता। फूल हवा में इधर-उधर भूमने लगते। वह प्यार से फूल को दोनों हाथों में ले लेता, मानो वह किसी वालक का शशि-मुख हो। उसे एक बात याद ह्या जाती। एक बार गुरू द्र्यर्जुन देव जी के लबादे की भापट में त्राकर फूल की पंखड़ी भूमि पर गिर पड़ी तो गुरू साहब की श्राँखों में ऋाँसू उसड़ श्राये । यह सांचते-सोचते न जाने किस भाव से प्रशावित होकर ग्रन्थी की करुणा उमड़ उठी । वह ऋछ समफ न सकता था। वह जानता था कि उसकी ख्रक्क मोटी थी. लेकिन फिर भी वह जाने किस भाव में मझ हो जाता था।

भट्टी के पास उसने कड़ाह-प्रसाद (हलुवा) की कुल सामग्री इकट्टी कर दी। लकड़ियाँ ख्रौर मोटे-मोटे उपले भी एक ख्रोर हेर कर दिये। ख्रौर फिर शंख लेकर दरखत के तने पर जा खड़ा हुद्या। तीसरी बार शंख फूँककर वह देर तक उसी तने पर खड़ा रहा। धूप चिलचिला रही थी। ख्रौंखें धूप में तपती हुई हवा की गर्मी सहन न कर सकती थीं। उसने ख्रौंखों पर हाथ रखकर गाँव पर नज़र जमा दी। शायद कोई सूरत नज़र ख्रा जाय। उसे काम को समाप्त करने की चिन्ता हो रही थी।

कुछ नीले-पीले दुपटें हवा में लहराये। कुछ किशोर अवस्था के लड़के और लड़कियाँ अठखेलियाँ करते दिखाई देने लगे। रंग विरंगे रूमालों से दँकी हुई थालियाँ हथेलियों पर घरे पवित्र त्रात्मा बूढ़ी श्रीरतें पीछे-पीछे चली त्रा रही थीं। धीरे-धीरे दोनों गाँवों के लोग चींटियों की तरह रेंगते हुए निकले, श्रीर छोटी-छोटी टोलियों में गुरुद्वारे की श्रीर बढ़े।

प्रत्थी ने हाथ-पैर घोकर पगड़ी सँभाली । गले में पीले रंग का लम्बा-सा कपड़ा डालकर 'बाह गुरू, वाह गुरू' कहता गुरु प्रन्थ साहब के पास जा बैठा ।

गुरु प्रन्थ साहव पर से रूमाल हटाकर बड़ी सावधानी से लपेट, जिल्द के नीचे दवा दिया ग्राँर पवित्र ग्रन्थ को खोल ग्राँखें बन्द कर चौरी हिलाने लगा।

लम्बे-लम्बे चूँघट निकाले हुए श्रीरतें चहारदीवारी के श्रन्दर दाखिल हुई । उनमें से कोई-कोई नई-नवेली कुल्हर्ने थीं, जिन्होंने कुहनियों तक चूड़ियाँ पहन रखी थीं। लाल रंग की कमीज ग्रौर शलवार में गटरी-सी बनी हुई वे बीर बहाटियों जैसी दिखाई दे रही थीं। गुरु प्रन्थ साहब के सामने पेसे, बतारी, फूल, थालियों में चावल, दाल, ग्राटा इत्यादि रख वे माथा टेक्तीं श्रीर एक तरफ बैठ जातीं। लड्कों में किसी ने हारमोनियम पकड़ लिया, एक लड़का धाँकनी को हिला-हिलाकर हवा देने लगा । दूसरा श्रपनी उंगिलयों से लकड़ियों के काले सफेद स्वरों को बरी तरह दवाने लगा। एक ने दोलकी बजानी शरू कर दी। दो लडके बड़े-से चिमटे को बजाने लगं। छेने भी छनछनाकर बोलने लगे। इधर ग्रीरतें। ने ग्रापस में बातें ग़ुरू कर दीं। उनकी याबाज हर नियंत्रण से मुक्तदूर तक सुनी जा सकती थी। कुछ जड़कों ने इधर-उधर भागना शुरू किया। नई इमारत की ईंटों की थाक लगी हुई थी। लड़कों ने ईंटों की रेलगाड़ी बनाई। एक लम्बी लाइन में ईंटें एक के पीछे एक कुछ-कुछ अन्तर पर रख़ दी गईं। फिर एक को जो ठोकर लगाई तो सारी ई टें घडाघड गिरने लगीं। लड़के उछल-उछलकर शोर मचाने लगे। उनकी दीली-दाली

पगड़ियाँ खुल गई। उन्होंने फिर बाँघने की जगह उन्हें ऋपनी बगलों में दबा लिया ऋौर बाग का चक्कर लगाने निकल गये। ऋाज वे निडर हो रहे थे। वे ऋपनी माताऋों के साथ थे। यन्थी का पहले तो ऋाज कुछ डर भी न था, दूसरे वह उस समय तो ऋाँखें बन्द किये यन्थ साहब के पास बैठा था।

श्रव मदों की श्रामद शुरू हुई । मोटे खहरके तहबंद बाँबे, घुटनों तक लम्बे कुतें पहने सिरों पर श्राठ-श्राट, दस-दस गण की कलफ लगी पगड़ियाँ लपेटे, हाथों में लोहे श्रोर पीतल की मूठवाली लाठियाँ थामे श्रीर श्रपनी दाढ़ियों को खूब चिकना किये हुए श्राये श्रीर माथा टेक-टेककर वह इधर उघर बैठने लगे । उनमें लम्बे तगड़े नवयुवक भी थे, जिनकी तहबन्दों के रंगीन रेशमी इजारबन्द जान बूफ कर घुटनों तक लटकाए हुए थे । पगड़ियों के शमले खूब श्रकड़े हुए थे । कुछ ऐसे छैल-छुबीले भी थे जिन्होंने पगड़ी का पिछला छोर घुमा फिरा कर बड़ी युक्ति से श्रगले सिरे पर ला टूँसा था, जैसे किसी पले हुए मुर्ग के सिर पर उसकी सजी बनी कलेंगी।

मदों के पहुँच जाने पर कार्यक्रम गुरू हुन्ना। कुछ नौजवानां ने बढ़ कर साज सँमाल लिये। एक एक इलायची श्रीर लींग मुँह में डालकर साज बजाने शुरू किये। हारमोनियम के साथ ताल पर ढोलक बजने लगी। चिमटे वाले ने भूम भूमकर चिमटा बजाना शुरू किया। इधर छेने भी टकराये। हारमोनियम वाले ने मुँह खोलकर एक लम्बा 'हो' निकालने के बाद गाया—

'इथे पैठ कसे नहीं रहना मेला दो दिन का।'

इतना कह कर वह लगातार मुँह हिलाने लगा। ढोलकी वाले की गर्दन हिलती थी तो चिमटे वाले का घड़। जब एक बार कार्यवाही शुरू हो गई तो मुख्य-मुख्य लोगों ने त्रापस में कानाफूसी शुरू कर दी। कई मामलों पर विचार होता जान पड़ता था।

शब्द कीर्तन के बाद गुरु ग्रन्थ साहब की पवित्र वागी पढ़ कर उप-स्थित सजनों को सुनाई गई। उसके बाद ग्रन्थी चौकी पर से उतरा ग्रौर श्रग्दास के लिये गुरु ग्रन्थ साहब के सामने हाथ बाँच कर खड़ा हो गया। दूसरों, ने भी उसका ग्रानुकरण किया। सब लोग हाथ जोड़कर खड़े हो गये। ग्रन्थी ने ग्राँखे बन्द कर लीं ग्रौर ग्रग्दास ग्रुह्म की।

"प्रथम भगवती सुमर के गुरुनानक लई ध्याय। फिर श्रोंगद गोरते श्रमर दास रामदासे हो सहाय..." इस तरह दसों गुरुश्रों को स्मरण किया गया श्रीर फिर—

"पंज प्यारे, चार साहबजादे ( साहब क्रजीत सिंह जी, साहब क्रुम्तार सिंह जी, साहब जोरावर सिंह जी, साहब फ्रतेह सिंह जी) चालीस मुन्ते, राहीदों, पुरीदों, सिदक रखने वाले सिक्खों की कमाई का ध्यान धर के खालसा जी बोलो वाह गुरू...।" अन्थी के वाह गुरू करने पर उपस्थित लोग 'वाह गुरू वाह गुरू' कहते। इधर उनकी आवाज गूँजती, उधर एक वहें नगाड़े पर चोट पड़ती। और नगाड़े की आवाज लोगों की आवाज से छुल मिलकर देर तक अतिध्वनित होती रहती। और दिलों पर एक आँतक सा छा जाता।... "जिन लोगों ने धर्म के लिये जानें बिलान दीं, चर्छड़ियां पर चढ़े, बदन के जोड़-जोड़ अलग कर दिये, जिनकी खालें खींच ली गईं, जिन्होंने खोपड़ियाँ उतरवाईं लेकिन अपना धर्म नहीं छोड़ा, जिन्होंने सूखी सिदक अपने सिर के पवित्र केशों को अपनी आखिरी साँसों तक निभाया, उन सिंहों और सिंहनियों की कमाई का ध्यान करके खालसा साहब बोलों जी वाह गुरू...।"

"वाह गुरू वाह गुरू...।"

"जिन गुर्मुखों ने गुम्हारों के सुधार की ख़ातिर श्री ननकाना साहब जी में ख्रौर श्री तरन तारन साहब के सिलसिले में ख्रपने जिस्मों पर तकलीफें सहीं, जीते जी तेल में डाल कर जला दिये गये, दहकती भट्टियों में भोंक दिये गये ख्रौर वह इस तरह शाहीद हो गये, उन गुरू की सूरत

रखने वाले सिक्खों की कमाई का सदका ! खालसा साहब बोलो जी वाह गुरू ...।"

"वाह-गुरू, वाह-गुरू।"

"..... जिन मात्रों, बीवियों ने ग्रपने बच्चों ग्रौर पतियों के हुकड़े हुकड़े करवा कर ग्रपनी भोलियों में डलवा लिए उनकी कमाई का सदका, खालसा साहब बोलों जी वाह गुरू...।"

"वाह गुरू, वाह गुरू ?" जम्बी ऋरदास के ऋन्त में—

(ए गुरू साहब!) हमको कोध, लोभ, मोह, और मद से बचाइए। आपके हुज् अमृत बेले का अरदास, अगर भ्ल चूक में कोई शब्द कम व बेश हो गया हो तो उसके लिए हम चुमा प्रार्थी हैं, सब के काम सँबारिय, गुरुनानक नाम चढ़ दी भलाँ, तेरे माने सकका भला।

सबने अनुककर महतक भूमि पर टेक दिये। ग्रंथी ने दिल ही दिल में कहा—'वाह गुरू सच्चे बादशाह से दिलों का हाल छिपा नहीं।' फिर खड़े होकर 'जो बोले सो निहाल, सत श्री श्रकाल' की तीन ललकारें लगाईं इसके बाद कड़ाह प्रसाद बाँट गया। धीरे-धीरे लोग प्रसाद हाथों में छिपाये व कटोरियों में लिये चले गये। कुछ ज़ास-खास लोग बैठे रहें। जब एकान्त हो गया तो उन्होंने प्रन्थी से कहा कि श्रगर प्रसाद बाक़ी हो तो लाया जाय। प्रन्थी ने प्रसाद उनको बाँट दिया। चेहरों को श्रपने चिकने हाथों से मलते हुए वह खाता लेकर बैठे। पीन धन्टे की बहस के बाद हिसाय साफ हुआ। प्रन्थी से कह दिया कि दूसरे दिन जाने के पहले वह चामियाँ सरदार वग्गासिंह नम्बरदार को दे जाय।

उनके चले जाने के बाद ग्रन्थी की सारी आशाएँ समाप्त हो गई। उसकी पत्नी ने घर का सामान बाँघना शुरू कर दिया। ग्रन्थों के दिल में अब तक कुछ कसक सी थी। वह उलम्मन से इघर-उघर चूमने लगा। अपने दोनों हाथ पीठ पर बाँधे, तालाब के किनारे खड़ा होकर वह उसके हरे जल को देखने लगा । उसके किनारे टूट-फूट गये थे। एक दो जगह से सीदियों की ईटें भी उखड़ गई थीं, काई जमी हुई थीं। उस तालाब में कोई नहाता न था। न जाने कब से उसमें बरसात का पानी जमा था। बयूल के पीले-पीले फूलों की तह सी जमी हुई थीं। श्रौर बरगद के बड़े-बड़े पीले रंग के पत्ते ध्वस्त जहाज के चूर-चूर तख्तों के दुकड़ों की तरह तैर रहे थे।

उसके पास पुरानी समाधि थी, जिसकी दीवारों पर जग ह-जगह से चूना उखड़ा हुआ था। उसकी दीवारों पर पुराने समय की रंगीन तस्वीरें भी थीं। कई जगह से रंग उखड़े हुए जरूर थे, लेकिन जहाँ कहीं भी बचे थे, ग्रांति चमकीले ग्रौर मनोहर दीखते थे, विशेषकर गुरू नानक साहव की छवि। चूच की छाँह में वाचा नानक जी बैठे थे। एक श्रोर भाई बाला और दूसरी ओर भाई मर्दाना। पेड़ की डाल से पिंजड़ा खटक रहा था , जिसमें एक लाल चांच वाला तीता साफ दिखाई दे रहा था । एकान्त स्थान पर सातवें गुरू साहब परमात्मा की याद में तल्लीन रहते थे । तीन-चार वर्ष पहले की बात थी कि एक सिक्ख इसी जगह में बैठकर नित्य मक्ति किया करता था। एक बार रात के वक्त यकायक समाधि दिव्यमान हो गई। कस्प-कस्पं दिखाई देने लगा। इतने में एक दिज्य मूर्ति प्रकट हुई...लेकिन वह सिक्ख दर्शन की ताव न ला सका। वह भागकर बाहर निकल स्त्राया । वह तुरन्त गूँगा हो गया । इसके बाद किसी ने उसे बोलते नहीं सुना। प्रन्थी ने समाधि का द्वार खोल कर उसके गीले फर्श पर ऋपना पाँव रखा श्रीर चुपचाप खड़ा हो गया इतने में उसकी पत्नी वहाँ श्राई श्रौर उसकी बेहाल सूरत देखकर कुछ। परेशान सी हो गई। वह ग्रपने साथ उसे लिवा ले गई।

त्राँगन में हाथ की चर्ली वाले कुएँ के चारों स्रोर बने हुए चौड़े चब्रुतरे पर नीले रंग की लम्बोतरी पगड़ियाँ बाँधे निहंग सिक्ल पत्थर के बड़े-से कुँडे में ठराडई घोट रहे थे। पगड़ियों पर लोहे के चक्र, गले

में लोह मिएकों की माला, लम्बे-लम्बे लबादे...। लोग पारी पारी बादाम चारों में वे कालो मिर्चे और थोड़ी सी रंग वाली ठएडई की घुटाई कर रहे थे। एक अपने दोनों हाथों और पैरों से कूँडे को दोनों तरफ से जक्कड़े हुए था, और दूसरा घोटने का एक लम्बा चौड़ा डंडा, जो नीचे से कम मोटा और ऊपर से बहुत ज्यादा मोटा था, हाथों में लिए घुमा रहा था। डएडे के ऊपर घुंचरू बँधे थे जो छन छन बोल रहे थे। अन्थी कुछ देर तक उनको देखता रहा।

सूर्यदेव ग्रस्ताचल को जा चुके थे। हवा बन्द थी। उसकी पत्नी दूध दुह कर ग्रन्दर जारही थी। उसने नित्य की तरह ग्रपनी चारपाई बाड़े के पास डाल दी थी। वह जूते उतार दोनों घुटनों पर कुहनियाँ टेक चारपाई पर जा बैठा।

कौवों के भुगड़ के भुगड़ काँव-काँव करते गाँव का चक्कर लगा रहे थे। छोटी-सी नहर की ऊँची मेड़ चकर लगाती ह्नितिज में गुम हो गई। दूर कुछ ऊँट बिना नकेल के इधर-उधर घूम रहे थे।

प्रनथी खोई-खोई नज्रों से अस्ताचल की ग्रोर इस प्रकार देख रहा था मानो वह किसी की प्रतीचा कर रहा हो। जैसे आकाश से कोई तेजस्वी मूर्ति प्रकट होने वाली थी...। अँघेरा बढ़ रहा था। पूर्ण चन्द्रमा ऊपर उठ रहा था। इतने में बनता सिंह कन्धे पर फावड़ा रखे ग्रा निकला। बनता सिंह किसी औरत को मगाने के अभियोग में डेढ़ वर्ष का कठिन कारावास भुगत कर कल ही ग्रपने गाँव वापस ग्राया था। जेल की विपदाओं का उस पर कुछ भी प्रभाव नहीं हुग्रा था। वह वैसा ही हहा-कहा बना था। जब उसे सजा हुई थी उस समय ग्रन्थी गुरुद्दारे में ग्राया ही था। पास पहुँच कर बनता सिंह ने उच्च स्वर में 'सत श्री ग्रकाल' की हाँक लगाई ग्रौर चारपाई पर बैठ गया। उसके फावड़े से गाड़ी गाड़ी कीचड़ चमक रही थी।

इधर-उधर की बातों के बाद उसने पूछा-"ग्रन्थी जी सुना है ग्रापके

खिलाफ कुछ भगड़ा किया गया है। मैं तो कल रात वापस आया था। आज मुबह से मैं चक नम्बर १५६ में मामा से मिलने चला गया था। अब मैं सीधा खेतों की ओर चला आया। आखिर माजरा क्या है?"

बनता सिंह की न सिर्फ़ श्रापने गाँव में धाक थी, बल्कि इलाक़ मर में लोग उससे भय खाते थे। जब प्रन्थी ने बताया कि उसके बारे में श्राखिरी फैसला भी कर दिया गया था तो वह फुँमला कर उठ खड़ा हुश्रा—"किसकी मजाल है कि तुमको यहाँ से निकाले प्रन्थी जी १ तुम इसी जगह रहोगे श्रीर डंके की चोट रहोगे। मैं देखूँगा कौन माई का लाल तुमको यहाँ से निकालने श्राता है १"

यह सुनकर प्रन्थी ने, जो द्राव तक निर्जीव सा बैठा था, श्राँखें भूपकाई ! उसकी भीं हैं काँपीं द्यौर वह दीन स्वर में बोला—''ब्रौर सर्वार बनता सिंह, वाह गुरू जानता है कि मैंने लाजो को छुवा तक नहीं।"

सरदार बग्गा सिंह के दो श्रादमी उधर से निकलते हुए यह बातें सुन रहे थे। बनता सिंह उनकी सुनाकर ऊँचे स्वर में ललकार कर बोला—"प्रन्थी जी, तुम यह क्यों कहते हो कि तुमने उसका हाथ नहीं पकड़ा! तुम हज़ार बार उसका हाथ पकड़ सकते हो। मैं बग्गा सिंह को भी देख लूँगा। बड़ा नम्बरदार बना फिरता है। श्रीर जिन लोगों ने तुम्हारे खिलाफ़ पंचायत में हिस्सा लिया था, उनमें से एक एक से निपट लूँगा…।" श्रापनी भरपूर श्रावाज में उसने मोटी-मोटी गालियाँ भी सुनाई। यह उसके बाप का घर नहीं है। वह गुरू का घर है। यहाँ किसी ग्रीब के साथ भी श्रान्थाय नहीं हो सकता!

यह ख़बर गाँव में आग की तरह फैल ग । सब लोग लाजो को गालियाँ देने लगे—"हरामजादी ने मुफ्त में बेचारे प्रन्थी पर इलजाम लगा दिया।"



# अलबेले

यों तो मेरी उम्र उस वक्त तेरह-चौदह वर्ष की थी लेकिन में इतना दुवला-पतला ग्रौर मुनहनी सा लड़का था कि मुश्किल से ग्यारह-बारह वर्ष का दिखाई देता था।

उन दिनों मैं शहर के एक स्कूल में नवीं कच्चा में पढ़ता था श्रीर वोर्डिङ्ग में रहता था। वह बोर्डिङ्ग तो नाम मात्र का था। उसके लिए उपयुक्त नाम घोड़ों का अस्तवल हो सकता है। शहर के बाहर एक कच्ची सड़क के किनारे एक बड़ी सी इमारत थी जिसके हर्द गिर्द कुछ जगह छोड़ दी गई थी। इमारत चौकोर थी। अन्दर एक बड़ा सा मैदान था जिस पर घास उगी हुई थी और उसके एक सिरे से दूसरे सिरे तक

चरामदा चला गया थां। फर्श की ईटें जगह जगह से उखड़ चुकी थीं ग्रीर उनमें से गर्द निकल-निकल कर चलने वालों के कदमों के साथ उड़ा करती थी। कमरे बहुत बड़े-बड़े थे ग्रीर एक-एक में कई-कई लड़के रहते थे। हर लड़के के लिए एक ग्रालमारी, एक चारणई. एक क़रसी ग्रीर ग्राथी मेज का प्रबन्ध था।

रसोईयर का कुल प्रबन्ध लड़कों के ज़िम्मे था। रसोई में तीन नौकर थे—एक रसोइया और दो नौकर खाना खिलाने और अन्य कामों के लिए।

रसोईवर में कोई चीज मोल न ख्राती थी। सब के सब जाटों के लड़के थे। घी ख्रीर गेहूँ सब के घर से ख्रा जाते थे ख्रीर जरूरत की ख्रन्य चीजें जैसे ई धन, सब्जी, तरकारी मारघाड़ से प्राप्त की जाती थीं। मोर्डिंग के पीछे एक ख्रराईं (पंजाब की सब्जी-तरकारी बोने ख्रीर बेचने वाली जाति) के खेत थे। उस ख्रराईं की एक तरहदार लड़की ख्रीर दो सजीले लड़के थे। दिन भर लड़के होस्टल की छुत पर बैठे लड़की को इशारे करते ख्रीर रात के समय खेतों से ताजी तरकारियाँ उठा लाते! ख्रराईं ने होस्टल के सुपरिन्टेन्डेन्ट से लड़कों की शिकायतें की लेकिन बेचारा सूजे हुए चेहरे वाला सुपरिन्टेन्डेन्ट ख्रपनी दादी खुजला कर रह जाता। वह खुद लाचार था। ख्रराईं को सममा-बुमा कर वापस भेज देता ख्रीर लड़कों से सिर्फ जवानी पूछताछ करता। सुपरिन्टेन्डेन्ट ने ख्रराईं की शिकायत पर लड़कों से बीसों बार पूछा होगा पर लड़कों पर इसका कभी कोई प्रभाव न पड़ा ख्रीर यह लूट जरी रही।

सुपरिन्टेन्डेन्ट पक्का सिक्ल था। खूब लम्बी लहराती हुई दादी, छोटी पीले रंग की पगड़ी पर उसका यह बड़ा नीले रंग का साफ़ा, तक्क पायजामा, दीला ढाला कोट। उसका ईजारबन्द उससे कभी नहीं संमलता था, सदा नीचे लटकता रहता। नित्य बिना नागा गुम्हारे जा कर पाठ करता वह लड़कों की इस ज्यादती के सख्त खिलाफ़ था। लेकिन

होस्टल में उसकी हैसियत बस नाम ही के लिए थी। बेचारे की बीवी ग्रीर बच्चे सदैव बीमार रहते। उनकी सेवा-सुश्चृषा से छुट्टी पाता तो कमी-कमार होस्टल में ग्रा निकलता। यो दिखलाने के लिये लड़के उसका बहुत ग्रादर करते थे, लेकिन वास्तव में उन्हें उसकी कोई परवाह न थी।

जब वह होस्टल में प्रवेश करता तो प्रायः रसोईवर का एक नौकर उसके साथ होता। बरामदे में दाखिल होते ही वह रुक जाता श्रौर टाँगें फैलाकर खड़ा हो जाता। उसका मुँह श्रौर श्राँखें हमेशा सूजी रहती थीं श्रौर श्राँखों से हमेशा पानी बहता रहता जिसे वह भाड़ननुमा रूमाल से कभी-कभी साफ कर लिया करता था। श्राते ही वह एक हलकी सी भूठी खाँसी खाँसता ताकि सबको उसके श्राने की खबर हो जाय। सबसे पहले वह नौकर से बात शुरू करता। किसी मामूली सी बात पर जबाब तलव किया जाने लगता—हूँ...क्यों बे सुश्रर! यह पानी तूने गिराया... श्रवे रास्ते ही में...हैं है... किसी ने भी गिराया, तूने इसे साफ क्यों नहीं कर दिया भाड़ से...।"

इतने मं लड़कों को भी मालूम हो जाता कि हजरत आ गए हैं। सबसे पहले बगदाद सिंह, जिसका चेहरा चुक्कन्दर की तरह सुर्ख था, हाथी की तरह भूमता हुआ आगे बढ़ता और बड़ी गम्भीरता से हाथ जोड़ कर कहता—''सत् श्री अकाल, सरदार जी!"

"सत् श्री अकाल !" फिर सुपरिन्टेन्डेन्ट का पहला सवाल यह होता---"क्यों सब ठीक ठाक है न ?"

बगदाद सिंह यह बड़ा हाथ धप मारने के ऋन्दाज में उठाकर कहता—"साव ठीक ठाक है जी।'

सुपरिन्टेन्डेन्ट कुछ चुप रहता। अव और लड़के भी जमा होने शुरू हो जाते।

सुपरिन्टेन्डेन्ट के शरीर की बनावट भी अजीब सी थो। मोटा ती

वह था ही लेकिन व्यायाम न करने के कारण ऊपर की धड़ श्रीर टॉगें हलकी थीं श्रीर पेट खूब फूला हुआ। अतः जब वह इतमीनान के साथ बड़ी गम्भीर श्राकृति बनाकर कोट को पेट के आगे से हटाकर दोनों हाथों को कूल्हों पर रखकर खड़ा होता तो उसका फूला हुआ पेट श्रीर भी श्रागे को बढ़ जाता और वह किसी सँपेरे की बीन की तरह दिखाई पड़ने लगता। उसे देख कर लड़कों को हँसी आ जाती। सुपरिन्टेन्डेन्ट दिल में समकता था कि लड़के उसी पर हँस रहे हैं। श्रातः वह जरा बेतकल्लुफ होकर बनावटी गुस्से से पूछता—''बगदाद सिंह, तुम बड़े शैतान हो गए हो ?"

"जी मैं !" बरादाद सिंह श्रापनी मोटी सी उंगली श्रापनी छाती पर रख कर श्राष्ट्रचर्य प्रकट करते हुए कहता—"वाह गुरू, वाहगुरू...मैं तो श्रापका दास हूँ जी। कहिथे तो श्रामी सिर उतार कर रख दूँ चरणों में श्रापके।"

इस बात पर लड़के खूब ठहाके लगाकर हँसते। कोई लड़का किसी की ग्रोट में होकर कहता—"किसका सिर ?"

श्रव बरादाद सिंह नथुने फुलाकर ललकारता—"ग्रोथ श्रोय...बन्चू, सरदार जी खड़े हैं, नहीं तो ग्रभी तुभे सुर्गी बना देता पकड़ कर।"

इसके बाद सुपरिन्टेन्डेन्ट इसी तरह बातें करता हुन्ना होस्टल में लड्ड् की तरह धूम जाता त्रीर बाहर निकलने से पहले एक बार लड़कों को त्रीर चेतावनी देता—"श्रच्छा, श्रव सब्ज़ी बाजार से आती है न १"

"जी, निलकुल... त्राव तो हम रोज़ का हिसाब भी लिख कर रखते हैं, देखियेगा ?"

यह अच्छी तरह जानता था कि ये लोग भूठ बोल रहे हैं लेकिन वह इसी बात से सन्तुष्ट था कि लड़के कम से कम उसकी इज्ज़त तो एल लेते हैं। वह इसी बात पर अपनी खैर मनाता, हिसाब बगैरह देखें बिना 'अच्छा अच्छा कहता हुआ चला जाता।

उसके जाने के बाद लखा सिंह पानी के गिलास में से कुछ बूँदें

श्राँखों पर टपका लेता श्रौर कुल्हों पर हाथ रखकर खड़ा हो जाता। फिर तौलिये से श्राँखें पोछता हुश्रा कहता—"ऊँहूँ, ऊँहूँ विवाद सिंह! सब ठीक ठाक है न ?"

मैं केवल श्रायु में ही छोटा नहीं था बल्कि दुवला-पतला भी था, इसलिये वे सब मुफे मेरे श्रमली नाम से पुकारने के बजाय बकरी सिंह के नाम से सम्बोधित करते थे। बकरी सिंह नाम तो बहुत बुरा था लेकिन थोड़े ही दिनों बाद यह नाम मेरे लिए श्रजनवी या श्रपरिचित नहीं रहा। श्रब सिर्फ मेरी हँसी उड़ाने के लिए यह नाम नहीं लिया जाना था बिल्क बहुत गम्भीर वार्तालाप में भी मुफे इसी नाम से सम्बोधिन किया जाना था। मैं कमजोर था श्रीर वे लोग सरकारी साँडों की तरह पले हुए थे, लेकिन वे मुफ पर हाथ उठाना गऊ हत्या के समान पाप समकते थे। यहाँ तक कि श्रगर कभी मैं क्रोध में श्राकर उनमें में किसी को लड़न के लिए ललकारता भी तो वह मेरे सामने हथियार डाल देता। में श्रपनी दुर्बलता के कारण उन लोगों के बीच बिलकुल सुरिच्चित था।

एक बार गरिमयों के मौसम में सिक्खों के किसी त्योहार की हफ्ते भर की छुट्टियाँ हुई। करीब करीब सभी लड़के बोरिया-बिस्तर बाँधकर श्रपने श्रपने घरों को चल दिये। मैं मेहनती लड़का था। पहले तो होस्टल ही में छुट्टियाँ विताने का निश्चय किया लेकिन फिर इतने बड़े होस्टल में श्रकेले जी न लगा। न वह ताज़ी-ताजी सिब्जयाँ, न वह चहल-पहल रात के समय श्रॅंधेरे बरामदों में भुतने नाचते दिखाई देते थे। श्रतएव दो ही दिन बाद मैंने भी श्रपने गाँव जाने की ठानी।

गाँव में मेरी माँ, बुझा झौर दो बड़े भाई रहते थे। मैंने मेले कपड़ां और कुछ किताबों की गठरी बाँधी और साइकिल के पीछे केरियर पर रखकर रस्सी से उसे बाँध दिया। पञ्चीस मील का सफ्रं था—पम्प, सुलेशन, कैची आदि जुरूरी सामान चमड़े के छोटे थैले में रख लिया। दोपहर के भोजन के बाद थोड़ी देर खाराम किया और जब धूप की तेज़ी कुछ कम हुई तो चल दिया।

उस समय पाँच बने थे। ख़याल था कि स्रधिक से क्रधिक चार धन्टे में गाँव पहुँच जाऊँगा।

X X X

धूप हलकी पड़ चुकी थी, लेकिन गमां द्राव भी काफी थी। सड़क बड़े-बड़े खेतों में से हांकर जाती थी। रास्ते में सड़क से ज़रा परे हटकर जगह-जगह रहट चलते दिखाई दे रहे थे। कुद्यां का साफ़ स्वच्छ पानी भीलों में गिरता हुद्या त्राँखों को कितना मला मालूम होता था। इन पर उन कुद्यां के हर्द-गिर्द केंची से कतरी हुई दाहियों वाले किसान मोटी सूती कपड़े की लुंगियाँ बाँधे बड़े सुकर में हुक्के गुड़गुड़ाते दिखाई पड़ते थे। जब कुद्यां पर काम करने वाली लड़िक्याँ क्षीर खितां में मटक-मटक कर इधर-उधर चलती थीं तो उनकी लम्बी-लम्बी चोटियाँ नागिनों की तरह बल खा-खाकर लहराती थीं। बैलों की टाँगों में घुस-घुसकर भूकने वाले कुत्ते खलग शोर मचा रहे थे और द्रापनी मैली-कुत्त्वेली चुंदरियों में स्क्षे हुए गांवर के टुकड़े जमा करने वाली बालिकार्ये कभी-कभी श्रपना काम खोड़कर गिलहरियों की तरह मेरी श्रोर देखने लगती थीं।

अभी मेंने चार-पाँच मील का ही फ़ासला तय किया था कि सायकिल पंचर हो गई। मेंने सड़क से हटकर पानी की तलाश में इधर- उधर निगाह दौड़ाई। रहट बहुत पीछे रह गया था, इसिलए एक पोखरे के किनारे सायिकल की लिटा दिया। पंचर बहुत बड़ा था। डबल पंचर लगाने में बीस-पचीस मिनट लग गये। दो मील चल कर सायिकल की हवा फिर निकल गई। अब की पानी भी नज़दीक नहीं था। इसिलए सायिकल लुढ़कात हुये आध मील के करीब पैदल चलना पड़ा। सड़क के किनारे एक गाँव था। वहाँ एक सायिकल वाले की दूकान भी थी। मेंने सायिकल उसे सीप दी। मेरा लगाया हुआ पंचर उखड़ गया था। उसे नये सिरे

से ठीक किया गया। इसी गड़बड में सूरज चितिज तक जा पहुँचा श्रीर मैंने अभी आधा सफ़र भी तय नहीं किया था। पंचर लग जाने पर मैंने सायिकत खब तेज चला दी । रास्ते में मुर्गियाँ कुड़कुड़ाती श्रौर फड़फड़ाती हुई इधर-उधर भागतीं ग्रीर कुछ दीवारों पर जा बैठतीं। गाँव से बाहर निकला तो सर्य प्रायः ग्रस्त हो चका था। खुली हवा थी। घुन्नाँ, गदे, शहर की पक्को दीवारों की तपन ग्रादि का नाम तक न था। कुछ दर तक मैंने खूब जोर से सायिकल चलाई, यहाँ तक कि मैं हाँफ गया। प्यास भी लगने लगी। खुले ब्राकाश के नीचे जहाँ तक नजर जाती थी. खेत ही खेत फैले हुए थे। कहीं-कहीं बबूल के पेड़ मुंडों में एक दूसरे के पास खड़े हए ऐसे दिखाई देते थे जैसे कानाफ़सी कर रहे हों। खेतों की पगडिन्डयाँ कैंचियों की भाँति एक दूसरे को काटती हुई दर तक चली गई थीं । दूर चितिज में कोई व्यक्ति घोड़े पर सवार उसे सरपट दौड़ाये चला जा रहा था, इतनी तेजी से जैसे न तो उसका बोड़ा कभी थकेगा ऋौर न जमीन ही कहीं पर खत्म होगी । बस इसी तीज्ञ गति से ज्यनन्त काला तक दौडता चला जायगा श्रौर वह स्वयं इसी जोश श्रौर उत्साह से रहती द्वनिया तक इस पर बैठा रहेगा। ऊँचे उडने वाले पिंचयों की ट्रकड़ियाँ आकारा की ऋोर उडती चली गईं. यहाँ तक कि वे पची विलक्ष छोटे-छोटे विनद-मात्र दिखाई पडने लगे । ग्राकाश का विस्तार ग्रासीम था श्रीर पित्तयों की उड़ान शक्ति का कोई श्रन्दाज न था। वायु के फांके चलने लगे त्रीर मीलों तक फैले हुए खेतों में उगे हुए पौदे एक उख को भुके जाते थे, मानो कोई दैवी राग सुनकर एक साथ सिर धुन रहे हों। वास्तव में वह कोई स्वर्गीय राग ही था जिसे सनकर सवार ने महजोर घोड़े को सरपट दौड़ा दिया, पच्ची तीर की सी तेजी के साथ ग्राकाश मंडल में उड़ने लगे और खेतों में पौदे मस्ती में आकर कमने लगे।

मौसम ऋति सुन्दर था। मैंने रूँ-हूँ करते हुये रहट के पास सायकिल रोक ली, नहाने को जी चाह रहा था, ऋतः मैं कपड़े उतार कर ऋोल् (कुएँ का चौबच्चा) में जा घुसा। बैलों की ग्रांखों पर पिट्टिया वैंघी हुई थीं। वे सिर हिलाते ग्रीर मुँह से माग उड़ाते तेज-तेज कदम उठानें लगे। रहट गीत गाने लगा ग्रीर पानी इस तेजी से बाहर गिरने लगा जैसे कुएँ में पड़े-पड़े उसका दम घुट गया हो। ठंडा पानी मेरे मुलसे हुए शरीर पर गिरा तो मैंने ग्रत्यन्त तरावट का ग्रानुभव किया ग्रीर सँभल कर माल के नीचे ही बैठ गया। पानी, मलमल की सी बारीक चादर में से ग्राकाश, घरती, पेड़ पौदे, कुलेलें करते हुए बळुड़े, कलावाजियाँ लगाते हुए मेंटक, सब मेरी खुशी में बरावर का भाग ले रहे थे।

मैं बहुत देर तक नहाता रहा । बड़ी-बड़ी मूँछों वाला किसान, जिसकी ढीली-ढाली पगड़ी में से कानों के पीछे चिकने पट्टे दिखाई पड़ रहे थे, हुक्का गुड़गुड़ाता हुआ उधर आ निकला । मुफे खुश देखकर मुस्कराने लगा । त्रोलू में से निकलने को मन न चाहता था, लेकिन स्यांस्त हो चुका था और चितिज के निकट धुएँ की एक काली लकीर सी खिंच गई थी । आतएव मैं ओलू में से निकला और गीले शरीर पर कपड़े पहन कर फिर अपनी यात्रा पर चल पड़ा ।

त्राव मैंने सोचा कि रास्ते में किसी जगह पर मी नहीं मकूँगा। मेंने सायिकत पहले से भी तेज चला दी। पक्की सड़क का लगभग त्राठ मील का रास्ता रह गया था त्रीर खेतों का रास्ता ग्रमी करीव-करीव इतना ही था। मेरी सायिकत हवा से बातें करने लगी। त्राघे रास्ते पर एक गाँव था, जिसे किला काहनसिंह कहते थे। ग्रच्छा ख़ासा चड़ा गाँव था। पाँच-सात पक्के मकान भी थे। एक छोटा स्कूल भी था। पहले सोचा कि ग्राज की रात इसी गाँव ही में बिता दूँ, लेकिन फिर घर का ख्याल न्नाया। हमारे घर के न्नाया में एक छोटा-सा कुँगाँ था, जिस पर एक लोहे का डोल पड़ा रहता था। सोचा कुएँ पर डोल भर-भर कर नहाऊँगा। माँ कई-कई तहों वाले पराठे पकायेगी ग्रीर में मजे ले लेकर खाऊँगा। यदि रास्ते में कोई खास स्कावट पैदा न हो तो मेरे

लिए घर पहुँचना श्रसम्भव न था। इसिलये मैंने फिर जोर-जोर से पैडिल चलाना शुरू किया। जब मैं बिजली की तरह गाँव में से होकर गुज़रा तो गाँव के नंग-धड़क्क फूले हुए पेटों वाले बच्चे "श्रोथे-श्रोये" का शोर मचाते मेरे पीछें भागे। कूड़ों के देर सूँघते हुए काले श्रीर मिटियाले कुत्ते भी हुमें हिलाते हुए मेरे पीछें-पीछें हो लिए। कुत्तों को बेतरह भूँकते देखकर मसजिद के कच्चे चबूतरे पर बैठे हुए एक नौजवान ने गुस्से में स्नाकर हुक्के की नली खींच मारी। गाँव से बाहर एक मुदी बैल पर मिप्टें मारने वाले बड़े-बड़े गिद्ध शोर-गुल सुनकर चौंक पड़े श्रीर श्रपने लम्बे-लम्बे पर फड़फड़ाते श्रीर उचकते हुए ज्रा परे हट गये। उधर मैं किसी भागे हुए डाक् की तरह बड़ी तेजी से चला जा रहा था। यहाँ तक कि लड़के श्रीर कुत्ते बहुत पीछे रह गये श्रोर उनका शोर भी मिद्धम पड़ गया।

श्राग सुनसान सड़क के दोनों किनारों पर पास-पास ख़ाई हुए शीशम के पेड़ों का सिलसिला ग्रुरू हो गया । उनकी नीचे गिरी हुई सूखी पत्तियाँ मेरी साइकिल के पहियों के नीचे चर्रमर्र करती हुई घूमने लगीं। गाँव के बच्चों की तरह वे दूर तक तेजी से चक्कर खाती हुई मेरा पीछा करतीं श्रीर फिर जैसे दम फूल जाने पर वे हँसकर एक जगह बैठकर रह जातीं।

श्रव एक तारा भी दिखाई देने लगा था श्रौर स्वच्छ श्राकाश पर पीला-पीला चाँद किसी तालाव में तैरती हुई काँसे की थाली की भाँति दिखाई पड़ता।

दार्थे-वार्थे दूर तक ऊबड़-खाबड़ भूमि चली गई थी। काँटेदार भाड़ियों के सिलिसिले शुरू हो गये थे। यहाँ पर मेड़ियों का भी खतरा था। ग्रागर मेड़ियों का कोई गोल ग्रा घेरे तो फिर! मैं भयभीत होकर सायिकल ग्रौर भी तेजी के साथ दौड़ाने लगा। धीरे-धीरे सूर्यास्त के बाद दिन की रही-सही रोशनी भी खत्म हो गई। सिर्फ चाँद की फीकी

### ग्रलबेले

चाँदनी छिटकी हुई थी। शीशम के पेड़ों के कारण सड़क पर और भी अधिक गहरा श्रंधकार छा गया था। मैंने इससे पहले केवल दो बार यह सफर अकेला किया था, लेकिन दोनों बार दिन ही में सफ़र खतम हो गया था। मेरा ख्याल था कि दो-दाई मील पर काक़्शाह के मक्तवरें के पास से सड़क छोड़कर अपने गाँव की तरफ़ धूम जाऊँगा। दिल को फुछ संतीप हो चला था कि कम से कम सड़क का सफ़र तो खत्म होने वाला था।

में ऋषाधुंध चला जा रहा था कि ऋगो सड़क ककी हुई मालूम हुई जैसे नये सिरे से बनाई जा रही हो। मैंने सायिकत धीमी कर दी। नज़दीक पहुँच कर पता चला कि सचमुच सड़क बन रही है। सारी सड़क उखड़ी पड़ी थी। लाचार हो सायिकत से उतरकर ऊबड़-खाबड़ ज़मीन पर पैदल चलना पड़ा। यह एक नई आफ़त ऋग यही थी।

रास्त मं सड़क के किनारे-किनारे पठान मज़दूरों की भोपड़ियाँ बनी हुई थां। हम लाग उन्हें 'राशे' कहा करते थे। यह 'राशे' खूब मोटे-ताजे और भयानक सूरत वाले होते थे। मैंने सुना था कि यह लोग बच्चां को बोरियों में बन्द करके काबुल ले जाते हैं और आठ-दस रुपये में बेच डालते हैं। मैं मन ही मन भयभीत भी था, लेकिन ज़ाहिर में बड़े हीसलें के साथ बढ़ता चला गया। आग के लपकते हुए शोलों की कॉपती हुई रोशनी में 'राशां' के भयानक चेहरे, उलमे हुए बाल और चमकती हुई सुर्ख आंखें साफ दिखाई पड़ रही थीं।

बड़े मुश्किल के यह रास्ता भी ख़त्म हुआ और मैं फिर सायिकिल पर सवार हो गया। रात भींग चुकी थी। इस समय तक पहले तो मुक्ते गाँव पहुँच जाना चाहिए था या गाँव के पास ही होना चाहिए था। अब सिवाय चलने के और कोई रास्ता न था। काक्शाह के मक्तबरे के पास पहुँच कर मैं पगडंडी पर हो लिया।

तङ्ग रास्ता साफ़ दिखाई नहीं देता था, इसलिए मुफे सायिकल से उतरना पड़ा। खेता में पानी था। मुफे एक निशानी याद थी। फ़र्लाङ्ग के क़रीब एक पुराना रहट था जो आजकल सुनसान पड़ा था। मैंने पहले उसी का रुख़ किया। जब पानी से बचता हुआ कुएँ तक पहुँचा तो देखा कि आगे पानी और भी अधिक दूर तक फैला हुआ है। पगर्डं डी पानी में ही गुम हो गई थी। मैं पानी से बचता हुआ स्खे रास्ते से चलता गया। दो-ढाई फ़र्लाङ्ग चलने के बाद पानी कम हुआ और मैं अयाँजन गाँव की तरफ़ चल दिया। लेकिन बहुत दूर निकल जाने के बाद भी गाँव का नाम निशान तक दिखाई न दिया।

धुँघली चाँदनी में मैं चलता ही गया। ग्राय मुक्ते संदेह हुन्ना कि कहीं में गलत रास्ते पर तो नहीं जा रहा हूँ। हर तरफ़ निगाह दौड़ाई। खेतां ग्रार वृद्धां के सिवा कुळ दिखाई न देता था। कुछ खेतों में कोई फ़सल भी खड़ी नजर त्रा जाती थी। मैं कुळ परेशान सा हो गया, यो ही ग्रान्था- धुन्ध चलता गया। एकाएक मुक्ते दूर से गर्द उड़ती हुई दिखाई दी। मैं ठिठक कर रक गया।

थोड़ी देर बाद मालूम हुन्ना कि कोई तिर्छी-बाँका साँडनी सवार चला जा रहा है। सुनसान जगह, फीकी चाँदनी, फीगुरों का शोर...पहले खयाल द्याया कि इसे त्रावाब देकर रास्ता पूछ लूँ, लेकिन उसकी वेश-भूषा कुछ ऐसी थी कि मैंने उसे बुलाना उचित न समभा, बल्कि सोच में पड़ गया कि न जाने यह कौन है, काश! वह मुफे देखे बिना त्रागे निकल जाय। मैं सिमटकर कीकर के एक छोटे से पेड़ के नीचे जा खड़ा हुन्ना, लेकिन उस पेड़ की छाया में भी त्रादमी किसी की नज़रों से त्रोभल नहीं रह सकता था।..... उसके हाथ में एक लम्बे हत्ये की कुल्हाड़ी देखकर त्रोर भी दम सूख गया।

वह अपने रास्ते पर चला जा रहा था। मेरी तबीयत कुछ, सँमलने लगी।... एकाएक उसने रुख बदला और मेरी ओर मुड़ा। मैंने सोचा

## ग्रलबेले

शायद वह इस रास्ते से सीधा आगे को चला जायमा; अतएव में जरा पहलू बदलकर खड़ा होगया। लेकिन वह सीधा मेरी ख्रोर आया और पास पहुँच कर उसने साँडिनी रोक ली। मैंने उसकी ओर देखा। ऐसा लगता था जैसे ऊँट के ऊपर एक और ऊँट वैठा हुआ है। वह एक लम्बा-तड़ंगा इकहरे शरीर का मजबूत सिक्ख था। अंडाकार चेहरा, दाढ़ी छोटी-छोटी और छिदरी सी, मवें धनी, नाक जैसे बतख की चोंच, नथुने फूले हुए, आँखे अंदर को घँसी हुई किन्तु चमकदार, ठोड़ी ठीक बीच में से दबी हुई, कानों में सुनहरे बाले और गले में सोने का चमकता हुआ कंठा।

वह थोड़ी देर तक मुँह खोले मेरी श्रोर देखता रहा । फिर उसने वैठी हुई श्रात्राज में पूछा—''कहो भाई लौंडे, कौन हो तुम ?''

मेरा मन डूब गया। "जी, मैं गाव को जा रहा हूँ।"

"कहाँ से ग्रा रहे हो ?"

"शहर से।"

"शहर से आ रहे हो ?"

"जी...शहर से ।"

"क्या करते हो वहाँ ?"

"जी, पढ़ता हूँ ''

"क्या पढते हो ?"

मैं इस सवाल पर चकराया—"किताबे पढ़ना हूँ जी !"

उसने सायिकत के पीछे वैंधी हुई गठरी को कुल्हाड़ी के हत्थे से खोदते हुये पूछा----"इसमें क्या है ?"

"जी, इसमें मैले कपड़े हैं.....क्या जी, खोलकर दिखाऊँ ?" वह हँस पड़ा—"रहने दो ।"

मेरी जान में जान आई। उसने साँडिनी की नकेल खींची और चलने ही लगा था कि फिर एक गया—"कहाँ जा रहे हो ?"

[ 33 ]

"जी, श्रपने गाँव की।" "कौन गाँव ?" "जी, श्रकालगढ़।" "श्रकालगढ़ ?" "जी!"

वह थोड़ा हका, फिर क्रपने कल्लां के नीचे ज्वान फेरते हुए बोला—"इधर आश्रो।"

मेंने डरते-डरते उसके पास गया। उसने कहा—"सायकिल नीचे रख दो।"

मेंने सायितिल जमीन पर डाल दी। उसने हाथ बढ़ा कर कहा— "मेर। हाथ पकड़ कर मेरे पीछे बैठ जायों।"

मं डरा, लेकिन इसके सिवा कोई रास्ता न था। बड़ी मुश्किल से उसके पीछे ब्राइकर बैठ गया। उसने ऊपर बैठे-बैठे कुल्हाड़ी में सायकिल ब्राइकर ऊपर खोंच ली, नकेल को मत्का दिया ब्रौर साँडिनी ब्रापनी बेटंगी चाल से रवाना हो गई।

मैंने उसकी पसीने में तर गरदन पर नजर जमा दी। उसके सर के बाल इतने खींचकर इंधे हुए थे कि उसकी गुद्दी पर बालों की जड़ों का माँस ऊपर उमड़ ग्राया था, जैसे नन्हीं-नन्हीं फ़ुन्सियाँ निकल ग्राई हो। उसने फिर ग्रपनी बैठी हुई भारी ग्रावाज में पूछा—''तुम्हें नहीं मालूम कि तुम्हारा गाँव किथर को है, क्या तुम समक्तते हो कि ग्राब तुम ग्रपने गाँव ही को जा रहे थे?"

"जी, में रास्ता भूल गया था। मैं पहले शहर से सिफ दो बार ही आया हूँ, लेकिन दिन ही में घर पहुँच जाता था। लेकिन आज रात हो गई और फिर रास्ते में पानी भी भरा था, इसलिये मुक्ते रास्ते का पता ही नहीं चला।"

इस पर उसने श्रपने निर्माक स्वर में टहाका लगाया। फिर वोला—"लड़के, श्रगर तुम रात भर भी इस तरह चलते रहते तो भी श्रपने गाँव न पहुँच पाते.....। तुम्हारे जैसे छोटे लड़कों को रात के वक्त सुनसान जगहों में कभी भी घूमना न चाहिए।"

इसके बाद धीरे-धीरे वह खूब मजे की बातें करने लगा । पहले तो में मन ही मन बहुत डरा। मैंने सुना था कि कुळ लोग लड़कों के सिरों में से मोमियायी निकाल लिया करते हैं, सिर मूँड़कर चोटी में एक कील ठांक देते हैं और टाँगें बाँघकर पेड़ से लटकाकर सिर के नीचे आग जलाकर एक कढ़ाई रख देते हैं। आग की गर्मा से सिर की चबा पिघल जाती है और मोमियायी कील के सिरे से बूँद बूँद करके कढ़ाई में टपकती रहती है। यहाँ तक कि सिर की सारी मोमियायी निकल जाती है और लड़का मर जाता है.....। साँडिनी सवार की आकृति तो अवश्य ही बड़ी मयानक थी, किन्दु उसकी बातों से किसी प्रकार के खतरे की गंध न आती थी। यह बड़ा हँसमुख, खुश मिजाज़ आदमी था।

कहने लगा कि तुम्हारे घर में किसी ने दिन के समय कहानी कही होगी, तभी तो तुम रास्ता भूल गये।

मैं साँडिनी के कोहान से फिसला जाता था, इसलिए मैं उसकी कमर से लिपट गया। उसकी गाढ़े की कमीज पसीने में तर हो रही थी। बरालों से हलकी-हलकी गंध भी आ रही थी। बरालों के घने थाल पसीने में तर होकर चिपक गये थे। उसके जुड़े पर वँधी हुई जाली के नीचे लटकते हुए फुदने मेरे नथुनों ख्रीर ख्राँखों में घुसे जाते थे। मुक्ते पहले कभी ऊँट की सवारी करने का संयोग न हुद्या था। इतनी कल्टदायक सवारी थी कि बदन का जोड़-जोड़ दुखने लगा, ख्रीर वह मेरी तकलीफ से बेखनर ख्रंधाधुँध साँडिनी दीड़ाये चला जा रहा था। वह बड़ा बात्नी ख्रादमी था। उसकी भारी-भरकम ख्रावाज ख्रीर भरपूर ठहाकों से वायुमंडल गूँज रहा था।

हम एक ऐसे पेड़ के पास से गुज़रे, जिस पर बयों के घांसले लटक रहे थे। एक घोंसला तो मेरे इतने करीब था कि मैंने उसे खसोट लोने के लिए हाथ बढ़ा दिया। लेकिन घोंसला मेरी पहुँच से बाहर रहा। वह कहने लगा—"बया बड़ा सममदार पद्मी होता है। वह अपना घोंसला बड़ी मेहनत और कारीगरी से बनाता है। दुनिया में कोई पद्मी इतना सुन्दर घोंसजा नहीं बना सकता। तुमने बाँसो पर लटकते हुए घोंसले नहीं देखें ? वेहद खूबसूरत होते हैं—हवा में लहराती हुई टोपियाँ सी। बये फुदक कर कभी अन्दर चले जाते हैं। यानी एक तो अपने रहने के लिए नर्म तिनकों और पत्तों से जिनमें एक तरफ़ को अन्दर जाने का रास्ता होता है, और दूसरा घोंसला भूले की राकल का होता है। जब बादल घर-चिर कर आते हैं और हल्की-हल्की फुहार पड़ती है, ठंढी हवा के भोंक चलते हैं तो बये चहचहाते हुए इन पगोडे जैसे घोंसलों पर पंजे जमाये भूता भूतते हैं।"

मुक्ते उसकी बातें बहुत दिलचस्प मालूम हुई । मैंने कहा—''सुना है बये श्रपने घांसले में रोशनी करने के लिए जुगन् पकड़ कर घांसले के अन्दर तिनकों में उड़स देते हैं।"

उसने सिर हिलाकर मुक्ते विश्वास दिलाते हुए कहा--"हाँ, यह ठीक है, यह बहुत ही सियाना पत्ती है।"

इस पर मैंने उसे बंदर श्रीर बये की कहानी सुनाई जो मैंने तीसरी कचा में उर्दू की किताब में पढ़ी थी। उसने बच्चों की तरह ध्यान लगाकर वह कहानी सुनी। श्रीर जब मैंने कहानी का नतीजा बताया तो वह बहुत खुश हुन्ना।

इस तरह बंदर से दूसरे जानवरों की चर्चा चल पड़ी। मैंने बताया कि जब मैं सड़क पर सायिकल चलाता हुन्ना चला न्ना रहा था तो किस तरह मुक्ते डर लगा कि कहीं किसी भाड़ी में से कोई भेड़ियां न निकल ग्राये।

इस पर वह फिर अपने निर्मीक स्वर में हँसा—"नहीं, डरने कि कोई बात नहीं, इस इलाके में मेड़िये बहुन कम हैं, फिर भी कभी-कभी दिखाई दे जाते हैं।" फिर उसने बताया कि शेखूपुरा के इलाके में अग्राबादियां से परे खूँख्वार मेडिये गोल बनाकर घूमा करते हैं और कद में गधे से कम नहीं होते...।

मैं बहुत चिकत हुन्रा । मैंने पून्ना—"त्रगर कोई भूला-भटका मुसाफ़िर उधर जा निक्कलता होगा तो भेड़िये उसकी तिक्का बोटी कर डालते होंगे ?"

उसने यह बड़ा मुँह फैलाकर कहा—"हाँ,...एक बार एक म्रादमी उधर से जा रहा था...मैंने यह बात किसी से सुनी थी...।"

"क्या वह कोई बड़ा ताक्रतवर ग्रादमी था ?"

"हाँ वह बहुत तगड़ा स्रादमी था...। दोपहर के समय रास्ता चलते-चलते वह थक गया तो एक पेड़ के नीचे स्राराम करने के लियं बैठ गया। एक भाड़न में रोटी वँधी थी। उसने रोटी खाई श्रीर फिर वह पेड़ के तने से टेक लगाकर थोड़ी देर के लिये ऊँघ गया। फिर एकाएक उसकी श्राँख खुली तो ऊसने कुळ श्राजीव-श्राजीव सी श्रावाजें सुनी श्रीर उसे भाइयों में जानवरों की थूथनियाँ दिखाई पड़ीं...।"

मेंने कहा-"वे भेड़िये होंगे। है न ?"

"हाँ, तुम जानते ही हो कि भेड़िये का मुँह बहुत बड़ा होता है। उसके जबके खून की तरह मुर्ख होते हैं। भेड़िया बहुत ही मक्कार जानवर है...।"

"फिर क्या हुन्ना ?" मैंने उत्सुकता से पूछा ।

"बस मई, वह आदमी उठ खड़ा हुआ। उसने देखा कि इर्द-गिर्द की भाड़ियों में से बहुत से भेड़िये लस्बी-लम्बी खबानें निकाले चोर निगाहों

से उसको घर रहे हैं...उसे महसूस हुआ कि अब वह बचकर नहीं निकल सकता। उसने पेड की तरफ़ देखा तो उसका तना इतना चिकना था कि उस पर फ़र्ती के चढ़ना ग्रसंभव था। वह यह नहीं जानता था कि वह उस पर चढ़ने की कोशिश करेगा तो भेडिये उस पर भपट पहेंगे... चण प्रतिचण भेड़िये उसके निकट चले ह्या रहे थे। वे उसे चारों तरफ से घेरे हुए थे ऋौर धीरे-धीरे वे ऋपने घेरे को तंग किये जा रहे थे। समय बहुत कम था, उसने इधर-उधर दृष्टि दौड़ाई, न कोई साथी, न हथियार...संयोगवश पास ही दो-चार ईंटें दिखाई पड़ीं। मालूम होता था कि कभी किसी ब्रादमी ने उस जगह ई टों का चल्हा बनाकर रोटी बनाई थी...उसने ग्रपनी खहर की मोटी चादर को दोहरा करके फ़रती से एक ईंट उसके ग्रन्दर रखकर बाँध दी। ग्रामी उसके सिरे हाथों में थामे ही थे कि सब भेड़िये एकदम उस पर पिल पड़े। उसने चादर में बँधी हुई ईटों को ज़ोर-ज़ोर से घुमाना शुरू कर दिया। जो भेड़िया उसके पास स्राता उसकी थ्रथनी पर इस ज़ोर से ईंट ज़गती कि वह घवरा कर पीछे हर जाता । भेड़िये बढ़-बढ़कर हमले करते रहे । वह भी बड़ी फ़र्ती छीर तेजी के साथ ईंट घुमाता रहा। इस तरह ऋरीव आध घन्टा तक वह मेडिये के हमलों को ग्रासफल बनाता रहा...यहाँ तक कि वहाँ कुछ ग्रीर राहगीर भी त्रा पहुँचे । उन्होंने दूर ही से जोर-जोर से चिल्लाना शुरू कर दिया । मेडिये यह शोर सुनकर भाग निकले ग्रीर उस त्रादमी की जान बच गई।"

यह रोमाँचकारी कहानी सुनाकर वह साँ डिनी को गालियाँ देने लगा ख्रीर मैं ख्रापने विचारों में खो गया ।...पीले चाँद की फीकी चाँदिनी में दूर-देर तक काले-काले पेड़ फैले हुए दिखाई दे रहे थे। कहीं बहुत दूर से किसी के गाने की उड़ती हुई तान सुनाई देने लगी। साँडनी अपनी बेढंगी चाल से लपकी हुई चली जा रही थी। हम एक ऊँचे पेड़ के पास से होकर गुज़रे जिस पर सुखी लौकियाँ लटक रही थीं। उसने कुल्हाड़ी

## ग्रलबेले

के हत्थे से एक तौरी कं ठुकराकर कहा—"देखो यह है तोंत्री ! बचपन में जब हम लोग नहर पर नहाने जाया करते थे तो बस इस तरह की तोंत्री बगल में लेकर मजे से बोतल के काग की तरह तैरा करते थे।"

लेकिन मेरा ध्यान अभी तक भेड़ियों की ओर लगा हुआ था—"क्या भेड़िये बड़े आदमी पर भी हमला कर देते हैं ?"—मैंने पूछा।

उसने दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए कहा-"ग्रगर भेड़िये गिनती में ग्राधक हों श्रीर कोई श्रकेला-दुकेला श्रादमी मिल जाय तो वे उस पर हमला कर दिया करते हैं। लेकिन ऋामतौर से ऋादिमयों से डरते हैं... लो मैं तम्हें एक मजेदार किस्सा सुनाता हूँ...यह जगवीती नहीं, ग्रापबीती है...करीब चार बरस पहले की बात है--मैं श्रपने निम्हाल को जा रहा था। रास्ते में जंगल पड़ता था, लेकिन मुक्ते परवाह न थी। मेरे हाथ में एक बड़ी लम्बी लाठी थी जिसके नीचे लोहे की यह मोटी शाम लगी हुई थी। त्रागर उस लाठी की एक भी ठिकाने की चोट किसी भेडिये के सिर पर पड़ जाती तो वह वहीं देर हो जाता। खैर दोपहर का समय था। अभी मैं जंगल में थोड़ी ही दूर गया था कि मैंने चौंककर देखा कि मेरे दाहिने हाथ की तरफ कोई जानवर माड़ियों में छिपा हुन्ना है। मैंने जल्दी से चारों तरफ नजर दौ बाई तो देखा की बायें हाथ की तरफ माडी के पीछे एक मेडिया खड़ा है...मैं चौकन्ना होकर रास्ता तय करने लगा। जिस जगह भाडियाँ जरा कम होतीं, मैं देखता कि मेरे दार्य-वार्ये दो मेडिये तीस-तीस चालीस-चालीस क़दम का फासला देकर चले जा रहे हैं। मैंने लठ उठाकर कन्धे पर रख लिया ख्रौर उन पर निगाह रखता हुद्या बढ़ता चला गया। कभी वे मेरे क़रीब आ जाते और कभी फिर दूर चले जातें। जब हम घनी भाड़ियों में से होकर गुज़रते तो वे नज़रों से श्रोभल हो जाते। मुक्ते उस वक्त खतरा महसूस होता था कि कहीं हमला न कर दें। ऋौर हाँ...एक ऋजीब बात देखी, कभी दायें हाथ वाला मेड़िया बाँयें हाथ की तरफ चला ग्राता ग्रीर बायें हाथ वाला दायें हाथ की तरफ

चला। जाता । इस तरह वे रास्ते भर ऋदल-बदल करते रहे । यहाँ तक कि जंगल खतम हो गया, लेकिन उनको मुक्त पर हमला करने का साहस नहीं हुआ। जंगल ख़तम होने पर मैं तो ऋागे बढ़ गया ऋौर वे जंगल ही में रह गये।"

जब वह अपना किस्सा खतम कर चुका तो मैंने उस पर सवालों की बौछार कर दी । अब वह मुक्ते बहुत ही दिलचरप आदमी मालूम होने लगा था। उसका बात करने का ढंग इतना दोस्ताना था ग्रौर बातें ऐसी सनसनी पैदा करने बाली ग्रौर मजे-मजे की करता था कि जी चाहता था, वह वातें ही करता चला जाय । मैंने ब्राग्रह किया कि मफे मेडियों की कोई ग्रौर कहानी सनाग्रो । वहाँ कहानियों की क्या कमी थी। उसने कहा-- "त्रव मैं तुम्हें त्रपने परनाना का छोटा-सा किस्सा सुनाता हूँ--परनाना यानी मेरे नाना के बाप अपने समय में बहुत ही शक्तिशाली स्रादमी समके जाते थे। इलाके भर के लोग उनसे थर-थर काँपते थे। एक बार मेरे परनाना ऋपनी बुद्धा से मिलने के लिए गये। वहाँ उन्हें कळ काम था। डेढ़-दो महीने वहाँ रहे। उन्हें खबर मिली कि घर पर मेरे नाना जो उस समय बच्चे ही थे, बीमार पड़ गये हैं। खबर मिलते ही परनाना तरन्त अपने घर की तरफ रवाना हो गये। जल्दी में उन्होंने अपने हाथ में लाठी तक न ली। बीस-पन्चीस मील का फासला था । वे बडी तेज़ी से चलते थे। उस समय चूँकि ग्रपने बेटे की बीमारी की चिंता थी. इसलिये उनकी यही कीशिश थी कि वे जल्दी से जल्दी ख्रपने गाँव पहुँच जायें। ग्राधा रास्ता तय करने के बाद वे एक गाँव के पास से होकर गुजरे तो उस गाँव के लोगों ने उनसे कहा कि वे जिस रास्ते से जा रहे हैं, उधर से न जायें बल्कि दूसरे रास्ते से चले जायें। दूसरे रास्ते से वहत बड़ा चक्कर पड़ता था, इसिलये परनाना उस रास्ते से जाना नहीं चाहते थे । उन्होंने कारण पूछा तो लोगों ने बताया कि इस रास्ते पर एक मेडनी ने बच्चे दे रक्खे थे। जो ब्रादमी उघर से गुजरता था.

उस पर हमला कर देती थी । चूँकि दूसरा रास्ता बहुत लम्बा था और उन्हें जल्दी पहुँचना था, इसलिए उन्होंने लोगों के कहने की परवाह न की श्रीर सीधे रास्ते से जाने की ही ठान ली। जब कोई एक डेढ़ मील श्रागे निकल गये तो देखा कि ठीक रास्ते के बीच में एक बिगड़ी हुई भेड़नी बैठी है। वे थोड़ा सा रास्ता काट कर गुज़रने लगे तो उसने उन पर हमला कर दिया। उन्होंने भपट कर उसके जबड़ों के पिछाले हिस्से में, जहाँ दाँत नहीं होते, दोनों हाथ डाल कर उसका मुँह फाड़ देने की कोशिश की। उधर वह मुँभलाई। लेकिन ज़िन्दगी श्रीर मीत का सवाल था। उन्होंने खूँख्वार जानवर को टाँगों में जकड़कर जोर लगाया श्रीर उसका मुँह फाड़ डाला। वह बहुत तड़पी, पर उन्होंने एक बड़ी सी ईंट से उसका विलक्षल खातमा कर दिया..!"

मुक्ते इस क्रिस्से में बहुत मजा आया। इस तरह इम बातें करते हुए चले जा रहे थे। पर अब मैं कुछ थक गया था, शरीर भी दुखने लगा था। दूर से पेड़ के भुँडों में से रोशनी छन-छनकर निकलती दिखाई दी। जब इम और करीब पहुँचे तो बाजों और दोल का हल्का-हल्का शोर भी सुनाई देने लगा। इस बीराने में यह रौनक !.....पूछने पर मालूम हुआ कि वहाँ मेला लगा हुआ है। यह बड़ा मेला सात दिन तक बराबर लगता था। बड़ी-बड़ी दूकानें और भाँति-भाँति के खेल तमाशे आते थे। मैंने पूछा—"क्या अब मेले में चलना होगा ?"

"हाँ, मुक्ते वहाँ एक...से मिलना है। श्रौर उस मेले का मतलब ही क्या है जहाँ मेल न हो सके.....क्या समक्ते १"

में कुछ न समभा।

ग्रव हम एक चौड़े रेतीले रास्ते पर हो लिए। उस रास्ते के दोनों किनारे ऊपर को उठे हुये थे। श्रौर उन किनारों पर बबूल के ऊँचे-ऊँचे पेड़ मेले के स्थान तक चले गये थे।

जब हम क़रीब पहुँचे तो काले-काले पेड़ों के तनों के बीच में गैस के हंडे और खीमे दिखाई पड़ने लगे। जैसे-जैसे हम आगे बढ़ते गये, वैसे-वैसे ज्यादा रीनक़ दिखाई देने लगी। हलवाइ यों, विसातियों, कुम्हारों, खिलीने और शर्वत-फ़ालूदे वालों की दूकानें, एक तरफ़ ऊपर नीचे घूमने वाले पगोडे और दूसरी श्रोर हाथों पर नाम या फूल आदि गोदने वालों के श्राहु, वोड़े, गधे, ताँगे, ठेले, वैल और ऊँट भी नजर आने लगे। उस समय खूब धमा-धमी हो रही थी। पुरुषों और स्त्रियों के मुंड के मुंड घूम रहे थे। रोशनी और गाने-वजाने के कारण जंगल में मंगल हो रहा था।

मेले में पहुँच कर एक पेड़ के नीचे मरे साथी ने साँडिनी का जमीन पर बैटा दिया। मैं उतरा तो मेरी टाँगें सब हो गई थीं। मैं खड़ा न रह सका, इसलिए तुरंत जमीन ही पर बैठ गया। वह मेरी तरफ देखकर दाँत निकालकर हँसा—"क्यों, बस थक गये ?"

मैं कुछ भेंप सा गया, लेकिन वास्तव में उस समय मेरे शारीर के जोड़-जोड़ में पीड़ा हो रही थी।

उसने पूछा-"तुम्हें मूक तो लगी होगी खूब जोर की ?"

मेरे एकरार पर वह मुक्ते अपने साथ लेकर हलवाई की सबसे बड़ी वूकान पर पहुँचा। कड़ाव आग पर चढ़े हुए थे। गर्म-गर्म जलेबियाँ उतर रही थीं। पहले तो उसने मुक्ते गर्म-गर्म जलेबियाँ दिलवाई । मुक्ते भूक भी लगी थी। उस दिन जलेबियाँ खाने में बड़ा आनन्द आया। उसने मेरी पीठ पर थपकी देकर कहा—''बस, अब तुम जो जी चाहे खाओ खूब पेट भर कर, समके दे"

मुक्ते दूकान पर छोड़कर वह स्वयं एक तरफ को चल दिया। मैंने जो जी चाहा खाया। जब खा चुका तो हलवाई के नौजवान लड़के ने दाम माँगे। मैं बड़ा धबराया। मैंने इधर-उधर देखा। मेरा साथी कहीं दिखाई न पड़ता था। मुक्ते प्यास भी लग रही थी, लेकिन ब्राव में खूब कसा । मैंने हलवाई से कह दिया कि मेरे पास दाम नहीं है । इस पर नौजवान हलवाई ने कहा—"कुसीं पर बैठे रहो । जब तक पैसे नहीं दोगे, यहाँ से हरगिज़ नहीं जाने दूँगा ।" मैं बहुत परेशान हुग्रा । थोड़ी देर बाद हलवाई फिर बकवास करने लगा । मैं डरा कि कहीं दो-चार चपत ही न जमा दे.....। इतने में बत्तख की चोंच की सी नाक वाला मेरा साथी भी लम्बे-लम्बे डग भरता ग्रा पहुँचा । उसे ग्राते देखकर मेरी जान में जान ग्राई । उस समय हलवाई का लड़का मुफे खरी-खरी सुना रहा था । मेरे साथी ने ग्राते ही बड़ी जोरदार ग्रावाज में उसे ललकार कर कहा—"ग्रवे ग्रो हरामी के पिल्लों !.....क्या कहता है हमारे छोंकरे को ?"

फिर उसने त्रागे बहकर उसका टेडुत्रा दबा लिया त्रार बोला— "वेटा मेरा नाम जस्सासिंह.....।"

शोर मुनकर लड़के का बाप हाथ जोड़कर दूकान के नीचे उतर आया श्रीर जस्सासिंह के सामने रोनी सूरत बनाकर खड़ा हो गया।

''लाला जानते हो मैं कौन हूँ.....?''

लाला हाँफ रहा था, मटके की तरह फूला हुन्ना उसका पेट नीचे-ऊपर हो रहा था—"जी, ग्रकदाता, जानता हूँ।"

जस्सासिंह ने उसके जवान लड़के की गर्दन से पकड़ कर इस जोर से पीछे दकेल दिया कि वह गर्म-गर्म घी के कढ़ाव में गिरने से बाल-बाल बचा—"तो फिर अपने इस लोंडे को भी बता दो। कहीं मुफे इसका भुरकुस न निकालना पड़े.....क्यों बे हरामी, तुफे इतनी हिम्मत कैसे हुई कि तू हमारे लड़के पर पैसे लेंने के लिए चढ़ दौड़ा....।" वह लाल आँखें निकाले लाला की तरफ बढ़ रहा था। इघर-उघर के लोग भी जमा हो गये। लाला ने कढ़दू सा सिर हिलाते हुए कहा—"जी, मैंने पैसे नहीं माँगे.....अजी, मुफे तो मालूम भी नहीं हुआ कि इस हरामज़ादे ने कब पैसे माँगने शुरू कर दिये ?"

जस्सासिंह ने कहा—''खून पी लूँगा खून...यहाँ स्रंगरेज का राज नहीं, मेरा राज है...कहो तो दूकान बराबर कर दूँ सुबह तक ।''

इतने में एक श्रीर लम्बा-तगड़ा मुसलमान नौजवान श्रागे बड़ा— "श्रवे जाने दे यार, ग़लती हो गई बेचारे से "

जस्सासिंह ने घूमकर देखा तो उसकी बाह्यें खिल गईं। दोनों लिपट गये। शायद बहुत दिनों बाद दोनों दोस्तों का मिलाप हुन्ना था। नवागन्तुक भी खूँखार गिद्ध के समान दिखाई पड़ता था।

हलवाई को इतनी चेतावनी काफ़ी समभो गई। इसके बाद हम लोग मेलें में धूमने लगे। वे दोनों बहुत देर तक मुक़दमों, पुलीस ग्रीर थाने श्रादि की बातें करते रहे।

मेले से ज्रा हटकर एक जगह खुते खेत में अलगोजे बज रहे थे। लोग एक बहे घेरे में बैठे थे। हुक्के का दौर चल रहा था। कुछ लोग लाठियाँ बगलों में दबाये उनके सहारे खड़े थे। कुछ लोग लाठियाँ पर दुद्धियाँ टिकाये उचके खड़े थे। अलगोजे बजाने वाले के पास एक गबरू हाथ कान पर घरे बड़े मज़े में पूरन भक्त का किस्सा गा-गाकर सुना रहा था। सभी महिक्तल पर सन्नाटा छाया हुआ था। सिर्फ गाने वाले की दर्द में इब-इबकर उभर आने वाली आवाज हवा में गूँज रही थी। जब गानेवाला एक बोल कहकर चुप हो जाता तो अलगोज़ों की लहकती हुई आकर्षक आवाज दो बोलों के बीच के अंतर को और भी मनोहर बना देती।

एक जगह बहुत भीड़ थी, खूब हुल्लड़ मचा हुन्ना था। जब हम पास पहुँचे तो देखा कि लोगों ने एक रंगीन मिज़ाज बूढ़े को घेरे में ले रक्खा है बूढ़े की सफेद दादी ग्रीर लम्बे-लम्बे पट्टे हवा में उड़ रहे थे। पहले वह एक लम्बी-सी हाँक लगा कर बड़ी लथ के हाथ कोई नंगी-सी बोली सुनाता। लोग ठहां के लगाते ग्रीर वह हाथ उठाकर चुटकियाँ बजाता ग्रीर कोहनियाँ हिलाते हुये उछाल-उछालकर नाचता था। उसके मुँह में एक दाँत तक न था, लेकिन ग्राँखों में बला की चमक थी। किर उसने

### ऋलवेले

चड़ी चंचल न ज़रों से दर्शकों की ख्रोर देखा ख्रौर उच्च-स्वर में पुकार कर बोला---

"ग्रोय—नाले बाबा खीर खा गया । नाले दे गया दुःग्रजी खोटी ।

हो हो !"

"बुल्ले स्रोय बाबया" चारां स्रोर से प्रशंसा की स्रावार्जे उठने लगीं।

हम इसी तरह घूमते फिरते जा रहे थे। जस्सासिंह और उसका मित्र बाजों की भाँति आगे को भुक-भुककर तालियाँ बजाते हुए ठहाके लगा रहे थे। मैं उसकी लम्बी-लम्बी टाँगों पर नज़र रखता हुआ। उनके साथ-साथ था। इतने में जस्सासिंह ने मुक्ते संबोधित कर कहा—

"काका...क्या नाम है तुम्हारा...?"

मैं 'वकरीसिंह' कहने ही को था कि एकाएक रुक गया । नहीं तो मेरा खूब मज़ाक उड़ाया जाता । मैंने सँभलकर श्रपना श्रसली नाम बता दिया ।

"तुमने कभी उँटनी का दूध पिया है... त्राहा ! बहुत मीठा होता है। त्रात्रो तुम्हें ऐसा दूध पिलायें कि बस याद ही किया करो।"

हम मेले से जरा परे हट श्राये। एक जगह बहुत-सी उँटिनयाँ जमा हुई थीं। इधर-उधर खुले मैदान में चारपाइयाँ बिछी हुई थीं श्रीर उन पर मैले-कुचैले कपड़े पहने हुए श्रादमी बैठे दिखाई दे रहे थे। रोशनी की कमी के कारण उनके चेहरे साफ तौर पर दिखाई न पड़ते थे। हम भी एक चारपाई पर जा बैठे। जस्सासिंह ने श्रपने सामने दूध दुहाया श्रीर फिर तीन टंडें (मिट्टी का छोटा डोल) दूध की भरी हुई लाया। वे दोनों तो श्रपनी-श्रपनी टंडें एक ही साँस में चढ़ा गये लेकिन में बहुत प्यासा होते हुए भी तीन-साड़े तीन सेर की टंड न पी सका। श्रतएव जस्सासिंह मेरी टंड का दूध भी पी गया। वहाँ से उठकर हम फिर मेले

में वापस चले आये। हम बहुत देर तक घूम चुके थे। आस-पास के देहात से आई हुई स्त्रियाँ भी वापस जा रही थीं। यद्यपि अब रौनक काफ़ी थी, लेकिन जहाँ तक स्त्रियों का सम्बन्ध था, महफिल पहले की अपेचा कुछ ठंडी पड़ चुकी थी।

एक तरफ मुजरे की तैयारियाँ हो रही थीं, एक सफेद दाढ़ी वाले बुजुर्ग काले कपड़े पहने तखत पर बैठे थे। दाँतों में हुक्के की नली दबी थी। इधर-उधर भक्तों का जमघट था। कुळ नीजवान श्रीरतें बनाव-सिंगार करने के बाद पाँच में बुँघरू बाँध रही थीं। तबले पर ख्राटा मला जा रहा था। थोड़ी-थोड़ी देर बाद थप-थप-थाप की स्त्रावाजें सुनाई दें जाती थीं। एक तरफ सारंगिये बैठे सारंगी के कान मरोड़ रहे थे। इधर उनके हाथों में पकड़े हुए गज हिलते श्रीर उधर उनके बड़े-बड़े पग्गड़ों वाले सर भी एक साथ हरकत करते। सब लोगों को निगाहें उन श्रीरतों पर जमी हुई थीं, जो बज खा-खाकर सी-सी तरह से श्रपने पाँच की तरफ देखती थीं। वे श्रच्छी तरह जानती थीं कि काले कपड़ों वाले बुढ़ें पीर की सुर्मा लगी श्राँखों से लेकर साधारण से साधारण व्यक्ति की श्राँखों तक सब उन्हीं के दर्शनों के लिये व्याकुल थे।

जस्सासिंह के दोस्त ने मुजरा देखने की इच्छा प्रगट की जस्सासिंह का भी विचार तो यही था, लेकिन शायद मेरे ख्याल से उसने वहाँ देर तक रकना उचित नहीं समभा। इसलिये वह अपने दोस्त से विदा हुआ और हम लोग अपनी साँडनी की नकेल पकड़कर मेले से चल निकले।

जब हम मेले से बाहर द्या गये तो सामने फिर धनी-धनी भाड़ियाँ क्रौर ऊँचे-ऊँचे पेड़ थे। हमारे दायें बायें श्रव भी कोई इक्का-दुक्का खेमा नजर ह्या ही जाता था। थोड़ी दूर जाने के बाद जस्सासिंह रक गया। उसने मुक्ते वहीं ठहराया ह्यौर साँडनी की नकेल मेरे हाथ में देकर स्वयं उस रेतीले रास्ते के ऊँचे किनारे की क्रोर रुख करके तुन के एक क्रौर पेड़ के पास पहुँचा।

# ग्रलवेले

वह पेड़ के नीचे जाकर खड़ा ही हुआ था कि पेड़ के साथे में एक नीजवान ख्रीरत तने की ख्रोट में से बाहर निकली । वे दोनों हँस पड़े ख्रीर बहुत धीरे-धीरे बातें करने लगे।

मिद्धिम प्रकाश में उस स्त्री की सूरत साफ साफ नहीं दिखाई पड़ती थी। हाँ, जब वह बातें करती हुई अपनी जगह से एक ख्रोर को हट जाती तो चन्द्रमा के प्रकाश में उसका चेहरा साफ साफ दिखाई पड़ने लगता।

वह एक खूब पली हुई जंगली विल्ली के समान थी। उसके चलने का हंग भी उस मोटी-ताजी बिल्ली की माँति था जो पेट मर कर चूहे खा लेने के बाद खर-खर करती हुई चलती हो। खूब खिंची तनी हुई ठसाटस माँस का वह एक तड़पता हुग्रा टुकड़ा थी, जैसे खरबूजे की फाँक या मीठे संतरे की रस भरी फाँक। उसने गहरे नीले रंग की ग्रोइनी ग्रोइ रक्खी थी, जिसमें केवला उसका चेहरा ही नजर ग्राता था। यदि उसके स्वस्थ गालों पर इतना माँस न होता तो उसकी ग्राँखों खूब बड़ी-बड़ी दिखाई देतीं। भवें लचकती कटार थीं ग्रीर दाँत साफ ग्रीर स्वच्छा। ग्राखरोट के बच्च की छाल से रंगे हुये मस्ड़ों में से हँसते समय उसके दाँतों की चमक बिजली की माँति कींघ जाती थी। उसके होंठों में समुद्र की लहरों का सा ज्वार-भाटा पैदा होता ग्रीर वे गर्म रेत पर पड़ी हुई किसी मछली की भाँति तड़पने लगते थे।

वे दोनों सुभासे कुछ फासले पर तो थे ही, फिर व बातें भी बहुत धीरे-धीरे कर रहे थे। कम से कम मेरे कान में कुछ नहीं पड़ने देते थे, लेकिन औरत के होटों के उतार-चढ़ाव से मालूम होता था कि बातें शायद कभी न खत्म करने के लिये हो रही हैं।...कभी चंचल हिंग्ट से उसकी और देखकर टेंगा दिखाने के अंदाज में ऊपर वाला होट मींचकर नीचे का होंट आगे बढ़ा देती।...उसने अपनी चुंदरी को सँवारा तो उसके काले घने और लम्बे केश वर्षा की बौछार की मौति बाहर निकल पड़े। उसकी सुन्दर गर्दन की भलक भी चुण भर को दिखाई पड़ी और फिर, उसकी

श्रोदनी की बदली में छिप गई। वह मस्ती में भरी हुई कब्तरी के समान श्रठखेलियाँ कर रही थी। जस्सासिंह ने संभवतः उसकी ठोढ़ी ऊपर उठाने के लिए हाथ श्रागे बढ़ाया। श्रौरत ने नर्मी से उसका हाथ रास्ते में ही रोक दिया श्रौर बड़े बाँकपन से उमककर श्रपने को जस्सासिह को सींपने के श्रंदाज़ में उसके क़रीब हो गई श्रौर उसके कान के पास धीरे से कुछ कहा। जस्सासिंह ने मेरी श्रोर देखा श्रौर खिलखिला कर हम पड़ा।...फिर जस्सासिंह एक क़दम पीछे हट गया।

पत्तों में से छुन-छुन कर आने वाली चाँदनी में औरत की तेज आँखों में से प्रकाश की किरगों निकलती हुई दिखाई दे रही थीं...और जब जस्सासिंह वापस लौटा तो वह पेड़ के तने के साथ लग कर खड़ी हो गई और कुछ उदास निगाहों से जस्सासिंह की और टकटकी बाँध कर देखने लगी। उसका एक गाल पेड़ से लगा हुआ था।

हम फिर साँडिनी पर सवार हो गये और साँडिनी पहले की तरह बेटन चाल से भाग निकली। काफी दूर आ जाने के बाद मैंने घूमकर पीछे की तरफ देखा। वह औरत अभी तक उसी तरह पेड़ के तने के साथ सिमट कर खडी हुई थी।

जब इम खेतों में पहुँच गये तो जस्सासिंह ने ग्रापना बहुये जैसा मुँह खोल कर मेरी त्रोर देखा श्रीर नाक की जगह मुँह से साँस लेने लगा । उसकी छोटी-मोटी मूळों के तले उसके कुछ भहें होठों पर चंचल मुस्कराहट खेल रही थी । वह श्रापनी भारी श्रावाज में बोला—"क्या सोच रहे हो ?"

मैं कुछ भेंप सा गया।

साँडिनी निचला होंठ आगे को बढ़ाये किसी रूटी रानी की तरह दुमक-दुमककर चली जा रहा थी। जस्सासिंह ने लोहे के कड़े वाला हाथ उठाकर कान पर रख लिया और एक लम्बी हाँक लगाई। उसके मुँह में से फेफड़ों की पूरी शक्ति के साथ जीवन से भरपूर आवाज़ निकली जो

#### ग्रलबेले

वायुमंडल में फिसलती चली गई। इतनी स्वतंत्र श्रीर भरपूर श्रावाज़ मैंने कभी नहीं सुनी थी। उसके स्वर में संगीत न सही, लेकिन एक ऐसा करारापन श्रीर एक ऐसी सच्चाई थी जिस पर संगीत से भरपूर हजारों श्रावाज़े कुर्वान की जा सकती थीं। लम्बी हाँक के बाद वह गाने लगा—

''ऋोय

में मल लाँ तख्त लाहौर दा मैं खोह लाँ राजे देयाँ रानियाँ।

स्रोय...हो हो "

(मैं लाहौर के तस्त पर जम जाऊँ मैं राजे की रानियाँ छीन लूँ।) किर उसने उच्च स्वर में टहाका लगाया—"लो मैं तुम्हें एक ऋौर गाना सुनाता हूँ। बहुत मजे का गीत है। एक ऋौरत जिसका नाम भागिन है, ऋपने...यानी समके न! उससे पूछती है—

"हैं वे कित्थे चल्ले स्रो

हाकिमा तुसी, तुसी वे कित्थे चल्ले ह्यो ।"

( हाँ, यह हाकिम कहाँ चले हो तुम, तुम कहाँ चले हो । )

श्रव हाकिम जवाव देता है-

"हे नी दिल्ली चल्ले श्राँ

भागिनें ! इसी, इसी नी दिल्ली चल्ले आँ।"

( श्ररी भागिन हम दिल्ली चले हैं । )

इस पर भागिन के मन में लड्डू फ़ूटने लगते हैं। कहती है---

"हैं दे की ल्या दोगे

हाकिमा ! तुसी, तुसी दे की ल्या दोगे।"

( हाँ तो फिर दिल्ली से द्वम क्या लाग्रोगे ।)

भला हाकिम मागिन के लिये कुछ लाने से कब चूक सकता था। लेकिन इस मौके पर उसे शरारत स्फती है। वह असल उपहार का जिक्र तो करता नहीं बल्कि कहता है—

"हैं नी ! बिल्ली ल्या दाँगे I

भागिनें ! श्रसी, नी बिल्ली ल्या दाँगे ।"

( हाँ री भागिन, हम दिल्ली से बिल्ली लायेंगे, बिल्ली ।)

विक्की का नाम सुनकर भागिन का जी कट जाता है। तेवर विगङ् जाते हैं। पूछती है---

"बिल्ली की कर जेगी

हाकिमा! बिल्ली, बिल्ली दे की कर जेगी।"

( बिल्ली क्या करेगी ए हाकिम, बिल्ली क्या करेगी ?)

हाकिम कनलियों से भागिन की तरफ़ देखता है। उसके बिगड़ने का

ग्रानन्द लेता है--

"है नी नहोन्दर मारेगी

भागिनें ! बिल्ली, बिल्ली नहोन्दर मारेगी ।"

( हाँ री, बिल्ली पंजे मारेगी ।)

भागिन इस बात पर दिखाने के लिए खुशी जाहिर करती है और फिर ब्यंग्य से पूछती है-

"पद्दी कौन बन्हेगा

हाकिमा पट्टी, दे कौन बन्हेगा।"

( पद्टी कौन बाँधेगा ए हाकिम, फिर पट्टी कौन बाँधेगा ?)

ग्रब हाकिम की बारी थी। भागिन समभती थी कि ग्रब हाकिम से कोई बात न बन पढ़ेगी। ग्रव हाकिम ने पहले तो भागिन की तरफ ऐसी नजरो. से देखा कि वह शर्मा गई। जब शर्म के मारे भागिन के गाल लाल हो गये तो उसने कहा—

"पङ्घी तूँ वनहेगी

भागिनें पट्टी, पट्टी नी तूँ बन्हेगी ।

त्रों हो हो हो ।"

(पट्टी तू ही बाँधेगी मागिन, पट्टी तो तू ही बाँधेगी।) [ ११६ ] ''क्यों, मेरा गाना पसन्द स्राया ?''

गाना तो खैर जो था सो था ही, लेकिन गाने में जो ज़िंदगी और खलकार ग्रौर ग्रन्दाज में जो निर्मीकता थी, वह मुफे बहुत पसन्द ग्राई। उसने पूछा—"तुम भी गाना जानते हो ?"

में गाना नहीं जानता था। काश मैं उसे गाना गाकर ही सुना सकता ! मैंने बातों ही बातों में पूछा-"वह मुसलमान कौन था ?"

वह हँस पड़ा—"वह मेरा जिगरी दोस्त है। समके १ बहुत दिन के बाद बड़े घर से ऋाया था। ऋच्छा ही हुऋा जो मुके मिल गया।" "बड़ा घर क्या होता है १'

"श्ररे, तुम बड़ा घर नहीं जानते । स्रफ्सोस, तुम बड़े घर कभी नहीं जा सकोगे । सिर्फ बड़े स्त्रादमी ही बड़े घर में जा सकते हैं....बस, सरदार बहादुर ! यह समफ लो कि बड़ा घर सिर्फ उन्हीं लोगों के लिए होता है जो सरकार की सेवा करते हैं । जब वे सेवा करते करते थक जाते हैं तो उन्हें श्राराम करने के लिए बड़े घर में भेज दिया जाता है । वहाँ वे इतमीनान से बैठ कर सरकार श्रीर परजा की सेवा के नये-नये ढंग सोचा करते हैं श्रीर जब श्राराम करने के बाद सरकार के बड़े घर से निकलते हैं तो फिर नये-नये ढंग से बड़े जोर-शोर से प्रजा की सेवा करते हैं । प्रजा सरकार से उनकी जोरदार सिफारिश करती है । सरकार जितनी इयादा खुश होती हैं, उतनी ही जलदी उन सेवकों को में बड़े घर भेज देती हैं । जो व्यक्ति जितनी ही ज्यादा मुस्तैदी के साथ सेवा करता है, उतने ही ज्यादा दिनों के लिये उसे श्राराम करने का मौका दिया जाता है ।"

में बहुत देर तक अपनी समभ के अनुसार बड़े घर के विषय में सोचता रहा। जस्सासिंह अपनी बात जारी रखते हुए बोला-'मेरे उस दोस्त का नाम नूर है। उसके बड़े घर में जाने से पहले एक बार हम दोनों एक गाँव में रात के समय किसी के घर में बुस गये। हर तरफ

सन्नाटा था। हम हर आहट पर कान लगाये हुए थे। कोई असाधारण आवाज न सुनाई दी। लेकिन जब हम बाहर निकलने लगे तो क्या देखते हैं कि जिस मकान के अन्दर हम धुसे हुए थे, उसे गाँव के लोगों ने चारों स्रोर से घेर रक्खा है.....।"

"ग्राप लोग उस घर में घुसे ही क्यों थे ?"

"त्रोहो ! देखो सरदार, ऐसी बातों में टोकना अच्छा नहीं होता । बस तुम यह समभ लो कि किसी न किसी तरह, किसी न 'किसी कारण से, किसी न किसी आदमी के घर के अन्दर घुस गये थे। घर वाले सोये हुए थे । पता नहीं, घर वालों की नींद कैसे खला गई ऋौर वे सब गाँच वालों को किस समय बला लाये...। इतने श्रादिमयों का मजमा देखकर हम बहुत घबरा गये । चपके से दबककर बैठ रहे। सोचते थे कि कैसे सही सलामत बाहर निकलें। कोई सूरत नहीं दिखाई पड़ती थी। फिर यह भी खटका लगा हन्ना था कि यहीं पड़े-पड़े सुबह न हो जाय। या फिर वे लोग कहीं से पुलीस को ही न बुला लायें। अत्रतएव हम दोनों ने सलाह की ग्रौर एक दूसरे की ग्रोर पीठ करके बाहर निकले तो देखा कि ग्राँगन श्रीर गली में श्रादमी ही श्रादमी खड़े हैं। लाठियाँ हमारे हाथों में थीं। बस इमने लाठियाँ चलानी शुरू कर दीं, हमारी जान पर बनी हुई थी। इतने जोर से हमने आज तक लाठी नहीं धुमाई थी। लोगों में हलचल मच गई। लाठियों की मार से बचने के लिए वे इधर-उधर हटने लगे। एक भागा तो भगदड़ मच गई। लेकिन जब उन लोगों ने देखा कि हम सिर्फ दो ही त्रादमी हैं तो फिर उनका हौसला बढ़ा श्रौर वे हमारे करीब पहुँचने की कोशिश करने लगे। हम भी लुहुलुहान हो गये। उनके घेरे में से निकल कर जो हम भागे तो ब्राठ कोस तक भागते ही चले गये जिसमें कि ये लोग घोडों पर सवार होकर हमें वेर न लें... समभे. मेरा यही दोस्त मेरे साथ था। ऋगर कोई ऋौर होता तो वहीं प्रास-त्याग देता।"

#### ऋलवेले

मुक्ते बहुत श्रारचर्य हुआ। मैंने पूळा—''क्या सारे गाँव में एक भी श्रादमी ऐसा न निकला जो श्रापका मुकाबला कर सकता १"

"कहाँ भैया ! हमारा मुक्ताबला करने के लिए तो उनके पास-पड़ोस के गाँव में से भी कोई नहीं निकल सकता । हाँ, त्रागर कहीं मेरे मामा जैसा कोई त्रादमी होता वहाँ तो फिर हमारी दाल नहीं गल सकती थी।"

"क्या श्रापके मामा बहुत ताक्ततवर श्रदमी हैं ?"

"ताकतवर ?—मेरे मामा इतने ताक्ततवर हैं कि इधर-उधर के लोग उन्हें 'लोहा' कहते हैं। बड़ा मारी डील-डौल है उनका। कद में तो खैर मुफसे भी कुछ कम ही हैं, लेकिन उनकी ललकार ही ऐसी जोरदार होती है कि किसी श्रादमी की हिम्मत नहीं पड़ती कि सामने सिर भी उठा सके। उनका इलाके भर में बड़ा दबदबा है.....।"

"क्या वे कभी चोरों के साथ भी लड़ा करते हैं । कभी कोई डाकू पकड़ा उन्होंने ?"

"उन्होंने बड़े बड़े काम किये हैं। उनके जीवन की एक छोटी सी पर बहुत ही दिलचस्प घटना मुनाता हूँ। एक बार गर्मियों में रात के समय वे गाँव से बाहर मवेशियों के बाड़ के फाटक के पास चारपाई डाले सो रहे थे। उनके सब मत्रेशी बाड़ के ख्रांदर बन्द थे। इतने में वहाँ चोर ख्रा निकले ख्रौर उन्हें गहरी नींद में बेम्रध पाकर ख्रन्दर घुस गये ख्रौर बैलों की एक बहुत ख्रन्छी जोड़ी निकाल कर चल दिये। ख्रभी वे बैल हाँकते हुए कोई चालीस पचास कदम ही गये होंगे कि एकाएक मेरे मामा की ख्राँख खुल गई ख्रौर वे तुरन्त माँप गये कि चोर उनके मवेशी लिए जा रहे हैं। वे उठकर बैठ गये ख्रौर पुकार कर बोले—"भाई, तुम जो कोई भी हो...मेरी बात कान खोलकर मुन लो...तुम मेरे जानवर तो लिए जा रहे हो, बड़ी खुशी से ले जाख्रो, लेकिन इतनी बात याद रहे कि तुम इन्हें जहाँ कहीं भी ले जाख्रोंगे कल दिन के ख्रन्दर-ख्रन्दर द्रगर

में अपने जानवर वापस न ले लूँ तो मैं अपने बाप का बेटा नहीं... श्रीर यह भी सुन लो कि मेरा नाम दसोंधासिंह है।"

वे त्रादमी कुछ देर तक चुपचाप खड़े सलाह करते रहे फिर उनमें से एक त्रादमी ऊँची त्रावाज में बोला—"दसोंधासिंह सरदार! हमें मालूम नहीं था कि यह तुम्हारे बैल हैं। न हमें यह मालूम था कि चारपाई पर तुम्हीं सोथे पड़े हो। हमने तुम्हारा नाम सुन रक्खा है, इसलिए हम यह बैल इसी जगह छोड़े जाते हैं।" श्रीर उन्होंने दोनों बैल बाड़े की तरफ हाँक दिये श्रीर स्वयं श्रपनी राह पर रवाना हो गये।

मुफ्ते उसकी वार्ते सुनने में बड़ा मजा श्रा रहा था। सुनसान रात में साँडिनी के गले में पड़ी हुई घंटियों की टन-टन में उसकी गूँजती हुई स्त्रावाज एक खास स्त्राकर्पण रखती थी। में उससे कोई बात पूछने ही लगा था कि एक बड़े जोर की फुंकार सुनाई दी। देखा तो परे एक ऊँची सी जगह पर एक फनदार साँप फन उठाये लहरा रहा है।

मेरे शरीर में त्रिजली सी दौड़ गईं। जस्सासिंह ने साँडिनी रोक ली। कुळ देर तक वह साँप की तरफ देखता रहा—"यह साँपों का राजा नाग है। उफ, कितना काला है। अगर यह किसी को काट ले तो उसे पानी माँगने की मुहलत न मिले।"

किर उसने मुक्ते साँडिनी पर बैठे रहने की हिदायत की ग्राँर स्वयं नीचे उतर गया। साँप ग्रमी तक कन उठाये लहरा रहा था। जस्सासिंह ने कन्ये से चादर उतार कर बार्ये हाथ में पकड़ ली ग्राँर दाहिने हाथ में लाठी लेकर वह ग्रागे बढ़ा, वह फूंक-फूंक कर कदम रख रहा था। उस समय वह एक ग्रसील मुर्गे की भाँति चाँकन्ना हो रहा था। उसकी घनी भवों के नीचे उसकी तेज ग्राँखें चमक रही थीं। उसने ग्रपना लोहे का कड़ा कलाई से पीछे हटाकर बाजू पर फँसा लिया। साँप के पास पहुँचकर वह रक गया ग्रौर साँप की ग्राँखों से ग्राँखें मिला कर खड़ा हो गया।

# त्र्रालबेले

मैं डर गया। मैंने उसे आवाज देकर वापस चले आने के लिए कहा, लेकिन उसने मेरी ओर देखे बिना चुप रहने का इशारा किया और स्वयं साँप के और भी निकट चला गया।

मैंने इधर-उधर दृष्टि दौड़ा कर देखा। कोई श्रादमी, जानवर या पद्मी दिखाई नहीं पड़ता था। चन्द्रमा का प्रकाश श्रव कुछ तेज हो गया था। बबूल के पेड़ चुपचाप खड़े थे। उनकी शाखात्रों की कोमल से कोमल कोपलें तक निश्चल थीं! वे ऐसी लापरवाही के साथ खड़े थे, मानो उन्हें इस बात से दूर का भी सम्बन्ध न हो। उस सुनसान स्थान पर श्रादमी श्रोर नाग का मुकाबला मेरे लिए बिलकुल नई श्रौर विचित्र चीज़ थी! सुक्ते विश्वास था कि साँप धोके से जस्सासिंह की नंगी टाँग पर दाँत मारेगा श्रौर वह इसी समय तड़प-तड़प कर मर जायगा। मेरा गला सूख रहा था। मैं चाहता था कि वह वापस चला श्राये, लेकिन वह मेरी बात सुनता ही कब था। श्रव वह श्रौरत भी बहुत पीछे रह गई थी, नहीं तो मैं भाग कर उसे ही बुला लाता। वह तो उसे रोक सकती थी।

जस्सासिंह के होंठों पर मुस्कराहट खेल रही थी। वह उस समय एक चंचल बच्चे के समान जिद्दी और खिलोन्दरा दिखाई पड़ रहा था। साँप के पास खड़े होकर वह उचक कर अपनी चादर उसके फन के पास हिलाने लगा। साँप ने भी फन बढ़ा-बढ़ाकर दो-तीन बार उसे काटने की कोशिश की। एक बार जो उसने जरा बढ़कर चादर उसके क़रीब की तो निडर साँप उछल कर चादर से लिपट गया। जस्सासिंह ने चादर ज़मीन पर फेंककर उसे लाठी से पीटना शुरू किया। एक च्या के लिए साँप उसके पाँच के पास दिखाई दिया, फिर वह भाग निकला। जस्सासिंह भी उछलकर उसके पीछे-पीछे हो लिया। फिर वह समतल रेतीली घरती पर एक दूसरे के पीछे भागे। साँप पलट-पलटकर उस पर हमले करता था। थोड़ी ही देर में वे बहुत दूर निकल गये। जस्सासिंह की लाठी बार-बार

ह्वा में उठती थी श्रौर फिर एकाएक जस्सासिंह जमीन पर गिर पड़ा.....उठा श्रौर फिर गिर पड़ा.....मेरा घड़कता हुश्रा दिल घक् से होकर रह गया। शायद वह स्त्री जिससे वह थोड़ी देर पहले हँस-हँसकर बातें कर रहा था श्रमी तक पेड़ के तने के साथ लगी खड़ी हो..... जस्सासिंह फिर उठ खड़ा हुश्रा श्रौर फिर बड़े-बड़े डग भरता हुश्रा मेरे क़रीव श्राया। मैंने घबराकर पूछा—"क्या साँप ने श्रापको काट खाया था ?"

"नहीं तो," वह हँसकर बोला—"वहाँ गीली जमीन थी। मेरा पाँव फिसल गया। देखो यह मेरा कच्छा भी कीचड़ में खराब हो गया... गिर कर मैं उठने लगा तो फिर गिर गया।"

''तो रााँप भाग गया ?''

"नहीं भाई, साँप को भागने भी देता में १ तुम जानते नहीं, स्रगर यह साँप एक बार घायल होकर बच निकले तो स्रपने दुश्मन से बदला ज़रूर लेता है। इसलिए में उसके पीछे भागा था स्रब तो मैंने उसका सिर स्रच्छी तरह कुचलकर रख दिया है...स्रास्रो नीचे उतरो तुम्हें भी साँप दिखलावें...।"

जब हम मरे हुए साँप के निकट पहुँचे तो देखा कि कम से कम छु; हाथ लम्बा साँप था। पीठ बिलकुल स्याह थी। पेट कुछ सफेद था बल खाया हुन्ना मुदी साँप त्राव भी हतना भयानक दिखाई देता था कि उसके पास जाने की हिम्मत न होती थी।

इस बात की पूरी तसल्ली कर लेने के बाद कि साँप सचमुच बिलकुल मर चुका है, हम वापस आकर साँडिनी पर सवार हो गये।

मेंने जीवन में इस तरह की रोमाँचकारी घटनाएँ कम ही देखी थीं।
मुक्ते ऋभी तक पसीना छूट रहां था। जस्सासिंह का साहस मूर्खता की
हद से ऋगे बढ़ गया था लेकिन वह पूरे विश्वास के साथ नीचे उतरा
था ऋौर उसे यक्तीन था कि वह साँप को मार डालेगा। लेकिन में

#### ग्रलबेले

रह-रहकर सोच रहा था कि अगर कहीं साँप जस्सासिंह को काट ही खाता तो क्या होता ?

जस्सासिंह ने साँडिनी को ललकार कर हाँकते हुए कहा—"यह साँप बहुत ज़ालिम होता है। यह गाय का थन मुँह में लेकर दूध पी जाता है श्रीर कभी-कभी यह मनुष्य जाति का दुश्मन बन बैठता है उस वक्त इसकी कारस्तानियाँ बहुत बढ़ जाती हैं। जो श्रादमी दिखाई दे, उसे काटने से नहीं चूकता। ऐसा साँप बहुत ही खतरनाक होता है। श्रीर फिर सबसे मुश्किल यह होता है कि यह जानवर भी छोटा-सा होता है श्रीर है बहुत चालाक श्रीर मक्कार। इसको मार डालना भी श्रासान नहीं। बस ऐसे साँप से वाह गुरू ही बचाये।"

इसी तरह बातें करते हुए चले जा रहे थे कि जस्सासिंह ने कहा— "बोली यह सामने तुम्हारा गाँव है न १"

में उसकी बातों में ऐसा मग्न था कि मुक्ते इधर-उधर का कुछ खयाल ही न रहा था। श्रव हम गाँव के कब्रिस्तान के पास से गुज़र रहे थे। भड़बेरियां के बीच में उभरी-उभरी कब्रें चाँदनी रात में श्रीर भी श्रिधक भयानक दिखाई दे रही थीं। सामने नीम के पेड़ों के नीचे चमारों का कुश्राँ भी नज़र श्रा रहा था। कुएँ की चलों श्राँवेरे में किसी नक्तावपीश श्रादमी के समान दिखाई दे रही थी। गाँव से बाहर कूड़े-करकट के देर थे, जहाँ दिन के समय मुर्गियाँ श्रीर उनके नन्हें-नन्हें बच्चे जमीन कुरेदते फिरा करते थे। दूर छोटे-छोटे पेड़ों का भुरूष्ड था जो ऐसे दिखाई देते थे जैसे चोर गाँव में घुसने से पहले श्रापस में सलाह-मशिवरा कर रहे हो।

जब हम गाँव में पहुँच गये तो गाँव के ठीक सिरे पर बने हुए रहट के पास जस्सासिंह ने अपनी साँडिनी बिठा दी। मेरी सायकिल उतारी, फिर स्वयं उतरा और मुके भी उतारा। मेरी गठरी मेरे हवाले कर दी।

गाँव पर उस समय सन्नाटा छाया हुन्ना था। सब लोग न्त्रपने कच्चे

मकानों की छतों पर पड़े सो रहे थे। सिर्फ गाँव के दूसरे सिरे से कुत्तों के भौंकने की इल्की-इल्की आवाजें आ रही थीं।

उसने चलते हुए रहट से पानी पिया। पानी की बूँदे उसकी मूँ छों से नीचे की तरफ लटककर काँपने लगों। मैंने सायिकिल पास की एक दीवार के साथ खड़ी कर दी। गठरी भी उसी पर रख दी। जस्सासिंह ने मुस्कराकर मेरी ख्रोर देखा। मैं उससे इतना घुल-मिल चुका था, मानो हम वघों से एक दूसरे को जानते हों। मैं ऐसा ख्रानुभव कर रहा था कि भिवष्य में हम जिन्दगी भर साथ-साथ रहेंगे। उसने बेतकल्लुफी के साथ पूछा—"कहो अब तो घर पहुँच जाख्रोगे, रास्ता तो न भूलोगे?"

मैंने शर्माकर कहा—"जी नहीं, ग्रब मैं पहुँच जाऊँगा।"

मैं उसको घन्यबाद देना चाहता था, लेकिन समक्त न सका कि वह भाव कैसे प्रगट करूँ ! मैं यह सोच ही रहा था कि उसने पगड़ी के शामले से मूँ छुँ और दाढ़ी पांछुते हुए कहा—"ग्रब्छा ग्रव तुम वर को जाम्रों, मैं भी जाता हूँ"

मैंने उसकी पगड़ी के शमलों की तरफ़ देखा एक कान के पास खटक रहा था और दूसरा हवा में उठा हुआ फूल की तरह खिला हुआ था। मैंने सिर से पाँव तक उसको देखा वह एक मारी खम्मे की तरह दिखाई दे रहा था। उसने अपने दोनों काठ के से हाथों में मेरा कमजोर और छोटा सा हाथ लेकर मिलाया। इस तरह इतने बढ़े आदमी से हाथ मिलाने में मुक्ते गर्व का अनुमव हुआ। मुक्ते यह स्वम में भी खयाल न था कि वह एकदम वापस जाने पर तुल जायगा। मैंने कहा—"आइये हमारे घर चिलये। घर के लोग आपको देखकर वहुत खुशा होंगे।"

यह बात सुनकर वह बड़ी जोर से हँसा। उसकी हँसी एकने ही में न ख्राती थी। उसने डँगली से ख्रपनी ख्रोर इशारा करते हुये कहा— "क्या कहते हो!.....सुमे देखकर खुश होंगे?...ह-ह-ह-हा!"

हँसते-हँसते उसी नाक की नोक सुर्ख हो गई .

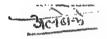
#### ग्रलवेले

मेंने उसकी उँगली पकड़ कर ले जाने के लिये आग्रह किया तो फिर वह कहने लगा—"आज मुक्ते बहुत जरूरी काम है, इसलिये तुम जाओ। मैं फिर कभी आऊँगा। तुम्हारा नाम तो मैं जानता ही हूँ.....।"

मैंने उँगली उठाकर कहा—"जरूर ?" "जरूर"—वह हँसने लगा।

इसके बाद वह अपनी कुल्हाड़ी सँभालता हुआ साँडनी पर सवार हुआ। मैं उसकी तरफ देखता रहा। यहाँ तक कि वह द्वितिज में विलीन हो गया—गर्द के बादल उड़ते रह गये।

लेकिन वह फिर कभो नहीं आया...कभी नहीं !



# कुछ चाए

सोमवार का दिन था।

यों तो मैं अपने दोस्तों का बहुत ग्रादर करता हूँ लेकिन कभी-कभी जी चाहता है कि दोस्तों की सूरत तक न दिखाई दे ग्रीर में सिर्फ ग्रपने लिए ही होकर रह जाऊँ। मेरे दोस्तों की तादाद बहुत कम है, इसलिए सभे ऐसे दिन भी मिल जाते हैं।

जिस दिन की बात कर रहा हूँ वह इसी तरह का एक दिन था। सुबह का समय था। इसके पहले कि कोई दोस्त मेरे मकान पर पहुँचकर "उमाकान्त! उमाकन्त!" के नारे लगाता, मैं चाय पीकर घर से निकल खड़ा हुआ।

[ १२६ ]

#### कुछ च्राण

न बीवी न बच्चे, न नौकरी न कारवार, न खुशी न गमी, ग्रजब रिन्दी की हालत में जिन्दगी बीत रही थी। मेरी वेकारी से घर वालों की नाराजी के कारण मन पर उदासी छाई रहती थी। कोई जिम्मेदारी न होने के कारण दिमाग हलका रहता था।

बस स्टैंड पर पहुँच कर देखा कि बस कनाट-भ्रोस जाने के लिए तैयार खड़ी है। अन्दर इक्का-दुक्का मुसाफिर बैठा है। मैंने फुटपाथ पर खड़े होकर जेब में से 'कैमेल्स' की डिब्बी निकाली और बड़े इतमीनान से एक सिगरेट को सहलाता रहा। फिर उसे होठों में दबाया और सुलगाकर लम्बा करा लिया। आखिर कोट कालर दुक्स्त करता हुआ बस के अन्दर दाखिल हो गया।

त्राठ बजे थे। भला सदीं के मौसम में किसी को क्या पड़ी थी कि घर के गरम वातावरण से निकल कर बाहर को उठ मांगे। इसिलए बस में एक अर्जीव शान्ति छाई थी। थोड़े से लोग एक दूसरे से परे-परे बैठे धीर-धीरे बातें करने में लगे थे।

मैंने पहले तो श्रीरतों श्रीर जड़िक्यों पर नजर डाजी। तीन जड़िक्यों थीं श्रीर दो श्रीरतें।

लड़ कियाँ गोरी थीं। दो दो चोटियाँ, श्राँखें बड़ी न छोटी, बातें मीटी न फीकी—लेकिन गाल—श्रोह—इतने वेडील ग्रौर बेहूदा गाल! हिड़ुयाँ उमरी हुई ग्रौर गहरी-गहरी लकीरें, जो हँसते वक्त ग्रौर गहरी हो जाती थीं। ग्राब दूसरी ग्रौरत की तरफ देखा—हरे राम! वह तो स्र्रत से बिलकुल श्राया लगती थी। गायद सचमुच की श्राया हो। इसी बात पर मुफे खयाल श्राया कि हम लोग बच्चों के लिए कितनी बदस्रत: श्रायाएँ रख लेते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि उम्र-भर बच्चों की सौंदर्भ को परखने वाली शक्ति पनपने नहीं पाती।—खैर, श्रब एक ग्रौरत को देखना नाकी था। वह मेरी श्रोर पीठ किए बैठी थी। उसके कन्वे पर एक नन्हें

बच्चे का सिर टिका था और एक बच्ची सामने की सीट पर बैटी थी— यानी वह कम से कम दो बच्चों की माँ थी।

दिल पर निराशा सी छाने लगी। क्या बीस पच्चीस मिनट का यह सफर यों ही कट जाएगा ? दिल बहलावे को कोई सुन्दर स्र्त तक दिखाई न देगी, क्या यह सफर जम्हाइयाँ लेते-लेते ही बिताना पढ़ेगा ?

पिछली सीट पर चुपके से बैठकर मैंने सिर पर हाथ फेरते हुए बालों की तह जमाई। कपड़ों को दुक्स्त किया और फिर इन्तजार करने लगा कि वह जरा धूम कर इधर-उधर देखे तो उसकी सूरत देखी जाए। लेकिन वह इधर-उधर देखे बिना सामने की ओर मुँह किए चुपकी बैठी रही, यहाँ तक कि बस चल दी।

मुक्ते बेचैनी सी महसूस होने लगी। स्त्राखिर कंडक्टर ने स्त्राकर टिकट के दाम मांगे। टिकट लेते समय खयाल स्त्राया कि कारा, इस महिला से थोड़ी बहुत बातचीत हो चुकी होती तो उसके टिकटों के दाम देकर सच्छी खासी पहचान बढ़ाई जा सकती थी। जब उसकी बारी स्त्राई तो उसने मुँह फेर कर देखा। सौन्दर्य की एक कलक दिखाई पड़ी—दिल धकू से होकर रह गया।

वह सचमुच बहुत मुन्दर थी। तारों सी आँखें, नाजुक हांठ और चमकता माथा—आशा के विरुद्ध उस स्त्री को मुन्दर पाकर हाथ पाँव फूल गए।

श्रम स्वाल यह था कि इससे बातचीत कैसे ग्रुरू की जाए। कौन सा विषय मुनासिब रहेगा, मौसम १.....लेकिन हिन्दुस्तान में श्रमी मौसम के विषय पर बातचीत श्रुरू करना श्रधिक उपयुक्त नहीं सिद्ध हो सकता। उस श्रौरत से यह कहना कि श्राहा! क्या श्रञ्छा मौसम है, महज बेकार होगा। सिनेमा, ऐक्टर, ऐक्ट्रेसें, बसें, सड़कें.....नहीं, नहीं ये बातें बेसार हैं.....इतने में श्रौरत के कि के साथ लगे हुए नन्हें चच्चे ने श्रांखें खोलीं श्रौर श्रचरज के साथ इधर-उधर देखने लगा।

बड़ा प्यारा बच्चा था । मैंने उसके गाल पर हलकी सी चुटकी ली तो उसके छोटे-छोटे होंठों पर मुस्कराहट पैदा हुई । फिर मैंने दो उंगलियों से उसकी दुड्डी को हलके-हलके सहलाना शुरू किया तो वह हँसने लगा । मैं जानता था कि उसकी माँ को यह बात मालूम हो चुकी है ।

बच्चे के कानों के पीछे दाद के निशान दिखाई दे रहे थे। मैंने साहस से काम लेकर पूछा—"क्यों जी, नन्हे के कानों के पीछे दाद हो रहा है.....?"

''जी.....हाँ....."

"तो क्या त्र्राप इसका इलाज नहीं कराएँगीं ?"

"इलाज तो हो रहा है....."

"क्या होमियोपैथी इलाज करा रही हैं ?"

''जी नहीं, है तो एलोपैथी।"

"एक डाक्टर हैं रुची राम। होमियोपैथी इलाज करते हैं, लेकिन श्रच्छा करते हैं। खास तौर पर बच्चों के इलाज के तो वह माहिर हैं। श्रगर यह इलाज सफल न हो तो उन्हें दिखाइए।"

"ग्रच्छा जी।"

''बहुत ही प्यारा बच्चा है," मैंने वातों का सिलसिला जारी रखने की कोशिश करते हुए कहा।

श्रीरत ने बच्चे को कन्धे से हटाकर खिड़की के साथ पीठ लगा ली । श्रव उसका रुख करीब-करीब मेरी तरफ था। उसने बच्चे को जाँघ पर बैठा कर देखना शुरू किया कि सचमुच वह हसीन है य नहीं। फिर जैसे मन ही मन उसने मेरी बात का समर्थन करते हुए नजरों से मेरी श्रोर देखा।

''त्रापको बच्चों से खासा लगाव है। क्या आपके भी बच्चे हैं ?'' ''जी नहीं," मैंने जरा भेंप कर कहा—"अभी तो मेरी शादी भी नहीं हुई।"

"क्यों, शादी न होने का क्या कारण ृ?"

"यों ही," मैंने सिर खुजाते हुए जवाब दिया——"यही, ग्रामी बेकार हूँ—जब तक ग्रामदनी की सूरत न हो, दिल में शादी का खयाल भी नहीं ग्रा सकता।"

"लेकिन आप बेकार क्यों हैं ?"

में इस जिरह से घबरा रहा था—"मैंने पंजाब युनिवर्सिंग से बी. ए. करने के बाद पेशावर में कारोबार शुरू किया था। ऋामदनी की सूरत नजर ऋाने लगी तो दंगे शुरू हो गये ऋौर मुक्ते इधर भागना पड़ा... ऋब नए सिरे से काम शुरू करने का विचार है।"

श्रीरत की श्राँखों में उदासी की भत्तक दिखाई दी। उस वक्त वह कुछ खोई-खोई सी दिखाई पड़ रही थी। मैं मोके का फायदा उठाते हुए उसके मुन्दर मुखड़े को गौर से देखने लगा—क्या वह मेरी खातिर उदास थी १ एक च्रण के लिए ही सही! मुभे भी ऐसी ही मोहनी पत्नी मिल जाय।

कहते हैं कि नारी पुरुष के मनोभावों को बहुत जल्द पहचान लेती है । श्रीरत ने नजरें मुका लीं श्रीर फिर कुछ रुककर, न जाने क्यों, बड़ी बच्ची की तरफ इशारा करके मुस्करा कर बोली—"यह मेरी वेटी है।"

"त्रास्रो बेबी! मेरे पास श्रास्त्रो…।" मैने हाथ फैलाए। वह संकोच के कारण श्रागे नहीं बढ़ी तो मैंने श्राप बढ़कर उस गोद में बैठा लिया—"श्राहा हा हा हा.....बड़ी श्रब्छी है हमारी बेबी...श्रब्छा तो तम पढ़ती क्या हो ?"

लेकिन वह भड़े ठाठ से शरमाती रही।

श्रीरत बोली—"बतलाश्रो न बेबी! तुमसे कितनी बार कहा है कि यों ही मत शरमाया करो।"

मैंने सोचा—कितनी सभ्य है यह श्रीरत । उसकी बातचीत से मालूम होता था कि वह पढ़ी लिखी श्रीर खासी सुलभी हुई है । माँ के आदेश पर बेटी ने सिर हिलाकर 'हाँ' कहा।

"क्या पढ़ा है भई, हमें भी सुनास्रो...तुम तो बहुत ही स्रच्छी बेबी हो। तुम्हें तो पढ़ा लिखा याद होगा सारा, बोली याद है ?"

"हाँ जी, " बेबो ने बड़ी-बड़ी ऋाँखें उठाकर भरपूर नजरों से मेरी तरफ देखा। मालूम होता था कि इस बात को स्वीकार करने में उसे बड़े गर्ब का ऋनुभव हो रहा है।

"अञ्छा भई, फिर सुनाओं न, क्या पढ़ा है तुमने ?"
"ए, बी, सी, वाई, जेड ।"

इस पर हम दोनों ठडा मारकर हँस पड़े। मैं और वह औरत। हम दोनों, जो एक दूसरे से बहुत दूर थे, लेकिन हमारे ठडों की मिली जुली आवाज से यो महसूस होने लगा जैसे फिल्म के हीरो और हीरोइन कोई जादू भरा दुगाना गा रहे हों।

ग्रीरत ने बड़ी धृश्किल से हँसी रोकते हुए कहा—"ग्रर्श वेबी! तुमें ए, बी, सी, ग्रभी तक याद नहीं हुई । सी के बाद एक दम वाई जेड ?"

श्रव हमारी मुलाकात सन्तोषजनक श्रवस्था तक श्रा पहुँची थी। श्राधिकाँश श्राशंकाएँ दूर हो चुकी थीं। हम दोनों बहुत श्रच्छे परिचितों, बल्कि दोस्तों की तरह बार्तें करने लगे।

बीस या पञ्चीस मिनट के सफर में ज्यादा बार्ते नहीं हो सकती थीं। केंकिन अगर अनुभ्तियों को लीजिए तो खण भर में कुछ का कुछ हो जाता है। एक मीठी नज़र थी जो जिन्दगी के उन खणों को रंगीन बनाती चली गई। उसकी आवाज में ऐसा लोच और रसीलापन था कि मुद्दतों तक कानों में शहद सा लता रहा।

इधर उधर की बातों में हम इतने खों गए ये कि इर्द-गिर्द की कुछ खबर नहीं रही थी—जब मैंने जंगल में धोर के शिकार की भूठी कहानी सुनाई श्रौर भूठ मूठ कह दिया कि मैंने शेर के सामने जमीन पर खड़े

होकर उस पर गाली चलाई तो ऋौरत की ऋाँखें फटी की फटी रह गईं। हैरानी से बोली-''लेकिन मैंने तो सुना है कि शेर का शिकार मचान पर बैठ कर किया जाता है।"

"जी हाँ," मैंने वेपरवाही से सिगरेट का बचा हुआ दुकड़ा हवा में फैंकते हुए जवाब दिया—"लेकिन सिद्ध शिकारी मचान पर कभी नहीं बैठते।"

उसे सचमुच मेरी बातों पर विश्वास हो गया ! बातों में मुफे खयाल श्राया कि पुरुष के मन में स्त्री के प्रति श्राकर्षण का एक कारण यह भी है कि श्रीरत के सामने वह जी खोलकर भूठ बोल सकता है श्रीर श्रीरतें भी हरदम भूठ मुनने के लिये तैयार रहती हैं। होशियार से होशियार श्रीरत भी श्राखिरकार उसी मर्द को पसन्द करती है जिसके भूठ पर वह विश्वास कर सके।

श्रीरत बच्चां के से भोलेपन के साथ कई बातें पृछ्ठती पही श्रीर में बड़े ध्यान से उनके जवाब देता रहा ।—पाप पुर्य, प्यार मुहब्बत, सोंदर्थ श्रीर शराफत व कमोनेपन से मिली जुली यह मुलाकात कितनी मनोहर थी—उस मुहानी मुबह को दो श्राजनबी मुसाफिरों की छोटी सी मुलाकात संसार के इतिहास की कितनी छोटी घटना!

प्रेम की मंजिल तो क्या आती—हाँ बस की मंजिल करीब आ रही थी।

बेबी ऋभी तक मेरी गोद में बैठी थी। एकाएक मुफे महसूस हुआ कि काम निकल जाने के बाद बेबी को तो मैं भूल ही गया था। मैंने लिजत होकर बेबी की बगल में गुदगुदाया—"ऋरे बेबी! तुम तो कोई बात ही नहीं करतीं—क्या तुम हमसे नाराज हो ?"

वह चुप रही।

"बोलो—बेबी !"

"नहीं ।" बेबी ने इनकार के तौर पर सिर हिलाते हुए कहा।

#### कुछ च्ए

"श्रच्छा तो बताश्रो तुम्हारा नाम क्या है ?"

"मेला नाम ?"

"हाँ।"

"सूख ता नाँ।"

"मुलताना," श्रीरत ने कहा।

मुक्ते पहली बार यह मालूम हुआ कि वे मुसलमान हैं। मुलताना की बगलों में गुदगुदी करते हुए मेरे हाथ एक गए। मैंने थोड़ा हिच- किचाते हुए पूछा— 'क्या आप मुसलमान हैं ?'

"जी।" यह कहकर श्रीरत ने मेरी तरफ सवाल भरी नजगं से देखा।

"नहीं, कुछ नहीं।" मैं हँस दिया। मुक्ते हैरानी हुई क्योंकि देखने में वे...।

फिर जरा देर के लिए भद्दी खामोशी छा गई।

"बात कुछ भी नहीं थी ।" मैंने खामोशी को तोड़ते हुए पूछा—
"फसाद के दिनों में ऋाप दिल्ली में ही थीं ?"

"जी हाँ, हम सब यहीं थे ।"

मेरे दिल को न जाने क्या होने लगा। मैंने क्की-क्की ग्रावाज में पूछा-''श्रापको कोई तकलीफ तो नहीं पहुँची ?''

श्रीरत ने कुछ रककर कहा—"बस कुछ न पूछिए। रुपए पैसे का बहुत नुकसान हुत्रा। जानें बच गईं, यही गनीमत समिन्नये। कनाट से से में हमारी दूकान लुट गई। दंगाई घर में में घुस श्राए...लेकिन इसके पहले कि कोई नुकसान होता, पुलीस श्रा गई..."

मेरा सिर भुक गया.....ऐसा क्यों होता है ? ऐसा क्यों होता है ? स्टैग्ड पर पहुँचकर बस इक गई।

यह सोचकर कि ग्रौरत श्रकेली है श्रौर बच्चे दो, शायद इसे मेरी मदद की ज़रूरत हो, मैंने श्रपनी सीट पर से उठने में देर की! लेकिन

श्रीरत के हलके से रूखेपन से जाहिर हुन्ना कि उसे मेरी मदद दरकार नहीं है, इसलिए मैं एक भले श्रादमी की तरह उठकर चल दिया।

कुछ क़दम चलने के बाद मैंने यों ही घूमकर देखा कि वह श्रौरत उठकर द्रवाजे की तरफ बढ़ रही है। लेकिन उसके कदम उखड़े-उखड़े दिखाई देते थे। वह एक टाँग से कुछ लंगड़ा कर चल रही थी।

में सोचने लगा कि काश इसकी टाँग में यह दोष न होता। ऐसी मुन्दर स्त्री ग्रौर यह ऐव!

एकाएक हमारी निगाहें मिलीं—शायदं वह समके बैठी थी कि मैं चला गया हूँ। मुक्ते एक बार फिर अपने सामने पाकर वह परेशान सी हो गई, जैसे कह रही हो—'आखिर तुमने मुक्त लंगड़ाकर चलते हुए देख लिया न?'

लिङ्जित होकर उसने स्रपना गुलाबी होता हुत्या चेहरा भुका लिया स्रोंर किर जैसे रूठकर मुँह दूसरी स्रोर कर लिया।

में उसे मनाने के लिए आगे बदा और उसके सामने जा खड़ा हुआ। उसके चेहरे का निरीच्या करते हुए मैंने मन ही मन कहा—देवी! तुम बहुत सुन्दर हो, तुम सुन्दरता की पुतली हो, तुम क्या जानो में इन कुळु मनोहर च्याों के लिए तुम्हारा कितना कृतत हूँ !..... और फिर मैंने ज्या ऊँची आवा ज़ में कहा—''मांफ कीजिएगा—आप कुछ परेशान सी नजर आती हैं। क्या आपको कहीं जाना है ९ टाँगा लाऊँ ?....या आपको किसी का इन्तजार है १"

उसने सिर पर दुपट्टा सँवारते हुए जवाब दिया—"जी, जाना तो करीब ही है...बह नहीं ऋाए...नौकर को मेज देते...नौकर को तो ऋाना ही चाहिए था...!"

मैंने त्रागे बदकर लड़की को गोद में उठा लिया श्रीर बोला— "चलिए मैं श्रापको कोड श्राफ"।"

वह चिना कुछ कहे मेरे साथ हो गई।

### कुछ च्राण

ग्रामी हम पन्द्रह बीस कदम ही चले होंगे कि वह बोल उठी— "लीजिए वह लड़का...हमारा नौकर चला त्रा रहा है।"

हम रुक गए । मैंने भिन्मकते हुए उसकी टाँग की तरफ इशारा करते हुए पूछा—"क्या यह पैदायशी खराबी है ?"

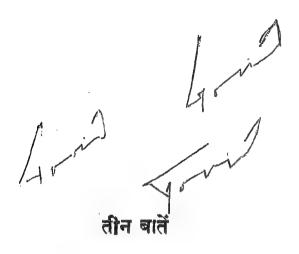
वह जरा रुकी। फिर अपनी आँखें मेरी आँखों में डाजते हुए मुस्कराकर बोली—"जी नहीं.....जब फसादियों ने हमारे घर पर हमला किया तो एक शुरूवीर ने लाठी बुमाकर मारी थी..."

मेरा दिल बैठने लगा । काँपते हाथों से मैंने बच्ची को नौकर की तरफ बढ़ाया ..मेरे माथे पर ठएडे पसीने की बूँदें फूट पड़ीं। काँपतें हुए हाथ से जेव में रूमाल ट्योलने लगा।

विदाई के समय मैंने कुछ कहना चाहा लेकिन श्रोंठ फड़फड़ा कर रह गए श्रोंर मैं कुछ इस श्रन्दाज से दो कदम पीछे हटा जैसे वह पुरानी बाबुिलयों की मुन्दर राजकुमारी हो। मेरी श्राँखें मुक कर उसके कदमों पर जम गईं। मैंने कल्पना में उसके पाँव पर सिर रख दिया।

फिर उचटती हुई नजरों से उसकी तरफ देखा तो मालूम हुआ कि अब उन आँखों में न वह रूखापन था, न होंठों पर सखती । और फिर मुक्ते यों महसूस हुआ कि वह मेहरबान होती हुई किसी अभिमानी मिलका की तरह कह रही हो—"मिलिका खुश हुई ...मिलिका ने न सिर्फ तुम्हें बिलक तुम्हारी सारी कीम को माफ किया...!

एक बार फिर हमने एक दूसरे की ख्रोर कृतज्ञ हिं से देखा ख्रौर फिर हम एक दूसरे से दूर होने खंगे, यहाँ तक कि ख्रन्त में हमेशा के जिए ख्रोमज हो गए।



खेल सिंह गुकद्वारा देरा साहब के सहन में सोया होता तो उसे मुँह ऋँघेरे ही जागना पड़ता। चूंकि गुकद्वारे में सबेरे ही सबेरे राब्द-कीर्तन आरंभ हो जाता था और सहन की सफाई के लिए मुसाफिरों को जागना पड़ता था, इसलिए वह छत पर देर तक सोया रहा। यहाँ तक कि सूरज निकल आया और तेज धूप में शेरे-पंजाब महाराज रंजीतसिंह की समाधि का कलस जगमगा उठा।

कीर्तन त्रारम्म हो चुका था त्रौर गुरू-प्रेम के मतवाले नर-नारी एकत्र हो रहे थे। खेल सिंह को ऋपनी सुस्ती पर बड़ी शर्म ऋाई। जब वह गाँव में था तब कमी इतनी देर से नहीं उठा था किन्तु जब से वह लाहौर

### तीन त्रातें

श्राया था, दिन भर श्रावारागर्दी करने के बाद इतना थक जाता था कि सूर्योदय तक सोया रहता ।

लेटे-लेटे उसने अपने पाँवां पर निगाह डाली । उसके पाँव बड़े-बड़े थे और टखनों की हिड्डियाँ किसी बैल की हिड्डियाँ से कम नहीं थीं । उसकी टाँगें बहुत लम्बी थीं और लम्बी दौड़ों में भाग लेने के कारण वे मज़बूत और सुडौल हो गई थीं ।

कुछ देर इसी तरह लेटे रहने के बाद वह सहसा उछलकर उठ बैठा। इधर-उधर निगाह दौड़ाई। जो लोग रात को उसके साथ छत पर सोये थे उनमें से ऋधिकांश जा चुके थे। उसने सहन की द्योर भाँककर देखा, जहाँ स्त्रियाँ छोटे-छोटे बूँघट निकाले हाथों में दोनों द्योर कटोरियाँ थामे इधर-उधर घूम रही थीं।

त्रपने घर में भी वह इसी तरह उछ्जाकर उठ बैठता था। यहाँ उसे कोई काम न था। पहाड़-सा दिन काटे नहीं कटता था। चार दिनां से वह गुरुद्धारे के लंगर से रोटी ला रहा था। थोड़ी-सी नक़दी, जो उसके पास थी उसमें से शर्वत द्यौर लस्सी पीने के लिए केवल कुछ ख्राने बच गये थे ख्रौर वह नहीं जानता था कि इसके बाद उसका निर्वाह कैसे होगा। वह सज्जनता का कुछ ऐसा कायल भी नहीं था। वह लटके हुए कल्लांवाले महाजनों को बड़ी मयानक दृष्टि से घूरा करता था। लेकिन यह लाहौर था। एक चहल-पहल-लगातार लोगों की रेल पेल... कोई इक्का-दुक्का व्यक्ति मिल जाय तो वह एक ही घोल जमाकर सब कुछ हथिया ले। उसे याद ख्राया कि पाँच छः महीना पहले वह ख्रौर उसके साथी गाँव के एक साहूकार के घर में ख्राधी रात के समय जा घुते। जब कुछ हाथ न ख्राया तो जल्दी में उन्होंने तेरह बोरियाँ गेहूँ की उड़ा लीं लेकिन पकड़ लिये गये। तीन साथी तो सज़ा पाकर बड़े घर पहुँच गये किन्तु उसका ख्रौर उसके एक साथी का जुर्म प्रमाणित न हो सका... भविष्य के लिये उसने कसम तो नहीं लाई लेकिन सावधान हो गया। ...

सावधानी के कुछ और भी कारण थे... एक तो गिरफ्तारी की हालत में उसे बचाने वाला कोई न था बाप मर चुका था और माँ बेचारी ग्रासहाय थी। दूसरे ग्रामरकीर ने जिसके साथ उसे बहुत ग्राधिक प्रेम था श्रीर जो बड़ी कोमलांगी और धार्मिक विचारों वाली युवती थी, खेल सिंह से साफ कह दिया था कि यदि तुम जेल चले गये तो मैं कुछ खाकर मर जाऊँगी। खेल सिंह जानता था कि वह जिद्दी लड़की जो कुछ कहती है उसे पूरा कर दिखायेगी। श्रान्त में उसकी प्रेमिका और उसकी माँ ने मिल-जुलकर उसे इस बात पर राजी कर ही लिया कि वह शहर में जाकर कोई नौकरी खोजे ताकि वे लोग सुख से जीवन बिता सकें।

उसकी प्रेयसी अमरकीर अपनी आयु की अपेक्षा कहीं अधिक सियानी श्रीर दरदशों थी। उसने खेल सिंह के हृदय में बजाय श्रावारगी के घर का प्यार पैदा करने की चेष्टा की । उनका एक घर होगा । वे दोनों खूब मजे में बड़े प्यार से इक्ट रहा करेंगे। उनके यहाँ नन्हें मन्ने बच्चे पैदा होगे। फिर उन्हें कितनी प्रसन्नता प्राप्त होगी। खेल सिंह की मन्द बुद्धि इन बातों को समभने में ग्रासमर्थ थी। उसका ग्राक्खड़ हृदय घर के श्राकर्षण से उदासीन ही रहा । किन्तु जब जब शाम के धुँधलके में कस्सी की पटडी पर ऋमरकौर गीली मिट्टी का तसला सिर पर जमाये हँस-हँस कर इस प्रकार की बातें करती तो उसकी तेजी से घुमने वाली जमकदार श्राँखें श्रीर पतले-पतले होंठ उसे बहुत ही भले प्रतीत होते। उसकी जीम बाछों पर खिलाने लगती, मानों श्रमरकौर मिठाई का दोना हो। यदि वह ग्रामर कौर का ऐसा ही प्रेमी था तो घर, घर का प्यार ग्र्मौर बच्चे तो मामूली बातें थीं। लेकिन जब अमरकौर देखती कि वह उसकी भ्रोर ध्यान देने के बजाय लोलप दृष्टि से उसके गालों श्रीर होठों की ही श्रीर देख रहा है, तब सिटपिटाकर टूटी हुई कमानी वाली घड़ी की भाँति मौन हो जाती।

"श्रोहो-हो-हो।" खेल सिंह उसे दोनों बाहों में उचक लेता। उसकी [ १३८ ]

# तीन बातें

छोटी-छोटी मूँ छे काँपने लगती, "मई श्रमरो ! देखो मुँह मत फलाश्रो । घरम से, जो तुम कहोगी वही करूँगा।"

"तो मैं क्या कह रही थी...तुमसे ?" अमरकौर चमककर पूछती। "मुनो अमरो ! मेरी मोटी अक्रकल इन बातों को नहीं समस्तती। तुम मुक्ते समक्ताने की चेष्टा मत करो। बस मुक्ते इतना बता दो कि मैं क्या करूँ?"

फिर वह उसके तमतमाते हुए गांखों पर होंठ रख देता। श्रमर-कौर उसे प्यार करने को छुट्टी भी दे देती श्रौर साथ ही फटकारती भी जाती। देखो !...कोई श्रा रहा है...कोई देख लेगा...श्रव मैं यहाँ कभी नहीं श्राऊँगी, इस जगह...वसं देख लेना, हाँ !"

उसके घर के पास ही अमरकोर की गाय बंधी रहती थी। संध्या समय वह वहाँ दूध दुहने के लिए आती थी। जब उधर से वह गुज़रता तब उचककर एक दृष्टि उधर अवश्य डालता। यदि अमरकोर दिखाई देती तो पहले इधर-उधर देखकर इतमीनान कर लेता और फिर उसे सम्बोधित कर गुनगुनाने लगता:

नी-लच्छीये बादाम रंजिए लेन् लैन कबृतर श्राया ।

... जो बोले सो निहाल । गुरू के मतवालों ने नारा लगाया। तब खेल सिंह चौक उठा। श्रव प्रसाद बाँटा ही जाने वाला था। उसने इधर-उधर देखकर श्रपना कंघा सँभाला श्रौर श्रस्त-ध्यस्त बालों को समेटने के बाद जल्दी से पगड़ी बांधी श्रौर चादर कन्धे पर डाल तहमत की सिलवर्टें ठीक करता हुश्रा सीढ़ियों से नीचे उतरा। मुँह पर पानी के छींटे दिये श्रौर पगड़ी के शमले से चेहरा पोंछा। गुक्दारे के दरवाजे पर नीहंग सिक्खों को खबे देख बबे श्रद्धापूर्ण दंग से पाँच भी घो डाले श्रौर दरवाजे को चौखट लाँघकर श्रन्दर घुसा। पहले एक बार उसने भूल से चौखट पर पाँच रख दिया था तो सेवादार ने उसे श्रौंखें दिखाकर टोक दिया था।

प्रसाद बाँटा जा रहा अन्य पहेंचे तो सामने से हाथ बढ़ाकर प्रसाद लिया फिर पैंतरा बदलकर दूसरी छोर हाथ बढ़ाकर प्रसाद ले लिया। प्रसाद देने वाले को तिनक सन्देह हुछा। जब थोड़ा चक्कर काटकर उसने तीसरी बार हाथ बढ़ाये तब प्रसाद बाँटनेवाले को गुस्सा छा गाया।

"सर्दार जी ! बड़े श्रफ़सोस की बात है।"

वास्तव में अफ़सोस की बात थी किन्तु वह सबेरे उसी हलुवे से नाश्ता किया करता था और ऊपर से पाव भर दही की लस्सी पी लेता था। गाँव में तो हर व्यक्ति को पाव भर हलुवा दिया जाता था किन्तु यहाँ ये शहरी लोग छः माशा हलुवा देकर रह जाते थे। अत्रयस्य खेल सिंह ने कहा—"ज्ञानी जी! इतना सा हलुवा तो हमने ज़िन्दगी में पहली बार देखा है...यह तो बस हथेलियों से चिपककर रह जाता है।"

प्रसाद बाँटने वाले के तेवर विगड़ गये—''सरदार जी! प्रसाद आखिर प्रसाद है...इसका यह मतलब नहीं क प्रसाद ही से पेट भर लिया जाय।"

खेल सिंह इस प्रकार के तेवरों से अनिमन्न था। चुपचाप एक ग्रांर सरक कर खड़ा हो गया। जब सभी मतवाले चले गए तो वह एक कोने में सीमेन्ट के ठयड़े फर्या पर पालथी मारकर बैठ गया। इतने में ज्ञानी जी दीख पड़े ग्रीर एक बड़े दोनों में पाव-डेढ़ पाव हलुवा डालकर उसे दे गये। खेल सिंह चिकत रह गया। जब हलुवा खाकर वह बाहर निकला तो पाव भर दही में सेर भर पानी डालकर तस्सी पीने लगा। लस्सी पीने के बाद वह सर्दार बुद्ध सिंह टिम्बर मरचेयट की दूकान ग्रीर चल पड़ा। दो दिन पहले वह उनके यहाँ जा चुका था। सर्दार साहब उसके गाँव के ही रहने वाले थे। उन्हें एक नौकर की ग्रावश्यकता थी ग्रीर व खेल सिंह को नौकरी देने पर राजी हो गये थे। किन्तु यह शब्द बुद्ध सिंह के वेटे हरनाम सिंह ने कहे थे, इसीलिए वह बुद्ध सिंह से मिलने के लिए

### तीन बातें

स्राज फिर बहाँ स्राया था। बुद्ध सिंह को व्यस्त देख कर खेल सिंह कोने में पड़ी हुई चारपाई पर बैठकर ऊँघने लगा।

खेल सिंह कुछ पढ़ा-लिखा भी था। दो कल्लाएँ पास कर चुका था। तीसरी कल्ला में एक बार मास्टर ने उसे अधिक देर तक मुर्गा बनाए रखा तो उसने पढ़ता-लिखना छोड़ दिया था। इसके अतिरिक्त उसने क्रॅअंजी पढ़ने की कोशिश भी की थी। वह 'ए' से 'ज़ेड तक सारे अल्हर पढ़ लेता था आरंर उनमें से कुछ लिख भी सकता था।

छुट्टी पाकर सर्दार बुद्ध सिंह उसकी ख्रोर ख्राकृष्ट हुए। उनकी हिष्ट कमजार थी और कान भी कुळ बहरे थे। ख्रतएव खेल सिंह को उनके निकट पहुँचकर और चिल्लाकर ख्रपनी बात कहनी पड़ी। बड़ी मुश्किल से बूढ़ें सर्दार ने बताया कि उनके पहले नौकर का ख़त कल ही ख्राया है ख्रीर वह दी-चार दिन में वापस ख्राने वाला है। इसलिए वे उसे नहीं रख सकते।

इधर से जवाब पाकर खेल सिंह ने सबील से पानी पिया ग्रौर शहर की ग्रोर चल दिया। ग्रब वह बिल्कुल निराश हो चुका था। उसने सोचा, ग्राज सेर करके कल गाँव वापस चला जाय। वह बड़ी-बड़ी ग्राशाएँ लेकर शहर ग्राया था लेकिन ग्रब क्या मुँह लेकर वापस जायगा? वह एक स्वच्छन्द प्रकृति का युवक था। इस प्रकार के बन्धनों ग्रौर विवशतात्रां से कभी उसका सामना नहीं हुग्रा था। बृस्ते-वामते वह शाही महल्ले के निकट एक धर्मशाला में पहुँच गया। वह दिन में एक वार उस धर्मशाला में चला जाया करता था। वहाँ का ग्रन्थी एक ग्रच्छा भला युवक था। उन दोनों में कुछ धनिष्टता हो गई थी किन्तु खेल सिंह ने उसे कभी ग्रपने भेद न बताये थे। ग्रन्थी उसे ग्रमी तक एक खाता-पीता जमींदार समक्ता था।

समय काटने के लिए खेल सिंह दोपहर को वहाँ पहुँच जाता। वे दोनों फर्श पर ठएडे पानी का छिड़काव करते और बिजली के पंखे के

नीचे ईंटों के बने हुए ठरखे फर्श पर लेट जाते। इधर-उधर की गर्पें हाँकते रहते। नींद खाती तो सो भी जाते।

त्राज वह समय से कुछ पहले ही पहुँच गया था। जब सीढ़ियाँ चढ़ कर हाल में प्रवेश करने लगा तब उसने देखा कि बराल वाले कमरे में प्रन्थी रीठों के पानी से सिर धो रहा है। उसे देख प्रन्थी ने टहाका लगाया। दो-चार बातों के बाद खेल सिंह ब्रान्दर चला गया। उसने सुराही से गिलास में पानी उँडेला क्रीर धीरे-धीरे पीने लगा। वास्तव में उसे बड़ी भूख लग रही थी। कई दिनों से वह लंगर की रोटियाँ खा रहा था। श्रव उसे शर्म महसूस हो रही थी। उसने सोचा कि श्रव वह कम से कम एक जून का भोजन ही वहाँ नहीं करेगा।

पंखा छोड़कर उसने पगड़ी उतारी श्रीर फर्श पर लेट गया। प्रनथी नहाने के साथ-साथ वार्ते भी किये जाता था। उसकी वेतुकी वार्तो से खेल सिंह ग्रपनी भूल को बहलाने लगा। थोड़ी देर बाद प्रन्थी श्रपने लम्बे-लम्बे बाल निचोड़ता हुग्रा भीतर ग्राया ग्रीर एक बहे मजे की बात श्रुक कर दी। इतने में एक श्रादमी उन्हें भोजन के लिए बुलाने ग्राया। श्राद्धों के दिब थे। खेल सिंह मन ही मन प्रसन्न हुग्रा कि ग्राज पेट मर भोजन मिलेगा। मामूली इनकार के बाद वह मोजन पर बैठ गया। भोजन कर चुकने के बाद उसे ऐसी गहरी नींद ग्राई कि शाम तक उसकी ग्राँख न खुली।

उठते ही उसने नल के ठरडे पानी से स्नान किया तो तबीयत खिल गई। यन्थी ने शक्कर के ठरडे शरबत से सत्तू घोल रखा था। उसने अपूर्व बन्द करके दो लोटे लिये। वह सत्तत्र्यों का बड़ा शौकीन था।

दोवारा पगड़ी बाँधकर उसने ग्रन्थी से हाथ मिलाया ग्रीर बतलाया कि उसका काम खतम हो चुका है। ग्रीर वह कल ग्रपने गाँव लौट रहा है। इस पर ग्रन्थी ने बड़े तपाक से हाथ मिलाया ग्रीर उससे कहा कि जब कभी वह लाहीर न्राये तो उससे ग्रवश्य मिले।

### तीन वातें

यहाँ से वह बाजार की सैर करने के लिए चल खड़ा हुद्या । स्थनार-कली में घूमता हुद्या वह नीला गुम्बद जा निकला । वहाँ उसने लकड़ी के बड़े-बड़े तख्तों पर विभिन्न प्रकार के चित्र लगे देखे । एक चित्र में पहाड़ का दृश्य दिखाया गया था । पहाड़ में जगह-जगह बिल बने हुए थे । इधर-उधर पत्थरों पर बड़े-बड़े चूहे दौड़ते हुए दिखाये गये थे । नीचे लिखा था :—

''जापानी चूहे हैं, इन्हें मार भगाखो।"

यह चित्र देख कर खेल सिंह बड़ा प्रसन्न हुन्ना। उन चूहों की न्नाकृति चड़ी ही हास्यास्पद थी। यानी शरीर तो चूहे की माँति न्नीर सिर मनुष्यों के से। कुछ चूहों ने ऐनक भी लगा रखी थी। वह सोचने लगा कि जब वह गाँव में जाकर न्नामरकौर से इन चूहों की चर्चा करेगा तो वह कितनी प्रसन्न होगी, कितनी विस्मित होगी। फिर उसने दिमाग पर जोर डाला कि न्नाखिर में जापानी हैं कौन ? ये कैसे विचित्र चूहे होते हैं। उसने न्नाज तक ऐसे चूहे नहीं देखे । उसने पगड़ी सरकाई, सिर खुजाया, बहुत सोचा लेकिन कुछ समक न सका।

इतने में किसी ने उसके कन्धों पर हाथ रख दिया। उसने चूमकर देखा कि उसका एक पुराना दोस्त हर्षा सिंह था। धूप में उसका चेहरा काले बूटों की भाँति चमक रहा था। आधी पगड़ी सिर पर वँधी हुई थी और आधी इधर-उधर भूल रही थी। खेल सिंह उछ्छल कर उससे लिपट गया।

हर्षा सिंह की खेल सिंह से बड़ी घनिष्टता रही थी । वह बलिष्ठ शरीर का साहसी युवक था। उसे ऐसे-ऐसे हथकरण्डे याद थे कि बड़े-बड़े उस्ताद उसका लोहा मानते थे। दोनों बचपन ही से बहुत गहरे दोस्त थे। हर्षा सिंह कबड़ी बहुत ग्रन्छी खेलता था। उसका शरीर मछली की माँति चिकना और खरगोश की माँति फुर्तोला था। वह मेड़िये की तरह खूँख्वार और मकार था। जवान होते ही उसने बड़े पैमाने पर डाके

डालने शुरू कर दिये थे। उसने इलाके के एक नामी डाकू सुन्दर सिंह से भी मेल-जोल पैदा कर रखा था और उन दोनों ने मिलकर बड़े-इंड़े मैदान मारे थे। बाद में सुन्दर सिंह को फौँसी हो गई ग्रौर हर्षा सिंह लापता हो गया। ग्राज उसे ग्रपने सामने देखकर खेल सिंह को वडी प्रसन्नता हुई । दोनों एक हलवाई की दुकान में बसे । हर्षासिंह ने दो सेर मिठाई खरीदी और मिठाई खाने के बाद दोनों ने पेट भर कर लस्सी भी पी।

हर्षा सिंह ने बताया कि उसने जिला श्रमृतसर में दो ऐसे घर ताड़ रखे हैं जहाँ से माल उठा लाना कुछ बड़ा कठिन नहीं हैं। यह सुनकर खेल सिंह वड़ा प्रसन्न हुआ। इस प्रकार की बातचीत से उसे गहरी दिल-चस्पी थी। उसने भविष्य की बड़ी सुन्दर कल्पना की। ग्रौर उन दोनों में निश्चय हो गया कि वे कला फिर इसी जगह मिलेंगे । यह निश्चय कर वे दोनों एक दूसरे से विदा हो गये।

हर्षा सिंह के चले जाने के बाद थोड़ी देर तक खेल सिंह को ऐसा अनुभव हुआ मानो उसके हृदय पर से भारी पत्थर हट गया हो। किन्तु जब उसे श्रमरकौर का ख्याल श्राया तो वह कुछ निराश-सा हो गया। यदि उसे मालूम हो गया कि मैंने फिर डाके डालने शुरू किये हैं तो वह सन्त्रमुच विगड जायगी। उसे चोर की पत्नी वनना कभी पसन्द न था। इस पर उसने मन ही मन ग्रामरकीर को दो-तीन गालियाँ भी दी..... लेकिन वह उससे प्रेम करता था, इसलिए उसकी उपेचा नहीं कर सकता था । उसने फिर गम्भीरता से सोचना शुरू किया। यदि यह सम्भव हो सके कि वह केवल एक बार डाका डाल लो फिर चाहे जिन्दगी भर के लिए इस पेशे को छोड़ दे। लेकिन यदि वह गिरफ्तार हो गया तो उसका जीवन वरबाद हो जायगा । श्रमरकौर से हाथ धोने पहेंगे । माँ को श्रालग दुख होगा ऋौर वह स्वयं जेल में पड़ा सबेगा।

इसी उधेड़-बुन में वह चला जा रहा था। यद्यपि यह काम बड़ा

कांटन था किन्तु वह स्वस्थ ग्रीर मजबूत होने के बावजूद कुटिल नहीं था। वह नहीं जानता था कि ग्राखिर क्या करे ? सड़कों पर ग्रसँख्य मोटरें, बहुमूल्य वस्त्र धारण किये पैसे वाले लोग, बड़ी-बड़ी दुकानें ग्रीर ऊँचे-ऊँचे मकान देखकर वह हैरान हो रहा था। ग्राखिर इन सब के लिए इतना रुपया कहाँ से ग्राता है ? वह क्यों ग्रपनी प्रेयसी के साथ शान्ति-पूर्ण जीवन व्यतीत करने में ग्रसमर्थ है ? इसी प्रकार के विचारों में लीन वह एक बाग में जा निकला। एक रौस के किनारे बड़े-से बोर्ड पर मोटे-मोटे ग्रच्हरों में लिखा था:—

'वीरता का पुरस्कार!'

वह सोचने लगा कि 'पुरस्कार' क्या होता है। फिर वह गौर से उस पदक की ग्रोर देखने लगा जिसके नीचे लिखा था—'विक्टोरिया कास'— मंगल सिंह, ग्राठवीं राजपूताना राइफल को वीरता के पुरस्कार स्वरूप विक्टोरिया कास प्रदान किया गया।'

यह नहीं जानता था कि विक्टोरिया कास होता क्या है श्रौर कैसी बहादुरी पर दिया जाता है । श्रौर फिर विक्टोरिया कास मिलने के बाद क्या होता है ।... ऊब कर वह परे एक बेंच पर जाकर बैठ गया । उसे अपनी बुद्धिहीनता पर बहुत ही दुख हुआ। वह फिर श्रपने विचारों में खो गया श्रौर श्रपने माथे को उँगिलियों से बजा-बजाकर सोचने लगा कि वह क्या करें श्रौर क्या न करें वह हर्षा सिंह से दोबारा मिले या न मिले।

बेल सिंह वास पर लेट गया । एक बाजू सिर के नीचे रख लिया, दूसरा मांथ पर और ऋषखुले नेत्रों से दूर-दूर तक देखने लगा। सामने टएडी सड़क के पहले सिरे पर बहुत लम्बा-चौड़ा तखता लटका हुआ था। उस पर एक मुन्दर स्त्री का चित्र बना था। उस स्त्री का चेहरा उसके पूरे कद के बराबर था। बड़ी-बड़ी आँखों और लाल-लाल गालों वाली वह अत्याधिक मुन्दर स्त्री थी। वह चिकत हो कर सोचने लगा कि आखिर यह किस स्त्री का चित्र है। नीचे अंगरेजी के मोटे-मोटे अस्त्रों में कुछ

ालखा था। उसने सोचा, शायद यह किसी मेम की तस्वीर है, यद्यपि उसने देशी कपड़े पहन रखे थे। उसने सुना था कि ख्रब मेमें भी देशी कपड़े पहनने लगी हैं किन्तु इस तस्वीर को बाजार में टाँगने की क्या ख्रावश्यकता थी। पर-पुरुषों के सामने अपने सौन्दर्भ का प्रदर्शन क्यों किया गया। फिर वह चित्र की लम्बाई-चौड़ाई को देख-देखकर हैरान होने लगा—"बल्ले-बल्ले" उस बोर्ड के साथ एक ख्रौर जो छोटा-सा तखता था उस पर मोटे-मोटे ख्रच्हों में कुछ लिखा था। उसने माथे से हाथ हटाकर ख्राँखें ख्रौर भी ख्रिषक खोल लीं। देर तक ग़ौर करने के बाद वह पढ़ सका:—

"इिएडयन ग्राम्ड कोर को ग्राप जैसे नवजवानों की जरूरत है।" वह उछल पड़ा। यह इषिडयन आमड कोर नया ही नाम है। हर-वंस कौर, प्रेम कौर, जीत कौर तो उसने सुन रखे हैं लेकिन इधिडयन श्राम्ड कोर बिलुकुल नया नाम है। शायद किसी श्राँगरेज श्रीरत का नाम हो । इधर-उधर कुछ लोग चूम रहे थे । उसके मन में आई कि किसी से उस औरत के विषय में पूंछे । लेकिन ग्रौरत का मामला था, इस तरह की बात निर्भाकता से पूछते हुए उसे शर्म सी महसूस हुई। ग्रातएव उसके मन की बात मन ही में रह गई। आखिर उसने अपनी चादर को तह करके उसे सिर के नीचे रखा श्रीर लेट गया । ठन्डी-ठन्डी हवा चल रही थी। हवा में एक सुखद-सी नमी थी। उसे नींद-सी ग्राने लगी। लेटे-लेटे वह इन्डियन ग्राम्ड कोर के बारे में फिर सोचने लगा । धीरे-धीरे उसकी समभ में कुछ कछ ग्राने लगा कि इस स्त्री का चित्र टाँगने का क्या उद्देश्य है। उसने सन रखा था कि लाहौर में बड़ी-बड़ी बदमा-शियाँ होती हैं। लेकिन क्या कोई स्त्री इतना साहस कर सकती है कि श्रपनी तसवीर इस तरह बाजार में लगाकर दूसरे तस्ते पर लिखवा दे कि "इन्डियन ग्राम्ड<sup>९</sup> कीर को ग्राप जैसे नवजवानों की जरूरत है।"

उसने परियों की कहानियों में एक सुन्दर रानी का किस्सा मुना था।

उसकी जवानी बस एक कयामत थी। जो भी उसकी स्रोर श्रॉख उठाकर देख लेता, श्रपने होश-हवास खो बैठता। वह नित्य नये नौजवानों से गाँठ जोड़ा करती श्रीर जब वे बेकार हो जाते तो उन्हें मगर-मच्छों के तालाय में फेंकवा देतीं...किन्तु वह तो कहानी थी लेकिन यह श्रीरत ?—श्राख़िर इसे नौजवानों की क्या जरूरत है ? क्या इसका चाल-चलन भी खराय है ? क्या यह भी नौजवानों को बेकार करके परे फेंक देती होगी ? क्या सरकार ने कोई ऐसा कानून नहीं बनाया जो ऐसी बदचलन श्रीर नय-जवानों को बरबाद कर देने वाली स्त्रियों पर लागु हो सके ?

धीरे-धीरे बाग में लोगों की उपस्थिति बढ़ने लगी। काली-काली आयाएँ बच्चों की गाड़ियाँ टकेलतो हुई आई। कुछ शौकीन-गिज़ाज कालेज के छोकरे अंगरेजी में गिट-पिट करते हुए इधर-उधर मटर-गश्ती करने लगे। कई बढ़े खूसट अपनी चिकनी खोपड़ियों पर हाथ फेरते हुए वंचों पर आ बैठे। पास के पेड़ से रेडियों की आवाज आने लगी। उसने पहले भी रेडियों सुना था। लेकिन बाग में सहसा रेडियों की आवाज सुनकर वह चौंक पड़ा। इधर-उधर के लोग भी रेडियों वाले पेड़ के पास जमीन पर बैठ गये। उसने अपनी ढीली पगड़ी को ठीक किया और सँभल बैठा। इतने में रेडियों से 'मिर्जा साहवान' के बोल सुनाई दिये। उसके मन पर मस्ती छा गई। एक छाबड़ी वाला उधर आ निकला। उसने जेब टटोलकर देखा, एक टका बच गया था। अथ यही उसकी कुल पूँजी थी। उसने छाबड़ी वाले को आवाज देकर दो पैसे के कचालू लिए और उन्हें तिनके में फंसा-फंसाकर खाने लगा।

कचालू खाने के बाद वह उठा। नल से पानी पिया और मूँछुँ पोंछता हुआ रेडियो बाले पेड़ की ओर बड़ा। वहाँ एक बड़ा तख्ता लगा हुआ था, जिस पर नीचे ऊपर तीन आदमी मागे चले जा रहे थे। उनके पीछे तीन आदमी बन्दूके थामे उनको दौड़ा रहे थे। हर जोड़े के साथ किनारे पर लिखा था:—

"इटली में दुश्मन की भगाने वाला कौन ?

पंजागी जवान ।"

"जर्मनों को कौन भगा रहा है ?

पंजाबी जवान।"

"जापानियों को कौन मार भगायेगा ?

पंजाबी जवान ।"

वह गौर से उन तस्वीरों को ख्रोर देखने लगा। कैसी हास्यास्यद स्रतें बना रखी हैं। ऐसा लगता है मानो भागने ख्रौर भगाने वाले लकड़ी के बने हो। वह देर तक ख्राँखें फाड़कर बोर्ड की ख्रोर देखता रहा। फिर उसने एक लम्बी जँभाई ली ख्रौर जोर से खाँसकर बलगम उगला। फिर ख्राँसें फायकाता हुन्या रेडियो की ख्रोर बढ़ा। ख्रावाज़ पेड़ की टहनियों में से ख्रा रही थी। उसने सोचा कि ख्रगर रात को चढ़कर रेडियो उठा लिया जाय तो कैसा रहे। वह पेड़ के तने ख्रौर टहनियों पर नज़र दौड़ा-दौड़ाकर ऊपर चढ़ने की सम्भावनाद्यों पर विचार करने लगा। जब उसने हथर-उथर घूमकर देखा तो उसे मालूम हुन्या कि पेड़ पर सिवाय भोंपू के ख्रोर कुछ भी नहीं है। एक बाबू ने उसे बताया कि रेडियो पर सरकारी कमरे में बन्द है। वहाँ से बिजली का एक तार पेड़ से बाँध दिया गया है ख्रौर तार के ख्रागे मोंपू लगाया गया है।

लेल सिंह निराश होकर एक ग्रोर बैठ गया। यहाँ भी छोटे-छोटे बोर्ड लगे थे। एक पर लिखा था—'हिन्दुस्तान को बचाग्रो।' उसने ग्रपने कसे हुए जूड़े को दीला किया ग्रोर सोचने लगा कि हिन्दुस्तान कहाँ है। वह यू. पी. के लोगों को हिन्दुस्तानी सममता था ग्रोर बस इतना जानता था कि पूर्व की तरफ कोई देश है जिसे लोग हिन्दुस्तान कहते हैं। वहाँ के लोग दुक्ले-पतले होते हैं। उनकी जवान भी खूब चटर-पटर-सी होती है। फिर वह मन ही मन में कहने लगा, न जाने बेचारे

### तीन वार्ते

हिन्दुस्तान पर क्या आफ़त आ पड़ी है शिरि-धीरे वह फिर अपनी उलफनों में गुम हो गया।

वह तिनके से दाँत कुरेदने लगा। अब उसे सख्त भृख लग रही थी। उसते सोचा कि आज वह ज़रा जल्द ही गुम्हारे पहुँच जाथगा। नहीं तो अगर भोजन का समय निकल गया तो उसे फिर भृषा रहना पड़ेगा। लाहोर में उसका जी नहीं लगा। उसे इस बात का बड़ा रंज था कि उसे कोई नौकरी नहीं मिल सकी। उसके पास बैठा हुआ लड़का एक दूसरा बोर्ड पढ़ने लगा:—

"हिन्दुस्तान की जय।"

"त्रा जायो नौजवान! दुश्मन भाग रहा है। यही मौका है उसका पीछा करने का।"

एक सिपाही लोहे की टोपी पहने ऋौर दोनों हाथ उठाये तासकार रहा था। उसके एक हाथ में बन्दूक थी दूसरा खाली था। उसके पिछे-पीछे ऋौर सिपाही भी चले द्या रहे थे।

खेल सिंह ने फिर हाथ फैलाये ग्रीर मुँह खोलकर एक लम्बी-सी जॅमाई ली।

उसके चौड़े मुँह में मोटे-से मोटे दुश्मन की खोपड़ी त्र्या सकती है ग्रीर उसकी फौलादी उंगलियाँ तगड़े से दुश्मन का टेटुग्रा दवा सकती हैं। लेकिन दुश्मन था किथर !

उसकी भृख तेज होती जा रही थी। दिमारा में विचारों का उथल-पुथल बढ़ता जा रहा था। लोग शोर मचा रहे थे। रेडियो गीत मुना रहा था। कुत्ते भींक रहे थे...वह चादर भाड़कर उठ खड़ा हुआ। ग्रव वह ग्राधिक सहन नहीं कर सकता था। वह गुरू के लंगर में जल्दी से जल्दी पहुँच जाना चाहता था।

जब वह बाग के फाटक से निकलने लगा तो उस पर एक फीजी सिक्ख की तस्वीर बनी हुई थी, जिसके गालों पर खूब चर्बी चर्दी थी।

खुशनुमा दाढ़ी खूब कस कर बँधी हुई थी। श्रौर सिर पर गोली सी दोहरी पगड़ी बँधी थी।...उसके एक हाथ की तीन उंगलियाँ उठी हुई थीं दूसरे हाथ की एक उँगली से वह उन उंगलियों की श्रोर इशारा कर रहा था। नीचे लिखा था:—

तीन बातें---

"अच्छी खुराक!"

"ग्रज्छी तनख्वाह !!"

"जल्दो तरकी !!!"

त्रौर नीचे लिखा था:--

"भोजन मुफ्त मिलता है। वदीं, कपड़े, जूते ख्रौर तनख्वाह सब कुछ मुफ्त ही मुफ्त। घर जाने के लिए छुष्टियाँ भी पूरी तनख्वाह पर।" खेल सिंह कुछ देर तक उस तख्ते की ख्रोर घूरता रहा फिर अपनी लम्बी जबान होठों ख्रौर बाखों पर ऐठीं...ख्रौर फिर पता पूछता हुखा

भरती के दफ्तर की स्त्रोर चल पड़ा।

# काली तित्तरी चरीं विच बोले ते उड्डी मूँ बाज पै गया ।

बड़े मज़े में मौला ने चिलम में तम्बाकू ख्रौर उसके ऊपर सुलगते हुए उपले के दो टुकड़े जमा दिये ऋौर फिर मारे सर्दी के दाँत कटकटाता हुन्ना चारपाई पर चढ़ टाँगों पर धुस्सा डाल मगन हो गया ।

रोटी खाने के बाद उसे हुक की बड़ी तलब होती थी। उसने ग्राँखें मूँ दकर दो-चार कश ही खींचे होंगे कि दरवाजे पर दस्तक की श्रावाज सुनाई दी। यह दस्तक उसे बड़ी बुरी लगी। उसने कड़े स्वर में पूछा-"कौन है ?"

१५१ ]

जवाब में फिर खट-खट की आवाज सुनाई दी।

पीर दा ठट्टा छोटा-सा गाँव था। ठीक उसके सिरे पर मौला का कच्चा मकान था जहाँ वह अपनी चूढ़ी माँ और एक विधवा बहन सहित रहता था। गाँव में घुसते समय उसका मकान सामने पड़ता था इसिलए राहगीर उसी से किसी के मकान का पता या अगले गाँव का रास्ता पूळ्जें के लिए दरवाजा खटखटाते थे। लेकिन उस समय आधी रात हो रही थी। और फिर, जाड़ों के मौसम में तो शाम ही से गाँव पर सन्नाटा छा जाता था। न जाने ऐसे वेवक्त कौन आ धमका था। जब मौला को विश्वास हो गया कि उसे उठना पड़ेगा तब उसने हुक की नाल एक और को हटाई और धुस्से को समाँजता हुआ दरवाजे की और बढ़ा।

दरवाजा खोला तो देखा कि बाहर अन्धकार में मँभोले कर का एक सिख खड़ा है। पगड़ी उसके सिर पर मोटे रस्से की तरह लिपटी हुई थी ग्राँर उसके एक सिरे से उसने अपने चेहरे का, ग्राँखों के ग्रातिरिक्त, निचला भाग छिपा रखा था। उसका रंग साँवला था, भवें मोटी घनी ग्रीर लम्बी थीं। ग्राँखों तेज ग्रीर चमकीली। उसकी नाक की जड़ के पास ग्राँखों के नीचे महीन ग्रीर गहरी रेखाग्रों का जाल सा बुना हुग्रा था।...

मौला कोई कटु वाक्य कहते कहते रुक गया। उसने भारी तथा शुष्क स्वर से पूछा--- "तुम कौन हो ?"

नवागन्तुक ने ज्ञ्र्या भर उसकी श्रीर पैनी दृष्टि से देखा श्रीर फिर नोला—"में मॅंबोड़ी गाँव से श्रा रहा हूँ।"

भाँ बोड़ी १ वह तो यहाँ से बीस कोस की दूरी पर है। पर तुन ऐसे बात कर रहे हो जैसे पड़ोस के गाँव से ब्रा रहे हो..."

नवागन्तुक ने वेचैनी से पहलू बदलते हुए कहा—''में डाची पर स्त्राया हूँ।'

मौला को उसके बोलने का ढंग पसन्द नहीं आया। उसने बंपर-[ १५२ ]

वाहों से कहा—"खैर, मुमे इससे क्या मतलब । सवाल तो यह है कि तुम मेरे पास क्यों त्र्याये हो ?"

"मुफे बग्गासिंह भनोड़ी वाते ने भेजा है ।"

यह सुनकर मौला चौकन्ना हो गया । उसने हाथ बढ़ाकर नवागन्तुक का बाजू थाम लिया भ्रौर जल्दी से घीमे स्वर में बोला—''तो यहाँ खड़े क्या कर रहे हो, श्रन्दर चले श्राश्रो न ?"

नवागन्तुक एक ही जस्त में ब्रान्दर ब्रा गया । वह बड़ा मजबूत दिखता था। उसने शरीर पर मोटा खेस लपेट रखा था।

मीला ने ड्योड़ी में से भाँककर भीतर की छोर देखा और इस बात का इतमीनान कर लिया कि उसकी बहन और माँ सबसे पीछे वाली कोठरी में रजाइयों में घुसी पड़ी हैं तो उसने छाँगन वाला द्वार बन्द कर लिया छौर नवागन्तुक से मुखातिब होकर बोला — "मैंने दरवाजा बन्द कर दिया है ताकि हमारी बातों की छावाजें छान्दर तक न पहुँचे।"

नवागन्तुक कुछ नहीं बोला । मौला ने तेजी से बाहर वाले दरवाजे में से भाँककर इधर-उधर निगाह दौड़ाई । पीकी चाँदनी में दूर जोहड़ का पानी पिघले हुए सीसे की टिकली की भाँति दीख रहा था । हवा बन्द थी । श्रीर दूर-दूर तक फैली हुई भाड़ियाँ निश्चल खड़ी थीं । यह देखकर मौला ने ग्रापने दाँतों में श्राटकी हुई हुकों की नाल को होठों में दबीचकर बड़ी निश्चिंतता से गुड़-गुड़ की श्रावाज की श्रीर फिर द्वार बन्द करके लीटा । नवागन्तुक डखोदी के ग्रान्दर बनी हुई खुरली से टेक लगाए खड़ा था ।

"मृख लगी हो तो बतात्रो । खाने-खूने का कुछ बन्दोबस्त करूँ।"
"नहीं मैं खाना खाकर त्र्याया हूँ। पास के गाँव से......बस स्रव काम हो जाना चाहिये।"

"क्यों इतनी जल्दी भी क्या है १"

[ १५३ ]

"मुभे फौरन लौटना होगा।"

"क्यों ?"

"बगो ने यही कहा था। मेरा यहाँ रहना ठीक नहीं ! किसी ने देख लिया तो शक होगा, खामखाह।"

"डाची कहाँ है ?"

''डाची को साथ वाले गाँव में श्रपने एक दोस्त के यहाँ छोड़ श्राया हूँ।''

"श्रोर बन्दूक ?"

"बन्द्क मेरे पास है !"

मौला को ग्राश्चर्य हुग्रा कि इतनी बड़ी बन्दूक इसने कहाँ छिपा रखी है।

इसपर नवागन्तुक ने तिनक भुँभालाकर खेस के नीचे से दोनली बन्दूक दिखाई जिसकी दोनों निलयाँ ऋलग करके उसके कुन्दे सिहत ऋँगोंछे में लुपेट रखी थीं और फिर उस पर रस्सी कसकर बाँघ दी थी।

श्रव मौला समभा । सिर हिलाकर बोला—"श्रच्छा तोड्कर बाँच रखी है।"

"हाँ, वैसे तो छिप नहीं सकती न।"

"おa !"

"ग्रम जल्दी करे। "

''श्रीर कारतस ?"

नवागन्तुक के माथे पर बल पड़ गये। बिगड़ कर कहने लगा--"देखों, में बिलकुल तैयार होकर झाया हूँ। बस अब मुक्ते मौके पर ले चलो।"

"ग्रच्छी बात है ।' यह कहकर मौला ने हुक्के के दो-तीन खूब गहरे-गहरे कश लिये। फिर धुस्से को शरीर पर खूब ग्रच्छी तरह लपेटा ग्रौर ि १५४ ]

मुसकराकर बोला---'उस्ताद तुम्हें मेरे घर का पता कैसे लगा ? किसी से पूछा था ?"

"मैं ऐसा कच्चा नहीं हूँ कि किसी से तुम्हारे घर का पता पूछता फिलूँ। इस तरह तो तुम पर शक किया जा सकता था। बग्गे ने मकान का ठीक-ठीक पता और तुम्हारा हुिलया बता दिया था और कहा था कि वह तुम्हारी राह देखता होगा।"

"हाँ-हाँ, क्यों नहीं।" मौला हँसकर बोला—"बग्गू यह काम किसी मामूली त्रादमी को नहीं सौंप सकता था... श्रन्छा तो लो मैं चला। श्राभी दो-तीन श्रीर श्रादिमयों को भी बुलाना है।"

"बुला लास्रो…पर मैं उनको स्रपनी सूरत नहीं दिखाऊँगा।"

"बेशक-बेशक! जरूरत भी क्या है ?"

यह कहकर मौला चलने लगा तो नवागन्तुक बोला—"हुक्का लेते जाम्रो।"

''क्यों १११

"हुक्का गुड़गुड़ाते चलोगे तो शक नहीं होगा देखने वालों को।"

"यह तो सचमुच खरी बात कही दुमने।"

मौला ने हुक्का उठाया। नाल दाँतों में दबाई श्रौर चिलम से बँधी हुई चिमटी मुलाता, लुंगी लहराता ड्योड़ी से बाहर निकल गया।

नवागन्तुक ने उसके जाते ही किवाड़ भीतर से बन्द कर लिये श्रौर सरकराडों का बना हुआ बालिश्त से ऊँचा मोड़ा घसीटकर सुलगते हुए उपलों से भरी मिट्टी की ग्रँगीठी दोनों टाँगों के बीच रखकर बैठ गया।

मीला के चुओं की भाँति बल खाती हुई सुनसान श्रीर तंग गलियों में से होता हुआ अन्त में एक पुराने कच्चे मकान के आगे खड़ा होकर स्रावाजें देने लगा—"सौदागरा! श्रोए सौदागरा!"

कोई उत्तर न मिलने पर उसने फिर हाँक लगाई—"स्रोए सौदागः! सौदागरा होए!!"

फिर वह इतमीनान से हुका गुड़गुड़ाने लगा। दिमाग में जो तरावट पहुंची तो उसका दिल नवागन्तुक को दुआएँ देने लगा, जिसने हुका उसके साथ भेजवा दिया था।

मकान का दरवाजा खुला। भीतर से घने श्रौर काले बालों वाला एक नौजवान बाहर निकला। उसने पहले तो मौला की श्रोर स्वप्निल दृष्टि से देखा किन्तु जब पहचाना तो उसकी श्राँखें पूर्ण रूप से खुल गई।

मौला ने पीले-पीले दाँतों का प्रदर्शन करते हुए कहा—"श्रावार्जें दे देकर मेरा तो गला भी बैठ गया। कहाँ... मुसा पड़ा था लाँ के मौड़े ?"

इस पर दोनों हँसने लगे।

सौदागर ने पूछा--"हाँ वे बता !"

जवाब में मौला चुपचाप हुका गुड़गुड़ाता रहा फिर उसने शरारत श्रौर श्रर्थपूर्ण ढंग से मौं ऊपर चढ़ाकर एक श्रांख इस तरह मारी जैसे ढेला खींचकर मार दिया हो।

सौदागर समभ गया।

"चलो ।" मौला ने कहा ।

"उहरो, मैं स्रोढ़ने के लिए तो कुछ लाऊँ ग्रन्दर से "वह माग-भागा भीतर गया स्रोर काले रंग की एक लोई शरीर पर

लपेटता हुन्ना तुरन्त लौट न्नाया ।

दोनों वहाँ से त्रागे बढ़ गये। गाँव पर पूर्या निस्तब्धता छाई थी। कहीं-कहीं कोई खुजली की मारी कुतिया दाँत निकालती हुई दुकान के एक तखते से निकलकर दूसरे तख्ते के नीचे दुवक जाती। या गारे के बने हुए मकानों की दीवारों के नीचे छुकूँ दरे जान छिपाती फिरती थीं।

दवे-दबे स्वर में बातें करते हुए वे दोनों बढ़ते चले गये। उन्होंने मेला सिंह, को उसके मकान से ख्रीर लब्भू को ढोरों के तवेले से बुलाकर ऋपने साथ लिया ख्रीर मौला के मकान पर वापस पहुँच गये।

भीतर से नवागन्तुक ने द्वार खोला । उसका चेहरा पगड़ी के शमले

में छिपा हुन्रा था। सौदागर लब्भू न्त्रौर मेला सिंह न्त्रभी नौजवान थे। इन कामों में नथे-नये दाखिल हुए थे। नवागन्तुक का नक्षात्र के पीछे छिपा हुन्रा चेहरा न्त्रौर जिन्न की भाँति धनी भौंहों के नीचे उसकी चमकती हुई न्त्राँखों को देखकर उनके शरीर में सनसनी की लहरें दौड़ गईं।

नवागन्तुक ने जल्दी से उनके चेहरों का निरीच्चण किया फिर उसने खेस से हाथ निकाल कर इशारा किया कि ग्रब देर किस बात की है! उसका हाथ भी काला था। उस पर मोटे-मोटे बाल उगे हुए थे। मौला ने उत्तर दिया—"देर किसी भी बात की नहीं है।" "तो ग्रब चले ?"

"जरूर।"

मौला ने त्रागे कदम बढ़ाया त्रीर शेप सब लोग उसके पीछे, पीछे हो लिये। नवागन्तुक के कदम बड़ी फुर्ता से उठ रहे थे त्रीर उसकी दोनों पुतिलियाँ ल्गा भर को भी एक जगह नहीं रुकती थी। माला के दानों की भाँति खटाखट चमती रहतीं।

दूर से कमी-कभार चौकीदार के चिल्ला उठने की आवाज यो सुनाई दे जाती थी मानो वह कोई भयानक स्वप्न देखकर बड़बड़ा उठा हो। उस आवाज और अपने बीच काफी अन्तर रखते हुए वे बड़ी तेजी से बढ़ते चले जा रहे थे।

गाँव से निकल कर लगभग पौन मील की दूरी पर स्थित पीराँ वाले रहट पर पहुँच कर वे रक गये। मौला के इशारे पर सौदागर ने रहट के निकट वाले बाड़े में घुसकर एक मरियल बैल को बाहर निकाला और फिर वे उसे हाँकते हुए तिनक दूर ले गये और गाँव के एक बड़े महाजन के खेत में उसे छोड़ दिया। वे स्वयं बबूल के पेड़ की छिदरी छाया के नीचे जा खड़े हए।

स्राकाश पर पूर्णि मा का चाँद चमक रहा था। [ १५७ ]

नवागन्तुक सिख ने फुर्ती से अपनी बगल में से बन्दूक का श्रंजर-पंजर निकाला। निलयों को उसके कुन्दें से जोड़ा श्रौर नीचे की श्रोर काठ की खपच्ची जमाई श्रौर हथेली की एक ही चोट से उसे श्रपनी जगह पर जमा दिया।

फिर उसने दोनों निलयों में ठोस गोलियों वाले कारत्स भरे श्रौर एक निगाह मरियल बैल पर डाली जो उन्डो हवा में कान फड़फड़ाता श्रौर पतली तथा कमजोर दुम को हिलाता घास पर मुँह मार रहा था। फिर उसने निशाना बाँध कर लबलबी दबाई। गोली खाते ही बैल बिना किसी संघर्ष के जमीन पर देर हो गया। यह गोली तो शेर को उन्डा कर देने के लिए काफ़ी थी किन्तु बन्दूकची ने सन्तोष के लिये एक दूसरी गोली भी उसकी गर्दन में घँसा दी।

बैल का काम तमाम होते ही नवागन्तुक सिख ने अपनी और भी तेजी से चमकती हुई आँखों से मौला और उसके साथियों की ओर देखा फिर भारी स्वर में बोला—"अच्छा, अब मुक्ते चलना चाहिए। सुबह से पहले वापस पहुंचना जरूरी है।"

मौला ने हाथ बढ़ाकर कहा-- "ग्रन्छी बात है।"

नवागन्तुक सिख चारो से हाथ मिलाते हुए एक बार फिर भारी स्वर में बोला—"साब सलामत।"

''साब सलामत।"

नवागन्तुक ने फिर श्रापनी बन्दूक को तोड़ ताड़ कर उस पर कपड़ा खपेट दिया श्रीर फ़र्ती से डग उठाता हुश्रा तनिक फीकी चाँदनी में गायब हो गया।

वे चारों कुछ देर तक उसे जाते हुए देखते रहे फिर वे बैल की स्त्रोर बढ़े त्रौर देखा कि वह बिलकुल मर चुका है।

अब वे जल्दी-जल्दी गाँव की स्रोर बढ़े और गाँव के निकट पहुँच कर उन्होंने एकदम पकड़ो-पकड़ो की पुकार लगाई।

[ १५८ ]

लोगों को डाकु श्रों का डर लगा रहता था। श्रतएव बहुत बड़ी संख्या में ग्रामवासी घरों से बाहर निकल ऋाये। श्रौर तब उन्हें पता चला कि बेचारे मौला का बैल गोली से मार दिया गया।

मौला देर तक गोली मारने वाले की माँ और बहनों से अपना रिश्ता गाँठता रहा और जब उसका गला बैठ गया तो स्योदय से पहले पहले वह छः कोस परे थाने में इस बात की रिपोर्ट लिखाकर गाँव लौट आया।

#### × × ×

पीर का ठट्टा गाँव छोटा था किन्तु यहाँ का सबसे धनी घराना मान्हा हूं दूर तूर तक मशहूर था । श्रास-पास के गाँवों में भी उनके श्रासामी माँजूद थे । श्रव मान्हों का दबदबा कुछ कम हो गया था क्योंकि पीर का ठट्टे श्रौर श्रासपास के कुछ गाँवों के बदमाशों ने मिल जुल कर खामखाह मुकदमेबाज़ी के चक्कर में डालकर उन्हें खोखला बना दिया था । श्रौर श्रव उनके लिये मौला ने एक नई मुसीबत खडी कर दी ।

जाडों का सूर्य कुछ अधिक ऊँचा नहीं होने पाया था कि इलाके के थाने से एक लम्बा-तड़ंगा मुसलमान थानेदार घोड़े पर बैठा दो साय-किल सवार सिपाहियों को साथ लिए पीर का ठट्टा में आ धमका।

गाँव के बाहर एक बड़े ग्रौर वृद्ध पीपल के पेड़ के नीचे पहुँचकर थानेदार घोड़े पर से उतरा । सुनहरी कुलाह पर लिपटी हुई उसकी खाकी रंग की कलफ लगी पगड़ी के लहराते हुए शमले दूर ही से दिखने लगे। ग्रुतएव गाँव भर के चमारों, भंगियों ग्रौर किसानों के बच्चे तथा कुत्ते गाँव में घुसते ही उसके पीछे हो लिए। ग्रौर ग्रब वे एक बड़ा सा घेरा बनाए खड़े थे। पीपल के नीचे बड़ी धूल थी जिसमें सूखे पते ग्रौर भूसे के तिनके मिले हुए थे।

घोड़े की लगाम सिख सिपाही के हाथ में थमा कर थानेदार ने दोनों श्रोर से वदीं को खींचकर श्रपने सुडौल शरीर पर जमाया। उसका ऊँचा कद कुलाहदार पगड़ी के कारण और भी ऊँचा दिखता था। उसका

दमकता हुन्ना माथा खूब चौड़ा था। त्रीर उसकी नाक जड़ ही से एक दम ऊपर को उठ गई थी। त्रपनी शानदार नाक के कारण वह बड़ा रोबदार दीख पड़ता था। त्राभी नवजवानी की त्रानुभवहीनता उसके चेहरे से स्पष्ट भलकती थी किन्तु वह प्रतिभाशाली त्रावश्य था। त्रापनी हरे रंग की पुतलियों के कारण देहातियों के कथनानुसार 'त्रांगरेज' जान पड़ता था।

पहले उसने खुली हवा में टहल-टहल कर दो-तीन गहरी साँसें ली ऋौर फिर जेब टटोल कर एक खाकी रंग का कागज बाहर निकाला ऋौर उसे ध्यान से देखने लगा।

इसी बीच में गाँव के लोग इकट्टा होने लगे। उधर सिख सिपाही ने घोड़े की लगाम पीपल की जड़ से बाँध दी।

कहीं से नम्बरदार को खबर मिली तो वह बेचारा सिर पर पाँव रखकर भागा। जब वहाँ पहुँचा तो यह हाल था कि दम फूला हुग्रा श्रीर पगड़ी टाँगों में उलमी हुई थी।

वह बेचारा घबराकर इधर-उधर देखने लगा !

थानेदार ने ऋदिशात्मक स्वर में कहा—''मैं तुम्हीं को बुल रहा हूँ,"

"जी, मुक्तको !" उस त्रादमी ने अपनी छाती पर उंगली जमाते हुए पूछा । और सिपाही के स्वीकारात्मक ढंग से सिर हिलाने पर उसने हास्यास्पद ढंग से आँखों की पुतलियाँ दार्थे-बार्थे घुमाकर इधर-उधर देखा और फिर पगड़ी सभाँलता हुआ थानेदार की ओर बढ़ा ।

"तुम मौला का घर जानते हो ?"

"ग्राहो जी...ग्राहो।"

"जाग्रो, उसे बुला लाग्रो।"

वह स्रादमी सरपट भागा लेकिन मौला हुका हाथ में लिये पहले ही से लुंगी उड़ाता चला स्रा रहा था।

थानेदार से आँखें चार होते ही उसने दूर ही से हुका जमीन पर रख दिया और जमीन में भुक्तकर फर्शं सलाम किया और फिर आगे बढ़कर बोला—"मोतिया वाल्यो। मैंने दूर ही से आपको देख लिया था। बस, हुका ताज़ा करने में देर हो गई।"

यह कह मौला ने बड़ी चापलूसी से हुके की नाल उसके मुँह से भिड़ा दी।

नम्बरदार त्राते ही चारपाई का प्रबंध करने के लिये उल्टे पाँव लौट गया । बैठने का कोई उचित स्थान न पाकर थानेदार एक मुगदर पर बैठने लगा तो मौला ने बढ़कर ऋपना खेस बिछा दिया उस पर ऋौर ललकार कर कहाँ खड़े लोगों से कहा—"ऋोए मायाव्यो । भाग कर मेरे घर से चारपाई ऋौर बिस्तर ले ऋाद्यो ।"

उसकी बात सुनते ही दो तीन ब्रादमी भाग निकले।

थानेदार ने पहले तो चुपचाप हुके के खूब गहरे-गहरे करा लिए श्रीर फिर मौला की श्रोर मुड़कर मुसकराते हुए बोला—"श्रोए भूतनी पलस्तर! बात क्या है, श्राज चोरों के घर मौर पड़ गये।"

"तौबह! मेरी तौबह!" कहते-कहते मौला वहीं उसके कदमों में बैठ गया। "जबरजस्तो! जभी तो कहते हैं कि बद अञ्छा बदनाम बुरा!"

"हाँ, खूब याद आया।' सिपाही को सम्बोधित कर थानेदार बोला— "ओए अजैब सिंहिया! जा जरा रामलाल मान्हें ते ओहदे लड़के को तो बुलाके ले आ।"

पहले ही से सधाये हुए सौदागर ने ग्रागे बढ़कर हाथ जोड़ दिये ग्रीर विनम्र स्वर में बोला—"खान साब। बड़ा ग्रानर्थ हुन्ना ए जी।

वेचारे मौला की ताँ कमर ही टूट गई। किसान को बैल का वड़ा सहारा होता है। १७

मौला ने ठएडी साँस भरकर मुँह नीचे को लटका दिया।

इधर-उधर की बातें हो ही रही थी कि रामलाल सफेद धोती श्रीर उस पर सफेद कुर्ता पहने श्रा पहुँचा। उसके साथ उसका नर्म श्रीर नाजुक युवा पुत्र हीरा लाल भी था जो पतलून पहने था।

थानेदार ने भाप-बेटे को सिर रो पाँव तक देखा। आप बेचारा अधेड़ अवस्था का गंभीर पुरुष था लेकिन थानेदार को लड़के के खड़े होने के ढंग से विद्रोह की गंध आई थी। फिर भी उसने अपने का काफी समाँल कर पूछा—"अबे लोंडे अपना नाम बताइयो।"

इस पर पढ़े-लिखे लड़के की कुळ गरमी ह्या गई। तनिक उत्तेजित हो क्रॅगरेजी में बोला—"यू शुड नाट बी रूड।"

थानेदार को ऋँगरेजी बस वाजिबी त्याती थी, इसिलए वह तिनक कठोर स्वर में बोला—"देख ऋोए मुँडिया! हमसे ज्यादां गिट-पिट नहीं करना...जो कहना हो सो ऋपनी बोली में कहो जिसमें कि सब लोग तुम्हारा बयान समभ सकें।"

नवयुवक को उसकी यह बात भी पसंद न ऋाई । बोला—''ऋाप अफसर हैं. ऋापको जरा तमीज से बात करनी चाहिये।''

यह जवाब सुन थानेदार का खून खौल गया। उसकी ग्राॉलां से श्रॅंगारे निकलने लगे। उसने सिपाही को पास ग्राने का इशारा किया श्रीर होंठ काटकर बोला—"ग्रजैब सिंहिया, इस मुंडे को थोड़ा तमीज़ दिखाश्री।"

श्रजब सिंह के दो-तीन भापड़ खाकर नवयुवक के दाँत हिल गये। उसके नथुनों में से खून निकलने लगा। थानेदार ने उसके चिकने वालों के गुच्छे को हाथ में दबा कर कहा—''बेटा! में तुम्हारे ऐसे शरीफ वद-माशों को सीधे रास्ते पर लाना खूब जानता हूँ।'' फिर उपस्थित लोगों

की ख्रोर देखकर बोला-'देखो जी, एक तो ग्रीब किसान को बैल गोली से उड़ा दिया और ऊपर से धौंसे जमाते हैं ? कानून हमारे हाथ में है । दूध का दूध ख्रौर पानी का पानी कर दिखाना हमारा काम है ।"

उपस्थित जनों में से ऋधिकाँश ने उसकी हाँ में हाँ मिलाई । थाने-दार गुर्राकर बोला—''ग्रोए मौलिया !''

"जी मोतियाँ बाल्यो !"

मोला बगल ही से निकल कर हाथ बाँघ थानेदार के सामने खड़ा हो गया।

''बैल कहाँ पर मरा पड़ा है ?''

"शंहशाह जी । यह तो मान्हों के खेत ही में पड़ा है। बेचारा किस्मत का मारा बाबे से निकल इनके खेतों में जा निकला। यस, उठा के गोली दाग दी इन्होंने। भला दो डराडे मार कर निकाल देते साले को, ग्रीब का बैल तो बच जाता।" यह कहते-कहते मौला ने रोनी सूरत बनायी।

मान्हा यह त्र्यारोप सुन सिटपिटा गया। किन्तु बेटे की दुर्गति देख चुका था, इस लिए चुप हो रहा।

"हम मरा हुन्या बैल मौके पर देखेंगे।"

"चल्लो मोतियाँ वल्यो ।"

त्रव त्रागे-त्रागे मोतियाँ वाला, साथ-साथ मौला, सौदागर लब्भू इत्यादि, उनके पीछे मान्हें त्रीर सब के पीछे नाक सुड़सुड़ाते बच्चे त्रीर दुमें हिलाते हुए कुत्ते।

यह टोली खेत पर खेत लाँघती जब मान्हों के खेत में पहुँची तो देखा कि सदीं से अकड़ा हुआ बैल खेत में टाँगे पसारे पड़ा है। मौला ने पहले ही से एक लौंडे को वहाँ बिटा दिया था जिसमें कि मृत बैल के शव के पास गिद्ध या कुत्ते न आने पायें।

खाँ साहब (थानेदार) ने बैल की अप्रगली टांगों के नोचे अप्रोर ि १६३ ो

गर्दन में लगी हुई गोलियों के चिन्हों को ध्यान से देखा । गाँव के तीन चार ब्रादिमयों को भी देखने का हुक्म दिया। फिर गाँव वापस ब्राकर पीपल की छाँव तले बिछी हुई चारपाई पर बैठ गये.....उस उनके लिये मक्खन ग्रीर लस्सी का कटोरा तैयार था।

मक्खन का गोला निगल कर ऊपर से लस्सी चढ़ाकर खाँ साहब ने बार्छे भाड़ननुमा रुमाल से साफ़ करते हुए कहा--''हाँ बे मौलू, अब बता सारा किस्सा । तेरा बयान लिखा जायगा ऋब ।"

मौला ने खाँसकर गला साफ किया ग्रौर बताना शुरू किया कि कैसे पिछली रात को वह अपने बाड़े तक यह देखने के लिए गया कि वह लींडा जो वहाँ मवेशियां की रखवाली के लिए रखा गया था, वहाँ मौजूद भी था या नहीं, क्योंकि उस सालें का एक चमारिन से याराना था। मौका पाकर रातों को उधर भी खिसक जाया करता था।

"तम ग्राकेले थे या ग्राँर भी कोई साथ था।"

"नहीं जी श्रकेला कैसे ? मेरे साथ सुदागर, मेलू श्रीर लब्स भी तो था । ""
"यह कब से तुम्हारे साथ थे ?"

"पात शाही! यह तो हर रोज मेरे साथ होते हैं। खाने-खूने से छंडी पाकर कभी यह मेरे पास आ जाते हैं और कभी मैं इनके पास चला जाता हूँ, गप उड़ाने के लिये।"

''ग्रच्छा-ग्रच्छा, फिर क्या हुग्रा ?''

''फिर शांहशाहों ! ग्रमी हम बाड़े से दूर ही थे कि घाँय-घाँय दो बार बन्दक चलने की त्रावाज सुनाई दी । हम तो जी डर के मारे खेतों में छिप गये.....।"

"ग्रच्छा ! तो तुम डर गये ?" खाँ साहब ने पूछा क्योंकि शक्ल ही से मौला उन श्रादिमयों में से दिखाई देता था, जिन्हें डर कभी छूता भी नहीं !

"ग्राहो जी ! हम डर गये !" "ग्रन्छा, फिर !"

इतने में यह निक्का मान्हाँ गाँव की तरफ भागता दिखाई दिया। खाँ साहब ने स्वीकारात्म ढंग से यों सिर हिलाया, मानो वे इस मामले की तह तक पहुँच गये हों, "फिर ?"

"फिर जी, हम बाड़े की तरफ बढ़े। रास्ते में इन्हीं के खेत में पड़ते हैं! वहाँ हमें सफेद-सफेद चीज दिखाई दी। हम डरते-डरते पास पहुँचे तो देखा कि मेरा बैल मरा पड़ा है। मैंने तो सिर पीट लिया ग्रीर नज-दीक से देखा तो गोलियों के निशान दिखाई दिये।"

थानेदार साहब ने मौला से अनेक प्रश्न किये। फिर मेलू, सौदा-गर अभैर लब्भू से जिरह की गईं।

''त्राच्छा तो सौदागर! तुमने त्राच्छी तरह पहचान लिया था कि वह रामलाल का बेटा हीरा लाल ही था।"

"हाव जी !"

इसी तरह सबने श्रलग-श्रलग इस बात की पुष्टि की । श्रव को साहब फिर हीरा नाल की श्रोर श्राकृष्ट हुए—"देखो हीरा! सच-सच बता दो कि श्राखिर बात क्या है, नहीं तो याद रखो मैं मुजरिमों का बहुत सख्त दुश्मन हूँ। थाने पहुँचकर दो कानों के बीच सिर कर दूँगा तुम्हारा..."

श्रम हीरालाल ताव में श्राने के मूड में नहीं था। श्रभी पहली मार से ही उसकी नाक जल रही थी श्रौर होठा पर सूजन श्रा गई थी। उसने मद्दिम स्वर में कहा—"यह इलजाम बेबुनियाद । मैं तो खाना खाकर घर से बाहर तक नहीं निकला।"

खाँ साहब ने उसके बाप की ऋोर देखकर कहा—''लाला ! तुम्हारा लौंडा जरा कड़ा दाना मालूम होता है। लेकिन हमारा काम भी भूले-भटकों को रास्ते पर लाना है। समभा लो ऋपने बेटे को, नहीं तो एक बार

मैंने हाथ उठा दिया तो पहचान नहीं पाछोगे कि इसका सर किथर को था ख्रौर मुँह किथर को।"

रामलाल मुक़दमेबाजी से तंग ऋा चुका था। हाथ जोड़कर बोला— "खाँ साहब! ऋभी लड़का ही तो है। शायद.....मैं बैल की कीमत देने को तैयार ।"

"बैल की कीमत ?" मौला ने चिल्लाकर कहा—"गरीव को बैल की जान ऐसी सस्ती नहीं होती कि जब जी चाहा मार दिया श्रौर फिर पैसे के धौंस जमाने लगे।"

त्याँ साहब बोले-- "चुप रहो जी तुम । बकवास बन्द करो।"

"नई पातशाहो ! मेरी क्या मजाल है !" मौला हाथ जड़ोकर ऋला । खड़ा हो गया।

''अञ्ज्ञा लाला ! अपनी बन्दूक तो मॅंगवास्रो जरा।'' बन्दूक हाजिर की गई।

हीरा बोला—''देखिए, बन्दूक की नाली में ग्रीस लगाकर मैंने ऋलग रख छोड़ी थी।''

खाँ साहब ने हीरा की तरफ़ बूमकर देखा श्रौर ज़ोर से सिर हिला-कर बोले—"सब समभ्तता हूँ। यह श्रीस तो श्राज ही की लगी मालूम होती है।"

थोड़ी देर तक बन्दूक का निरीच्या किया गया। फिर उन्होंने सिपाही से कहा— "ऋजैब सिंह! काराज़ लाख्यों तो बन्दूक की रसीद लिख दूँ"

इसके बाद सबके बयान पूरे िकये गये श्रीर िकर थानेदार ने कहा— ''बन्दूक थाने में जमा होगी। बेटा हीरा! चलो थाने, िकर देखों कि मैं हीरा का बटेरा कैसे बनाता हूँ।''

रामलाल बेटे के लिए बड़ा परेशान था। हाथ बाँधकर बोला— "खाँ साहब, द्या कीजिए। मैं बैल की क्रीमत ग्राँर जुर्माना देने को तैयार हूँ।"

"यह तो बाद की बातें हैं...मालूम होता है कि तुम्हारी जेब में रुपये उछल रहे हैं लाला।"

रामलाल ने मुश्किल से थ्क निगलते हुए पूछा—"क्या जमानत नहीं हो सकती ?"

''यह सब थाने पहँचकर तय होगा।"

यह कहकर खाँ साहब घोड़े पर सवार हो गये। जब वे हीरा को लेकर चलने लगे तो रामलाल की श्राँखों में श्राँस् श्रा गये। वह जानता था कि लड़के ने जोश में श्राकर गुस्ताखी की है, इसिलए उसकी कुशल नहीं। कुछ सोचकर श्रागे बढ़ा श्रीर हाथ जोड़कर बोला—"खाँ साहब, एक बात कहूँ?'

खाँ साहब ने घोड़ा रोक लिया ।

''बात यह है कि मौला के बैल को गोली मैंने मारी थी।"

खाँ साहब ने हँसकर घोड़े को एंड़ लगाई और बोले—"लाला! लड़के को बचाने के लिए भूठ बोल रहे हो। जरा गवाहों से तो पूछो। हम तो कानून के बन्दे हैं।"

जब थानेदार साहब उन सबकी हिन्ट से स्रोभल हो गये स्रोर बन्दूक भी स्रापने साथ ले गये तो मौला ने भी स्रापने घर की ड्योदी में पहुँचकर पहले स्राकाश की स्रोर देखा स्रोर किर भारी स्वर में बोला— ''या मौला!' इसके बाद सौदागर को सम्बोधित कर उसने कहा— ''देख बे सुदागर! घोड़ी पर सवार होकर सीधा भें बोड़ी चला जा स्रोर बगा सिंह से कह दे कि धाँय-धाँय बोलनेवाली चिड़िया पिंजड़े में बन्द हो गई है।'"

× × ×

ऋमी सूरज ढल ही रहा कि एकदम इस जोर की आँधी उठी कि जमीन से आसमान तक धुआँधार हो गया। ऐसा लगता था, मानो पृथ्वी की छाती फट गई है और चारों और के बादल गगनचुम्बी पहाड़ों

की भाँति भूम-भूमकार उठ खड़े हुए हैं। श्रौर धूल का यह समुद्र घास-फूस श्रोर मिट्टी को उड़ाता, उमड़ता चला त्र्या रहा है।...सूर्य श्रकस्मात छिप गया। चारों श्रोर धुंध श्रौर फिर श्रन्धकार बढ़ने लगा श्रौर धुंधले श्राकाश में श्रानेवाली श्रांधी का समाचार देने वाले चीलों के भुग्ड भी इस श्रसाधारण धुधँलाहट में विलीन हो गये।

लकड़ी के बने हुए भारी-भारी चरखड़ों वाले रहट के ऊपर छाये हुए फुलाह के पेड़ों के मुरुड में से कपूरा सिंह उट्टे वाला एक ग्राग उगलती थूथनीवाली सिर से पाँव तक काली ग्रीर मजबूत वोड़ी पर सवार बाहर निकला। उसने पहले पीर के उट्टा की ग्रीर देखा ग्रीर फिर दूर-दूर तक फैले हुए खेतों पर निगाह दौड़ाई। किन्तु उसकी दृष्टि दूर तक नहीं जा सकी क्यों कि ग्राँधी प्रति च्या बढ़ती ग्रा रही थी। खेतों की फसलें धूमिल वायु के ग्रागमन से एक बढ़े तालाब के मैले गँदले पानी की भाँति हिलोरें लेती दीख रही थीं।

कपूरा ठट्टे वाला, जिसे आमतौर से लोग काला तीतर कहते थे, अपने गाँव से निकाल दिया गया था। कई वर्ष से उसने गाँव में प्रवेश करने का साहस नहीं किया था। किन्तु एक सताह पूर्व वह चोरी-छिपके अपनी बहन से मिलने के लिए गया। केवल एक रात रहकर और यह मालूम करके कि ससुराल से लाये हुए गहने कहाँ पर रखती है, वह चुपचाप लौट आया था। आज उन गहनों और उसके साथ आड़ोस-पड़ोस वालों पर हाथ साफ़ करने का उसने निश्चय किया था।

उस विशालकाय पुरुष का रंग काला भुजंग था, कुटिलता श्रीर धूर्तता नस-नस में भरी हुई थी। उसका हृदय दयाहीन श्रीर स्वभाव कृर था।

त्रमी वह दूर-दूर तक दृष्टि दौड़ा ही रहा था कि खेतों में कुछ परछाइयाँ दिखाई पड़ीं जो उसकी ग्रोर बढ़ रही थीं।

ऋाँधी का वेग बढ़ते लगा।

[ १६८ ]

गाँव के चारों त्रोर फैली हुई धूल पर पहले तो हल्की गर्द की चादरें लहलहाई फिर भारी गर्द ऊपर को उठने लगी त्रौर तालाव के पानी की सरसराते हुए साँपों की तरह नन्हीं नन्हीं लहरें करवटें लेने लगीं। तोते, कौवे तथा क्रान्य घरेलू पद्मी पीपल त्रौर घरेक के पेड़ों में हुबक गये।

खेत-खेत चलते हुए वे स्रादमी जब निकट पहुँचे तो कपूरे ने उन्हें पहचान लिया। स्रागे स्रागे मौला था स्रौर उसके पीछे-पीछे सौदागर, लब्भू तथा मेला सिंह।

उन्हें देखते ही कपूरा कठोर स्वर में बोला—"तुम लोग कहाँ थे ?" "यहीं तो थे ।" सौदागर ने हँसकर जवाब दिया ।

कपूरे को सौदागर की हँसी बिलकुल पसन्द न आई। उसने उसकी श्रोर कड़ी दृष्टि से देखा। वह स्वयं बहुत कम हँसता था। प्रकट तो यह होता था कि वह सौदागर के मुँह पर उल्टे हाथ का भापड़ देगा किन्तु फिर खुन का बूँट पीकर रह गया श्रीर मौला से बोला—"मौला!"

٠٠٤ <u>١</u>٠٠

"सब ठीक ?"

"हम तो सब ठीक ही हैं ...तैयारी तो तुम्हारी होनी चाहिए।"

उसे मौला की हाजिर जवाबी भी पसन्द नहीं स्त्राई। लेकिन उस समय गुस्से का मौका नहीं था। स्त्रीर कुळु नहीं तो डाके का मामला चौपट हो जाने का डर था। फिर भी उसने कटु स्वर में कहा—"हमारी तैयारी से तुम्हारा मतलब! तुम स्त्रपनी कहो।"

"हमारा काम तो कभी का हो चुका । गाँव में एक बन्दूक थी सो स्त्र थाने में है।"

"िकसी तरफ़ से कोई बात निकली तो नहीं ?" "नहीं।"

"कोई ऋफवाह ? शक-शुबहा ?

[ १६६ ]

"कुछ नहीं।"

कपूरे की घोड़ी शायद आँघी में कई प्रकार की गंध पाकर बेचैन हो होकर बिदकती और बेचैनी से जमीन पर दुम माख़ती थी। किन्तु वह उस पर खूब जमकर बैठा था।

श्रन्थकार त्त्रण प्रति त्त्रण बढ़ता जा रहा था। कपूरे की लोहे के तारों के समान कड़े दादी के बाल लहराने लगे। खेतों से भाग कर लोग-बाग श्रपने-श्रपने घरों में धुस गये थे। चोर प्रसन्न थे। श्राज भगवान भी उनकी सहायता करने पर तुले थे।

उन्हें कई साथियों का इन्तजार था, जो दूर-दूर श्रर्थात् पिट्याले तक से श्राने वाले थे। कपूरे ने सोचा कि यिद्द श्राँधी का यही हाल रहा तो उन्हें श्रपनी कार्रवाई जल्दी श्रुरू करनी होगी।

कपूरा बोला—''श्रच्छा, श्रव मैं चलता हूँ।'' ''श्रभी बाकी लोग तो नहीं श्राये होंगे ?''

"ग्रा गये होंगे । चलकर देखता हूँ । तुम लोगों को खोजने में मेरा बहुत समय खराब हुग्रा।"

"हम तुम्हें देखते रहे । तुम कहीं दिखाई ही नहीं दिये ।"

"रहट पर मिलने का वादा था। मैं सीधा इसी जगह पहुँच गया था।"

"पहले हम भी रहट पर गये थे। फिर हम खेतों में चले गये।"
"क्यों ?"

"हमने सोचा कि कहीं रहट पर हमें कोई साथ-साथ देख न ले।"
"यह अच्छी हरकत की तुमने। इस प्रकार की बुद्धिमानी करोगे तो
आप भी फँसोगे और हमें भी फँसाओगे।"

मौला बोला—"श्रच्छा जो होना था सो हो गया। हम श्रपनी जगह से तुम्हें देखने की कोशिश करते रहे पर श्राँधी के कारन तुम दिखाई नहीं दिये...भई! श्रागे को ख्याल रखेंगे। ऐसी गलती नहीं होगी।"

इस पर कपूरा खुश हो गया।

"देखो, हम त्राकर पहले इसी जगह रुकेंगे। त्रागर कोई ऐसी-वैसी चात हो तो हमें ख़बर कर देना।"

"ग्रन्छी बात है।"

"मौला ! तुम्हारा घर तो बिलकुल सामने पड़ता है ?"
"हाव।"

"तो फिर जरा निगाह रखना जिसमें कि जब हम यहाँ पहुँचे तो सुममें से एक ब्रादमी हमें यहाँ ब्राकर मिले। समके ?"

"लेकिन ऋाँघी बढ़ती जा रही है। न जाने कब तक इसका जोर रहे। थोड़ी देर में हाथ को हाथ तक न सुम्हाई देगा। तुम लोग इत्ती दूर से कैसे दिखाई दे सकते हो?"

कपूरे ने कुछ सीचा फिर बोला—"यह भी ठीक है पर श्रब करें क्या ?"

"तुम यह बतास्रो कि सबको लेकर कब तक लौटोगे ?"

कपूरे ने तिनक सोचने के बाद उत्तर दिया—"भई पिटयाले ऋौर जिन्द तक से जवान ऋा रहे हैं, ऋगर सब पहुँच गये तो हम एक घरटे तक सीट ऋायेंगे।"

"ग्रन्छी बात है !"

"श्रीर क्या, अब रात भींगने का इंतजार तो करेंगे नहीं हम ! आँधी से तो इतना ऋँधेरा छा जायगा कि बस तबीयत खुश हो जायगी।"

"ठीक है।"

"तो श्रब मैं चला।"

यह कहकर कपूरे ने घोड़ी को एंड़ दी और बवंडर की सी तेज़ी के साथ च्या प्रति च्चा धुंघलाती हुई काड़ियों में विलीन हो गया।

× × × [ १७१ ]

एक घरटा बीतने भी न पाया था कि पीर का ठट्टा पर ऐसा घोर अन्धकार छा गया कि पहले कभी देखने में नहीं आया था।

कपूरा और उसके साथी घोड़ों तथा साँडनियों पर सवार श्रन्धाधुन्य चले त्या रहे थे। तीव वायु मानो उनके कपड़े नोचकर उनके शरीर से श्रालग फेंक देना चाहती थी। उनकी दाढ़ियाँ श्रीर मूर्छे धूल से श्रट गई थीं। श्राँखों की पलकें एक दूसरी से चिपकी जा रही थीं। यदि कपूरा उनका पद-प्रदर्शन न करता तो वे कभी रास्ता न खोज पाते।

उनमें हिन्दू, मुसलमान श्रीर सिख सभी लोग शामिल थे। उनके पास दो कच्ची राइफलें थीं जिनकी निलयों के मुँह उन्होंने कपड़े की डाटों से बन्द कर रखे थे जिसमें कि घूल भीतर न जाने पाये। लारी के स्टियरिंग की निली वाली एक बन्दूक भी थी। इनके श्रितिरिक्त उन सब के पास कुपायों, छुबियाँ, लाठियाँ श्रीर सफ़ाजंग भी थे।

उस समय दूर से पीर का ठट्टा मरे हुए भैं से के समान दीख रहा था

गाँव से हट कर सन्त दतार सिंह जी की टूटी हुई समाधि की ऊँची दीवारें ख्रलग-ऋलग खंडे हुए दैत्य के समान दीख रही थी। जर्जर दीवार के निकट सड़े हुए पानी की एक खाई थी जिसकी सतह पर हरे रंग की काई जम रही थी ख्रीर दीवार की दरारों से जँगली बेलें लटक छाई थीं ख्रीर उनकी पत्तियाँ पानी की सतह को चूमा करती थीं।

मौला ने सौदागर को कपूरा के आदेशानुसार मौके पर भेज दिया था। सौदागर रेत के टीले की ओट में सिर और कानों को धुरसे में लपेटे और सिर दोनों घुटनों के बीच दावे बैठा था। देखने के लिए उसने आँखों के आगे एक छोटा-सा छेद खुला छोड़ दिया था। मला ऐसे अन्धकार में क्या दिखाई दे सकता था! दृष्टि ने तो कुछ काम किया नहीं, अलबत्ता कानों में घोड़ों के सुमों की टपाटप और साँडनियों के बल-

बजाने की त्रावाजें क्राई तो उसने चौकना होकर गर्दन ऊपर उठाई किन्तु डाकू पलक भापकाते में उसके सिर पर थे।

इस ग्रन्थकार में छुबियों की मन्द-मन्द चमक ग्रौर भी ग्रिधिक भया-नक दीख रही थी।

श्राँधो के शोर में श्रावाज गूँजी—"कौन ?"

"सुदागर!" सौदागर ने जल्दी से जवाब दिया। यह सोचकर कि कहीं उत्तर देने में देर हो श्रौर उसका सिर छुबि के एक ही बार में कटकर श्रालग जा गिरे।

"सुदागर कौन ?"

ग्रब सौदागर के हाथ पाँच फूल गये। चिल्लाकर बोला—"श्रोए मैं...मैं मुदागर ठड्डे वाला। कपूरा कित्ये ए १"

उसी समय कपूरे की घोड़ी मचलकर ऋगगे बढ़ी—"सुदागर !"

"हाव कपूरिया !"

"श्रोप श्रपना ही मुग्डा।" कपूरे ने साथियों से कहा। फिर सौदा-गर को सम्बोधित कर पूछा—"मौला भी है ?"

"नहीं--वह घर पर है।"

''बाकी सब ठीक है १"

"सब ठीक-ठाक है।"

इस बीच में धूल भरी हवा त्फ़ानी वेग से वहती रही। घोड़े तथा साँडनियाँ वेचैनी से नाचती रहीं।

नवागन्तुक डाकुत्रों ने कुळु ज्ञुग त्र्यापस में विचार विनियम किया त्रीर फिर कपूरा सौदागर से बोला —"सुदागर बच्चू! त्र्यव हमें रहट की तरफ़ से ले चलो।"

सीदागर कुळ कहे बिना उठा और रहट की ओर चल पड़ा । वे सब उसके पीछे-पीछे हो लिए ।

[ ફહરૂ ]

कपूरे ने रहट के निकट पहुँच कर पूछा—"सुदागरा ! तवेला तो खाली है।"

''हाव, बिलकुल खाली है ।''

"ऐसा न हो कि कोई बाहर का ऋादमी घुसा हो।" "ऋरे नहीं।"

रहट पर पहुंचकर वे घोड़ों ख्रौर साडनियों से नीचे उतरे। जानवरों को तबेले में बन्द करके सौदागर को रखवाली के लिए छोड़ दिया ख्रौर स्वयं सारे साज सामान सहित गाँव की ख्रोर बढ़े।

मौला के घर का द्वार श्रधखुला था। उसने दरवाजे में ईंट कँसा कर तख्तों को एक जगह जमा दिया था श्रीर वह स्वयं लब्भू के साथ बैठा हुका पी रहा था। मेला सिंह श्रलग बैठा दाढ़ी कुरेद रहा था।

उन्होंने दरवाजे में से डाकु आर्ो के गिरोह को पहचान लिया। जब वे पास आ गये तब उन्होंने देखा कि उनमें सब के सब मजबूत और लम्बे तिरक्षे शामिल थे।

मौला तहमत भाड़कर उठ खड़ा हुन्ना न्नौर बोला--"साब सला-मत।"

"साब सलामत ए जी ?" दबे-दबे मिले-जुले स्वर सुनाई पड़े ।

मौला बढ़कर ड्योढ़ी तक गया। उसने देखा कि उसके दरवाजे के आगो भाँति-भाँति की आकृतियाँ खड़ी हैं उन्होंने पगड़ियों के शमले धुमाकर चेहरे दाँप रखे थे। सिवाय आँखों के उनके चेहरों का और कोई भाग दिखाई नहीं पड़ता था। उनके शरीर नंगे थे और सरसों के तेल के कारण न केवल चमक रहे थे बल्कि तेल की हल्की-हल्की गंध भी फैल रही थी।

मौला ने गिरी हुई लम्बी मूछों पर उँगलियाँ फेरते हुए कहा—"श्राज ता श्रल्लाह दा बड़ा फजल है जी ।"

"हाव।"<sup>\*</sup>

मौला ने कपूरें की नंगी पीठ पर हाथ रखकर कहा—"ग्रामा! पानी पूनी पी लो सारे।"

कपूरे ने जटा भाड़ मरियल की भाँति अपने नंगे सिर की नकारात्मक ढंग से हिलाते हुए कहा—''नहीं भई! वक्त घटे ए। पानी-पूनी की बात छुड।"

मौला ने इधर उधर देखा।

"आरो ! सवारी बिना त्रा गये त्रो ।"

"नई, घोड़े—डाचियाँ तबेले में छोड़ ऋ।या हूँ।"

"पर यार ! घोड़े कुछ नजीक रखो । भागते समय जरूरत पड़ेगी... श्रीर फिर कपूरिया । तुम्हें किसी ने पहचान लिया तो श्राफत श्रा जायगी । श्रपनी घोड़ी बहुत नजीक रखना ।"

कपूरे को मोला की बात पसन्द ग्राई। उसने मुस्कुराकर एक साथी के कान में कुछ कहा ग्रीर वह 'हाव' कह कर तबेले की ग्रीर रवाना हो गया।

"भौतिया! श्रव देर मत करो।" कपूरे ने मौता से कहा-"बस, चलो। ऐसा मौका फिर कभी नहीं हाथ त्रायगा।"

''बहुत ग्रान्छा।"

मौला ने फ्रक मार कर दिया बुक्ताया तो उसकी लम्बी लम्बी मूर्छें फब्रकीं।

त्रव व एक लम्बी पंक्ति के रूप में एक दूसरे के साथ लगे लगे बढ़ने लगे।

गोबर के ढेरों, पोखरी श्रीर श्ररूड़ियों के निकट से होते हुए वे गली में घुसे गये।

श्रांधी के कारण भयानक शोर उत्पन्न हो रहा था। ऐसे श्रवसर पर कुत्तें भी तन्दूरों में दुवके हुए थे। एकाध ने दबे स्वर में भूका भी तो उनकी श्रावाज श्रांधी के शोर में दब कर रह गई।

उनकी राइफलों भरी हुई थीं । उन सबके हथियार बिलकुल तैयार थे। प्रत्येक महत्वपूर्ण मोड़ पर कप्रा एक ग्रादमी खड़ा कर देता ।

मौला की अभी तक बग्गा सिंह से कोई बात नहीं हुई थी। बग्गा बहुत कम बोलता था। मौला यह बात जानता था इस लिए उसने भी कोई बात नहीं की। वह बग्गे के साथ-साथ चला जा रहा था। बग्गा ताड़ की तरह लम्बा था। उसकी आँखें भीतर की ओर घँसी हुई थीं किन्तु उनमें हिसंक पशु की आँखों की सी चमक और जिज्ञासा थी। वही उन सब का सर्दार था।

डाकू लम्बे कनखजूरे की भाँति दीवारों से लगे-लगे बढ़ रहे थे। बग्गे ने मौला से पूछा—"मकान है कहाँ ?" "गाँव के बीचोबीच !"

यह सुनकर बग्गे के माथे पर बल पड़ गये। उसने दबे स्वर में कहा— "यदि लोग-बाग जाग पड़े तो इस ग्राँधियारी ग्रीर ग्राँधी में गाँव से बाहर निकलने के लिए बड़ी सावधानी ग्रीर होशियारी की जरूरत पड़ेगी।"

मौला ने तिनक बेपरवाही से कहा — "श्रोए श्रा! तुम लोगों के सामने कौन टिका रह सकेगा। चाहे सौ श्रादिमयों से भी क्यों न सुकाबिला हो जाय।"

बग्गे पर मौला की इस बात का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। वह जानता था कि वे लोग गाँव वालों का भली भाँति मुकाबिला कर सकते हैं किन्तु वह एक छटा हुन्ना न्नम्भवी डाक् था। उस समय सवाल मुकाबिला कर सकने या न कर सकने का नहीं था। बल्कि न्नसल सवाल यह था कि गिरोह का हर न्नादमी बचकर निकलना चाहिए नहीं तो एकांघ भी पुलिस के हत्ये चढ़ गया तो सारे गिरोह पर न्नाफ़त न्ना जायगी। इतनी तीन न्नामां नुकास के स्वीयारी न्नीर शोर में यह सारा काम कुशलतापूर्वक पूरा हो जाना उतना सरल नहीं था जितना कि मौला को लग रहा था।

#### काली तित्तरी

सहसा बग्गू एक छोर रुक गया श्रौर उसके पीछे, सबके सब डाकू रुक गये।

ग्रन्थकार में सामने से उन्हें एक बहुत ही काली छाया दिखाई पड़ी। लगता था कि कोई ग्रादमी जल्दी जल्दी कदम उठाता बढ़ा चला ग्रा रहा है।

वे सब पलक भागकते में दीवार की छाया से लागकर खड़े हो गये। वह व्यक्ति शारीर पर काली चादर लपेटे तेजी से बढ़ता ग्रा रहा था। चाग प्रति चाग वह उनके निकट पहुँच रहा था।

डाकू दम साथे खड़े थे। संयोग से उस दीवार पर एक छुजा बढ़ा हुआ था इसिलए वे बिलकुल ऋषेरे में खड़े थे। यो त्र्यासानी से पास खड़ा हुआ त्रादमी भी:दिखाई नहीं देता था। यह तो केवल बग्गू की पैनी दृष्टि ने ही आगन्तुक को आते देख पाया था।

कुछ च्यां के बाद वह व्यक्ति उनके पास से गुजरने लगा। उस बेचारे को इस बात का तिनक भी पता नहीं था कि वह हथियारबन्द डाक् अंगे की छिनियों के साथे के नीचे से गुजर रहा है। यदि कहीं उसके मुँह से चूँ की आवाज़ निकल जाती तो उसका सिर तन से छुदा हो जाता।

डाकू एकदम साँस रोके खड़े थे। वे उस पतले तुबले से आदमी की छाया को अपने पात से गुजरते देख रहे थे। आखिर वह उनसे आगे बढ़ गया उसके जाने के बाद सबने इतमीनान की साँस ली क्यों कि वह उस समय खून खराबी नहीं करना चाहते थे। यदि कहीं उसकी बहुत तेज चीख निकल जाती और उस चीख को सुनकर गाँव में शोर मच जाता तो उन्हें खाली हाथ वापस भागना पड़ता।

गाँव के अन्दर वाले चौराहे पर पहुँचे तो देखा कि ऊँचे चबूतरे वाले बहें कुएँ की मुडेर पर पानी निकालने की ऊँची-ऊँची चर्छाड़ियाँ सिर भुकाये उदास मुद्रा में खड़ी हैं। और उन चर्छाड़ियों के चरगों में ऊबड़ खाबड़ पैदों वाले लोहे के डोलचे हवा के जोर से हिल-हिलकर एक शोर

सा उत्पन्न है कर रहे थे श्रीर चबूतरे के निकट खड़े पेड़ मानो उन्हें रोषपूर्ण हिन्द से देख रहे थे।

वे सब तुरन्त पेड़ों के मुन्ड के नीचे चले गये जिसमें कि आपस में सलाह कर लें।

कपूरे ने घूम-घूमकर सबकी संख्या मालूम की फिर सन्तुष्ट हो कर उसने कहा --- ''इस जगह कम से कम तीन जवान खड़े रहने चाहिए!'

"वह क्यों ?" उनमें से एक ने जो लुधियाने के इलाके का जरा हथछुट जवान था त्रापत्ति की ।

कपूरे को उसका यह सवाल पसन्द नहीं आया। उसने माथे पर गहरे बल डालकर उसकी स्रोर देखा स्रौर स्रपने दृष्टि कींगा को स्पन्ट करने लगा।

"इस जगह से सिर्फ एक तंग गली आगे को जाती है जो मकानों के अन्दर ही खतम हो जाती है। हमारे भाग निकलने का सिर्फ यही एक रास्ता है।

"श्रोए, श्रपने को इसकी परवाह नई ! श्रपना कौन मुकाबिला कर सकता है ?" नवयुवक ने बाजू हवा में लहराकर बेपरवाही से उच्च स्वर में कहा।

श्रव तो कपूरे का जी चाहा कि उसकीं गर्दन मरोड़कर रख दे। उसके यह तेवर देखकर नौजवान भी विफरने लगा। नौजवान मजबूत श्रीर जोशीला ही सही किन्तु कपूरे के मुकाबिले में खड़ा होना तो सरासर उसकी मूर्खता थी।

शायद उनके दो-दो हाथ हो भी जाते किन्तु बगो ने युवक को श्रांख दिखाई तो वह ठएडा पड़ गया | फिर बग्गा कपूरे को सम्बोधित कर बोला—"हाँ तो क्या कह रहे थे तुम ?"

"उधर जो तंग गली तुम देख रहे हो उसी के श्रन्दर हमें जाना है। वह मकान जिन पर हमारी नज़र है किले के समान मजबूत श्रीर

#### काली तित्तरी

सुरचित है। पहले तो वहाँ पहुँचने का किसी डाक को आज तक साहस ही नहीं हुआ। हमारी यह पहली चढ़ाई है। यदि हम वहीं कहीं घिर गये तो बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ेगा । हमारी भलाई इसी में है कि हम यहाँ से सब के सब सही सलामत निकल जायें...सिर्फ यही एक खुली जगह है। खतरे के मौके पर हमारा एक ब्रादमी तुरन्त गली के श्चन्दर श्राकर हमें खबर कर सकता है। हमारी यह कोशिश होनी चाहिए कि पहले तो हमें मुकाबिला करना ही न पड़े लेकिन यदि ऐसा हो भी तो यहीं खली जगह में हो "

बग्गे ने समर्थन में सिर हिलाया।

कपूरे ने फिर कहना ग़रू किया-"'यह आँघी हमारी सहायता भी कर सकती है अप्रीर नकसान भी । यदि कोई गडबड हो गई तो इस हुल्लड़बाजी, श्राँघी श्रीर श्रँघेरे में हम श्रपने साथियों की गिनती भी नहीं कर पायेरी "

बग्गा उसके एक-एक शब्द से सहमत था। श्रतएव तीन श्रादमी वहाँ पर छोडकर वे लोग श्रागे बढे।

तंग गली मं पहुँचकर उन्हें ऐसा ऋतुभव हुआ मानो वे कब में हों। श्रांधी श्रीर हवा का जोर कम था किन्त इस राजब का शोर था कि कानों के पर्दे फटे जाते थे।

सहसा बग्गा एकदम रुक गया। उसके साथ ही सब के कदम रुक गये ग्राँर वे ग्रपनी थ्रथनियाँ उसके करीब ले ग्राए जिसमें कि उसकी बात सन सकें।

. बगंग ने साहँसी की ऋोर देखकर पूछा-"बाँस नहीं लाये ?" "ग्रारे ! वह तो भूल गये !"

"वाह ! स्रोए भैया...तो क्या ऋव...के सहारे चढ़ोगे छत पर ?" "बाँस कौन दूर है ? मौला के घर ही से तो लाना है। मेलू, जार

त् भाग के जा ग्रीर मौलू की ड्योड़ी के भीतर ग्राँगन के कोने में एक लम्बा बाँस घरा होगा...बस उठाकर तुरन्त वापस ग्राना..."

मेलू ने थुथनी घुमाई ऋौर नाक की सीध में लम्बे-लम्बे डग भरता हुआ चल दिया।

वे सब फिर स्नागे बहै। कुछ दूर जाकर गली बार्ये हाथ को घूम गई थी। मोड़ से कुछ कदम स्नागे दाहिने हाथ को एक स्नध्रारा मकान था जिसकी नींव मरने के बाद न जाने उसे क्यों छोड़ दिया गया था। स्नव वहाँ बड़े-बड़े सूखे माड़ स्नौर मनछुटी (कपास की छड़ियाँ) के स्नम्बार स्नगले मकान की दीवार के साथ टिके हुए थे। जब किसी कुतिया को बच्चे जनने होते तो वह चीखती कराहती यहीं स्नाकर सरण लेती। एक कोने में मड़भूँजे का चूलहा था, जिसमें उस समय बालू भरी थी।

वहाँ रुककर उन्होंने उस मकान के पिछ्नवाहे का निरीक्षण किया जिसके ऋन्दर उन्हें सबसे पहले बुसना था।

छत से परे बिजली चमक-चमक कर आँखें दिखा रही थी। बनबीर घटाएँ अपने काले आंचल लहराती असीम सेना की भाँति आकाश के विस्तार में फैलने लगीं। आँधी के वेग में कमी तो न आई थी। कन्तु हवा में पहली सी धूल बाक्ती न रही थी।

कपूरे के इशारे पर वे फिर कक गये। उनकी दादियाँ फिर एक दूसरे के निकट ब्राईं। उसने कहा—''सब लोग यहीं पर करें। मैं बग्गे को लेकर मकानों को अगली तरफ़ से देख लूँ जरा।"

वे दोनों कुछ ही कदम पर पहुँचकर उन सब की दृष्टि से स्रोक्तल हो गये।

साहँसी ने मकान की ऋोर देखा श्रौर फिर मन ही मन श्रनुमान लगाने लगा कि उस पर बाँस की सहायता से चढ़ना सम्भव भी है या नहीं । उनमें से एक बोला—"भऊ! मकान जरा ऊँचा मालूम होता है।"

#### काली तित्तरी

"हाँ, है तो।"

"त्रगर तुम बाँस के जोर से फाँदकर उस पर न चढ़ सके तो इधर-उधर से ऊपर जाने का कोई रास्ता या सहारा भी तो नहीं दिखाई देता। फिर तो त्रागे वाले दरवाजे से ही जाना पड़ेगा।"

साहँसी चुपचाप दाँतों तले मूळ का एक सिरा चबाता रहा। फिर यों बोला मानो अपने आप ही को सम्बोधित कर कह रहा हो—"मैं आगे बढ़कर दीवार के नीचे से अन्दाज लगा सकता हूँ।"

यह कह वह ग्रागे बढ़ा श्रीर दीवार के निकट पहुँच मनछुटी के एक ढेर के पीछे गुम हो गया।

कुछ द्वारा बाद बग्गा त्रीर कपूरा भी वापस त्रा गये। बग्गा बीला— 'पहले तो कपूरे की बहन पर हाथ साफ़ करना होगा, इसके बाद पड़ोस के कुछ घर भी त्राच्छे हैं। उन पर भी जल्दी से हाथ फेर दिया जाय... त्रापना साहँसी यार किघर गया ?'

"वह दीवार की श्रोर गया है, श्राता ही होगा। श्रेंधेरे में उसे भी कुछ सूक्त नहीं रहा है।"

कुछ स्यां के पश्चात साहँसी ह्या गया।

उसे देखते ही बग्गे ने कहा-"मकान तो ऊँचा है भऊ !"

"हाँ भा !" साहँसी ने फिर एक बार मकान पर दृष्टि दौड़ाई श्रीर फिर तिनक व्ययता से हाथ मलने लगा । शायद उसके हाथ बाँस पकड़ने के लिये वेचेन हो रहे थे ।

"फिर ?" बगो ने सवाल किया।

साहँसी ने उसकी श्रोर देखे बिना उत्तर दिया—''कोशिश' करने में क्या हानि है !"

बग्गा की उसके जवाब से सन्तोष नहीं हुन्ना किन्तु उस समय इसके सिवा श्रीर कोई उपाय भी तो नहीं था।

[ १८१ ]

इतने में मेलू हाथ में लम्बा बाँस लिए इस प्रकार चलता हुआ आया मानो बड़ी दिलेरी का काम करके आ रहा हो!

साहँसी ने बढ़कर बाँस थाम खिया। पहले खचका-खचकाकर उसकी मजबूती का अनुमान किया और रास्ता टटोल-टटोलकर आगे बढ़ा और फिर उसने मकान की छत की ओर निगाह दौड़ाई। मटियाले आकाश पर काले बादल गंदले धब्बों के समान दीख रहे थे।

श्रव साहँसी ने श्रपनी कमर में एक लम्बा रस्सा लपेटा श्रीर जमीन पर हाथ मारकर दो ढेले कमर बन्द में टूँस लिये श्रीर सिर घुमाकर मन्द स्वर में साथियों से कहा—"श्रच्छा श्रव मैं कोशिश करता हूँ। छत पर सही सलामत पहुँच गया तो ये दो ढेले तुम्हारी तरफ़ फेकूँगा।"

इसके बाद उसने लम्बे बाँस को सँभाला । उसे दोनों हाथां में तौला श्रीर फिर दो-चार बार पाँव के पंजों पर नाचकर तेजी से भाग निकला... सहसा उसके कदमों की श्रावाज बन्द हो गई ।

सबने उसे पर फड़फड़ाते हुए बहे चिमगादड़ की भाँति हवा में उठते देखा। श्रनुमान से लगता था कि वह छत पर पहुंच गया है।

यदि बिजली चमक जाती तो वे उसे देख लेते नहीं तो.. तड़ाक से दो ढेले उनके पास आ गिरे। एक तो मेलू की टाँग पर लगा।

''स्रोए मयाव्या !'' वह टाँग पकड़कर बैठ गया। लेकिन चोट विलक्कुल मामूली थी। ढेला कच्ची मिक्टी का था।

त्रव बग्गे ने कुछ ग्रन्तिम निर्देश देते हुए कहा—"देखो ! ग्रव हमें यह सारा काम जल्दी से ख़तम करना है। इस गाँव में कुछ ग्रच्छे लड़ाका जवान रहते हैं जो जान की बाजी लगा सकते हैं। इसलिए हमें चुपचाप फ़र्ती से ग्रपना उल्लू सीधा करके नौ दो ग्यारह हो जाना चाहिये, समभे ?"

"हाव मऊ !" सब ने एक स्वर में उत्तर दिया। [ १८२ ]

#### कांली ांतत्तरी

कपूरे ने मेलू के कन्धे पर हाथ रखकर धीमे स्वर में श्रादेश दिया कि वह सब जवानों को लेकर मकान के दरवाजे पर पहुँच जाय।

वे लोग उधर चले गये तो कपूरा बग्गे को साथ ले पिछ्नवाड़े वाली दीवार के पास पहुँचा । ऋभी उनके क़दम रुकने भी न पाये थे कि छत पर से रस्सा लम्बे नाग की तरह फनफनाता और लहराता हुआ नीचे गिरकर भूलने लगा।

एक-एक करके दोनों रस्से की मदद से छत पर पहुँच गये।

छत की मुडेर मुश्किल से चार छ; ऋंगुल ऊँची होगी। तेज ऋाँधी के जोर में उन्हें ऐसा लगा मानो उनके पाँच उखड़ जायेंगे ऋौर वह पलक भपकाते में उड़कर गाँच के बाहर जा गिरेंगे। इसलिए वह भुके-भुके ऋाँगन से ऋाने वाली सीढ़ी पर बनी हुई ममटी की ऋोर बढ़े। यह ऋौर खुशी की बात थी कि ममटी का दरवाज़ा ऋभी खुला था, नहीं तो उन्हें कृद पाँदकर नीचे जाना पड़ता। इससे यह प्रकट होता था कि घर के लोग ऋभी सोवे नहीं थे। बात वास्तव में यह थी कि ऋभी सोने का कोई समय भी नहां था।

कपूरे के हाथ में राइफल थी, बगो के हाथ में चमकती हुई छुड़ि श्रीर साहँसी हमेशा की तरह लम्बा-सा छुरा थामे था। उन्होंने एक बार फिर श्रपने-श्रपने चेहरों को पगड़ियों के शमलों में छिपाया। केवल श्राँखों श्रीर भवों को नंगा छोड़ दिया श्रीर फिर फूंक-फूंककर क़दम रखते हुए सीदियाँ उतरने लगे।

वे काफ़ी नीचे जा चुके थे कि सहसा मोड़ से टिमिटिमाती हुई रोशनी दिखाई दी। वे तुरन्त समक्त गये कि कोई ब्रादमी हाथ में लालटेन या चिराग लिए सीढ़ियों पर चढ़ता चला आ रहा है ...वे ठिठककर रक गये। रोशनी फैलती जा रही थी।

श्रभी वे कुछ तय भी न कर पाये थे कि चिराग के पीछे दो जनाने पाँव दिखे श्रौर उनकी श्राँखें एक तेरह चौदह वर्ष की लड़की की

श्राँखों के मिलीं जो दिये को श्रापने दोनों हाथों के घेरे में लिए थी, जिसमें कि वह बुफ न जाय। उन्हें देखते ही लड़की का रंग उड़ गया। उसने यह बड़ी-सी जीम बाहर निकालकर मुँह से एक जोरदार चीख़ निकालने की कोशिश की किन्तु मारे भय के उसकी श्रावाज जैसे करठ ही में श्राटक गई। मिट्टी का दिया उसके हाथ से गिरकर टूट गया।

बग्गा ने फ़र्तों से आगे बढ़कर उसे थाम लिया। वह बेहोश हो गई। उन्होंने उसके सुँह में उसी की चुनरी टूँस-ठाँसकर उसके हाथ-पाँच बाँध वहीं कोने में डाल दिया।

श्राँगन में पहुँचे तो देखा, एक स्त्रोर ड्योदी है स्त्रौर दूसरी स्रोर घर का पसार। लगता था कि जिस दरवाजे से बाहर निकलकर लड़की स्त्राई थी उसका कुण्डा उसने बाहर से चढ़ा दिया था जिसमें कि वासु के वेग के कारण दरवाजा न खुले। स्त्रन्दर रोशनी हो रही थी ख्रौर घरवालों की बातें करने की स्नावाजें सुनाई दे रही थीं।

बग्गा श्रौर साहँसी दरवाजे के दोनों श्रोर श्रपने-श्रपने हिथियार सँभालकर खड़े हो गये श्रौर कपूरा काफी साथियों को लिए गली का दरवाजा खोलने को ड्योदी की श्रोर बदा। ड्योदी में मवेशी बँधे थे। एक बैल तो उसे इतना पसन्द श्राया कि उसके मन में एकदम यह लोभ समाया कि उसे भी वह श्रपने साथ लेता जाय किन्तु उस रात यह बिल-कुल श्रसंभव था।

ड्योदी का द्वार खोलकर उसने गली में भाँका तो कुछ नजर न श्राया। श्रतएव उसने बैल हाँकने के श्रन्दाज में हट-हट करके दो-तीन श्रावाजें निकालीं तो कुछ साये उसकी श्रोर बढ़े जैसे काली दीवारों ने उन्हें जन्म दे दिया हो।

कपूरे ने एक जवान को बन्दूक सहित घर के पिछवाड़े मनचटी के अपन्यारों के पास खड़े रहने को भेज दिया और बाक़ी लोगों को अपन्दर ले आया।

#### काली तित्तरी

दो घड़ी बाद वे सब लोग दरवाजे के सामने खड़े थे। बगो ने छुवी बढ़ाई श्रौर दरवाजे के कुगड़े में उड़सकर जब धक्का दिया तो कुगड़ा बड़ी श्रावाज से खुलकर गिरा श्रौर तड़ातड़ बजने लगा। दरवाजे के दोनां तखते जोर-जोर से पंखा भलने लगे।

घर के लोग समके कि लड़की ममटी का दरवाजा बन्द करके लौटी हैं । वे कुछ देर तक उसके अन्दर ग्राने का इन्तजार करते रहे लेकिन जब कोई सूरत न दिखाई पड़ी तो एक पुरुष जल्दी से बाहर निकल ग्राया । पहले वह दरवाजे के दोनों ग्रोर खड़े बग्गू श्रौर साहँसी को नहीं देख पाया । जब उसने लड़की को ग्राँगन में न पाकर गर्दन घुमाई तो बग्गू श्रौर साहँसी दीख पड़े । उसने घबरा कर पूछा—"श्राप कीन हैं ?"

इसी बीच में बाक़ी आदमी भी ड्योड़ी में घुस आये और दरवाजे में से उनकी भयानक आकृतियाँ दीखने लगीं। वे दोनों चुपचाप खड़े रहे। पीछे से कपूरे ने उसकी गुद्दी पर उत्तटे हाथ का ऐसा कापड़ दिया कि वह लड़खड़ाकर जमीन पर गिर पड़ा।

यह सब कुछ पलक भापकाते में हो गया । वे सब तुरन्त मकान के अन्दर घुस गये। लालटेन की रोशनी में उनके हथियार जगमगा उठे। जान के डर से घर के किसी आदमी ने शोर नहीं मचाया। उनका भी वही हलाज किया गया जो पहली लड़की का किया गया था।

कपूरा तिनक छिपा-छिपा सा रहा जिसमें कि उसे कोई पहचान न ले । वह बग्गे को भीतर वाले कमरों में ले गया और उनकी पूँजी की श्रोर इशारा किया । देखते ही देखते सब कुछ समेट लिया गया । फिर वे सब श्रांगन में श्रा गये । बग्गू ने एक निगाह में साथियों की संख्या जाँच ली श्रीर फिर वे दो हिस्सों में बँटकर पड़ोस के मकानों की श्रोर बढ़े जिनके सहन एक दूसरे के साथ मिले हुए थे ।

इतने में शहर से गोली चलने की आवाज सुनाई दी। उनके क़दम

रुक गये। कान खड़े हो गये। फिर घड़घड़ दो गोलियाँ चलने की स्त्रावाजें सुनाई दीं,। इसके साथ स्त्राँघी के शोर में पुरुषों के ललकारने की स्त्रावाजें सुनाई पड़ी।

मौके की निजाकत सममते हुए वे बाहर की श्रोर भागे।

जिस नौजवान निशानेशाज की ब्यूटी कपूरे ने बन्दूक सहित मकान के पिछ्यां लगाई थी उसने हड़बड़ाहट में थे गोलियाँ चला दी थीं। हुआ यह कि ग्राँधी के जोर से मनछ्टी ग्रौर भाड़ के ग्रम्बार हिलने लगे ग्रीर लुहकते हुए उसकी ग्रोर बढ़े तो वह घबरा गया ग्रौर उसने न जाने क्या समस्तकर एक के बाद एक तीन गोलियाँ चला दीं।

इसी बीच गाँव से विभिन्न भागों से खतरे की त्रावाजें त्राने लगीं। चर्छाड़ियों वाले कुएँ की त्रोर से 'ऐ ली-ऐ ली' का शोर उठा जिसका मतलब यह था कि उनके साथी उन्हें खतरे से त्राभास कर रहे थे। त्राव उन्होंने मेलू को त्रागे लगाया त्रीर सरपट भागे।

चर्छ ड़ियों वाले कुएँ तक पहुँचे तो वहाँ स्नन्धाधुन्य लाठियाँ चल रही थीं। गाँव के मनचले भी जल्दी में जैसा इथियार मिला लेकर मुका-बिले पर स्ना जुटे किन्तु स्नन्धकार स्नौर स्नाँधी ने उन्हें कुछ भी करने न दिया।

उधर बग्गू के सधाये हुए साथी गाँव वालों के कन्यों से कन्धे मिड़ाते हुए बड़ी सफाई से इधर-उधर बिखरकर सही-सलामत गाँव से निकल गये।

इतने में कपूरे को अपनी काली घोड़ी दिखाई दी। वह तुरन्त फलाँग कर उसकी पीठ पर सवार हो गया।

उसका विचार था कि जब वह श्रपनी मुँहजोर घोड़ी को एड़ देगा तो वह गाँव की भीड़ को काई की तरह चोरती हुई निकल जायगी। लेकिन टीक उसी समय बिजली चमकी तो गाँव वालों में से कुछ ने उसे पहचान

#### कालो तित्तरी

लिया और ऋाँधी के भयानक शोर में "काला तित्तर-काला तित्तर" का शोर घुलमिल गया।

एड़ दिये जाने पर घोड़ी सिमटकर जो उछुली तो गाँव के एक मन-चले युवक ने उसकी लगाम पर अपट्टा मारा। इस पर घोड़ी हिनहिनाकर पिछुले पाँच पर खड़ी हो गई। उसकी आँखें फट गईं, कान फड़फड़ाए और अयाल लहराये...सवार ने होठ काटकर अपनी तम्बे हत्येवाली कुल्हाड़ी अपर उठाई किन्तु घोड़ी के अगले पाँव जमीन पर लगने भी न पाये थे कि एक छुवी चमकी और कपूरे के पेट की आतें उपेड़ती हुई उन्हें पेट से बाहर निकाल लाई।

वह बड़े मगर-मच्छु की तरह बल खाकर श्रींचे मुँह जमीन पर गिरा। पेट के खून का फ्रांचारा छूटा श्रीर च्रांग भर में जमीन उसके गाड़े खुन से लाल हो गई......

फिर बारिश की मोटी-मोटी बूँदे गिरने लगीं।

# वैद्यले-३८

शहर का वह हिस्सा, जिसे पहले सचसुच शहर का हिस्सा कहा जा सकता था, श्रव बुरी तरह बरबाद हो चुका था। दूटे फूटे मकान दूर से देखने वालों को बिलकुल निर्जन खंडहर दिखाई देते थे श्रीर ग्रगर उन वीरान गलियों में पश्चिमी पंजाब से श्राये हुए शरखार्थियों की चहल पहल न होती तो शायद दिन के वक्त भी श्रादमी को वहाँ जाते डर लगता।

कुछ समय पहले यहाँ के असल निवासियों अर्थात मुसलमानों को भीषण संकटों का सामना करना पड़ा था । जो विषदा उन पर पड़ी थी उसकी कहानी इन खंडहरों की जवानी सुनी जा सकती थी । दंगों के बाद जब कि इससल निवासी प्रस्थान कर गये थे और इप्रभी शरणार्थी ज्याकर बसे नहीं थे, इस बस्ती की बड़ी बुरी दशा थी। मकान गिराये गये थे, जलाये गये थे, सारांश यह कि उनकी ईट से ईट बजा दीगई थी। मकानों के बिना दरवाजों की चौखटें मानों आश्चर्य से मुँह खोले कभी न लौटने वाले निवासियों की बाट जोह रही थीं। धूल मरे आकाश में गिद्ध मंडराते थे। खुजली के मारे हुए कुत्ते कांने खुदरे सूँवते फिरते थे और भूली भटकी गायें ईंटों के देरों में टोकरें खाती फिरती थीं।

इस भयंकर बरवादी में यदि एक सम्प्रदाय के मकानों को ऋत्यधिक हानि पहुँची थी तो दूसरी ऋोर दूसरे सम्प्रदाय के इक्का-दुक्का मकान सही-सलामत खड़े थे। उन्हीं मकानों में एक सरदार बुद्ध सिंह का मकान भी था।

इतने श्रन्छे नाम वाले सरदार जी बड़े बेतुके डील डील वाले श्रादमी थे। नाटा कद, कदू सा सिर, छोटी छोटी जिज्ञासा पूर्ण श्राँखें, मोटा शरीर, लम्बी लहराती हुई डाढ़ी—सुबह शाम पाठ करते, माला जपते। यों तो माला हर समय कलाई से लिपटी रहती थी परन्तु प्रातः काल जब वे ग्रंथ साहब का लम्बा पाठ करने लगते थे तब घर के श्रन्य लोगों की नींद उखड़ जाती थी। श्राप गुरुद्वारे में भी पाठ करवाते रहते थें। दूसरों को भी पाठ का उपदेश देते रहते थे।

दंग के दिनों की कहानियाँ बड़े करुण स्वर में दोहराते थे। कहते—यह सारी त्राबादी मुसलमानों की थी। यह त्राबादी के सिरे पर हम लोगों के मकान थे। इसीलिए उन दिनों उन्हें त्रपना मकान छोड़ हिन्दू मुहल्ले में जाना पड़ा। शहर में उनके कई त्रीर मकान भी थे किन्तु वे सब किराये पर उठे थे त्रातप्व उन्हें बड़ी कठिनाहयों का सामना करना पड़ा या।

इघर जब पाँसा पलटा तो उन्होंने डर के मारे भागते हुए मुसलमानों की हजारों की जायदादें कौड़ियों के मोल ख़रीद लीं स्त्रीर फिर मालदार

शरणार्थियों के हाथ ग्राधिक से ग्राधिक दामों पर बेच कर जी खोलकर मुनाफ़ा कमाया। उनके पाठ में श्रीर तेज़ी श्रागई श्रीर उनका चेहरा शान के प्रकाश से दमक उठा।

दूर तक फैले हुए खंडहरों के एक सिरे पर खंदे हुए कुछ सही-साबित मकान ग्रजब हास्यास्पद हर्य प्रस्तुत करते थे। उनमें सब से ग्रन्छा मकान बुद्ध सिंह का था। दो मंजिले मकान का कुछ भाग उन्होंने किराये पर उठा दिया था ग्रौर ऊपर वाले तल्ले में वे स्वयं रहते थे। उनके घर के पास ही रेल का पुल था। रात दिन रेलगाड़ियौं उघर के गुज़रती थीं। ऐसे ग्रवसरों पर इन्जन की सीटियों ग्रौर गाड़ी की गड़गड़ाहट का शोर इतना तीत्र होता था कि कान पड़ी ग्रावाज़ नहीं सुनाई देती थी।

शरणार्थियों ने घबराहट में जो काम सामने श्राया शुरू कर दिया। लगातार कब्ट फेलने के कारण उनके हवास ठिकाने नहीं रहे थे। कुछ लोगों के सम्बंधी मर खप गये थे, कुछ श्रमाथ या बेसहारा रह गये थे। इस प्रकार के श्रसंख्य कुटुम्बों में एक कुटुम्ब विसाखा सिंह का भी था।

विसाखा सिंह पश्चिमी पंजाब के जिला लायलपुर का एक साधारण किसान था। उसके दो लड़के थे और तीन लड़िकयाँ। वह स्वयं काला-पन लिये हुए गेहुए रंग का लम्बा तड़ंगा और मज़बूत ग्रादमी था। उसके हाथ सचमुच हल की हत्थी थामने के लिये बने थे। उसका विवाह छोटी अवस्था में ही हो गया था अतएव वह अभी सैंतीस वर्ष का था और उसका बड़ा लड़का उन्नीस वर्ष का हो चुका था। उससे छोटा लड़का सत्तरह वर्ष का। लड़िकयों में सब से बड़ी पन्द्रह वर्ष की थी। छोटी लड़िकयों भी चार पाँच वर्ष तक जवान हुआ चाहती थीं।

पहले पहल अपने घरों से निकल कर उन्हें कैम्प में दबके रहना पड़ा। न कुछ खाने को न पीने की। न तन ढाँकने की कपड़ा ग्रीर न

#### वैवले-३८

सिर छिपाने को कुटिया। फिर हर समय प्राणों का भय ऋलग रहता था।

जीवन का एक एक पल बिताना ऋत्यधिक कष्टप्रद सिद्ध हो रहा था। यह काफिला ऋजन ऋस्तन्यस्त दशा में पूर्वीय पंजान की ऋोर रवाना हुन्रा। बच्चे, बूढ़े, स्त्रियाँ ग्रौर पुरुष थके हुए क़दमों के साथ भूखे प्यासे थके हारे, प्राण हथेली पर लिये मंज़िल की ऋोर बढ़ रहे थे। रास्ते में दंगाइयों के समृह बढ़ बढ़ कर हमले करते थे। क्राफिले में कई बहादुर त्रादमी भी थे जो मौका पड़ने पर बड़ी बेजिगरी से लड़ते थे। लेकिन भूख ग्रौर प्यास के मारे हुन्रों का लड़ना भी क्या। कभी कभी क्रॅंबेरी रातों में रूखी सूखी खाकर लोग खेतों की मेंडों पर ही करवट बदल कर ऊँघने लगते । जगह जगह सुलगती हुई आगमें से चिंगारियों की फुलमाड़ियाँ खुटने लगतीं। कोई ऋाँखों से ऋंधी बुढ़िया पोपले मुँह से काँपती हुई वेसुरी स्रावाज में शब्द गाने लगती तो एकाएक शोर मच जाता । दंगाई छापा मारते । वे बेखटके डेरे के श्रन्दर घुस श्राते। तारों के मंद प्रकाश में तेजी से बढ़ती ख्रौर उचकती हुई छात्रा दिखलाई पड़तीं । भाग दौड़ मच जाती । जब हमलावर बची ख़ुची गठरियाँ ग्रौर पाटिलयाँ छीन लेने की चेव्टा करते तो स्त्रियां के रोने चिल्लाने से श्रासमान गुँज उठता । लेकिन तारे चप चाप श्राँखें भएका भएका कर तमाशा देखा करते । घार्मिक नारों, 'मारो मारो' का शोर श्रौर पहरेदार सिपाहियों की बंद्कों की तड़ातड़ की त्रावाजें धीरे धीरे मन्द पड़ जातीं। ग्रसहाय ग्रौर ग्रनाथ कराहती हुई स्त्रियाँ ग्रौर घायल मनुष्यों के सुते हुए चेहरे बाकी रह जाते । यह क्राफ़िला पक्के हुए फोड़े के समान था जिसे बार बार चर्के दिये जाते थे ऋौर जो सदैव रिस्ता रहता था।

विसाखा सिंह ने स्वयं भी मौका पड़ने पर लड़ने-भिड़ने से जी नहीं चुराया । उसे ग्रौर उसके दोनों लड़कों को भी ग्रानेक घाव लग चुके थे । ग्रान्त में जब वे भारत की सीमा में दाखिल हुए तब उनके दम में दम

त्राया । वहाँ उन्हें दूध श्रीर जलेनियाँ खाने को मिलीं । पूड़ी-कचौड़ियाँ भी मिलीं । उस समय उन्हें इस बात की श्रत्यधिक प्रसन्नता थी कि श्रव वे श्राराम की नींद सो सकेंगे । श्रव उनका कोई दुश्मन रात में छापा नहीं मारेगा । श्रव उनकी बहू-बेटियों की लाज कोई नहीं लूटेगा । श्रव उनके जान-माल की पूरी-पूरी रहा की जायगी ।

भारत की सीमा के अन्दर प्रवेश करते ही कृषिता मनके के दानों की भाँति विखरने लगा। कुछ लोग रास्ते में जो शहर पड़ते वहाँ तक जाते! भागे हुए मुसलमानों के मकानों पर कृब्जे होने लगे। बिसाखा सिंह ने भी बुद्धि सिंह के पड़ोस में एक टूटे फूटे से मकान में डेरा जमा दिया। यह मकान वास्तव में ऐसी बुरी दशा में था कि उस समय तक किसी को उस पर कृब्जा जमाने का ध्यान तक नहीं आया था। क्योंकि आँग कोई मकान खाली नहीं था इसलिए विसाखा सिंह ने उमे गनीमत सममा।

यह विचित्र प्रकार की बस्ती थी। लुटे हुए बदनसीब लोगां के छोड़े हुए मकानों में तबाह ख्रीर बरबाद होकर भागे हुये बदनसीब लोग ख्राबाद हो रहे थे। संसार के इतिहास में मनुष्यों के दो दलों ने एक दूसरे से इतना भयानक मज़ाक कभी नहीं किया होगा।

मानव-रारीर की हिंडुयों का ढाँचा भयानक ग्रौर शिचापद चीज है लेकिन जली-फुँकी ग्रौर उजड़ी बस्ती का दृश्य भी कुछ कम भयानक ग्रौर शिचापद नहीं।

कँची-नीची ग्रीर केनड़-खानड़ गन्दी गिलयों में उदास चेहरों वाले दुर्नल ग्रीर लाचार मनुष्य ग्राँखों में दुःख ग्रीर निराशा लिए इधर-उधर घूमा करते थे। यह बस्ती दिन के किसी च्राण में भी कोई मुखद या मनोहर दृश्य उपस्थित नहीं करती थी। रात के स्वप्निल प्रकाश में वह एक लम्बे-चौड़े किन्सितान के समान दीखती थी। मुनह के समय जन सूर्थ का तीखा प्रकाश अन्धकार की चादर को फाड़ देता तन यह नस्ती मानो

#### वैबले-३८

स्रापनी तबाही पर रोने लगती थी। सारे-सारे दिन बहके-बहके लोग इधर उधर घूमा करते। कुत्ते मूँकते, मरियल बिल्लयाँ हिंडुयाँ चिचोइती स्रीर मिक्खयाँ मनभनाया करतीं। शाम के समय तन्दूर स्रीर चूल्हे जल जाते। पहले तो धुएँ की पतली-पतली लकीरें ऊपर को उठने लगतीं स्रीर फिर घुएँ के खम्मे बन-बनकर बोिमल बादलों के समान स्राकाश के इस सिरे से उस सिरे तक फैल जाते। इस फैली-फैली सियाही के नीचे वह बस्ती स्रीर भी तुच्छ तथा घृणित दीखने लगती।

पहले-पहल विसाखा सिंह ने वाह गुरू को लाख-लाख धन्यवाद दिया। आखिर यह अकाल पुरुख की कृपा ही तो थी कि वह अपने सारे कुटुम्ब सिहत सारी किठनाइयों को सकुशल पार कर आया था। धीरे-धीरे जीविका की चिन्ता सताने लगी। कुटुम्ब का पेट पाल ने का प्रश्न सबके सामने उपस्थित हो गया। वैसे तो प्रत्येक व्यक्ति के लिए जमा-जमाया काम छूट जाने के बाद नये सिरे से काम ग्रुरू करना बहुत ही कठिन समस्या थी किन्तु विसाखा सिंह जैसे लोगों के लिए, जो पहले खेती-बाड़ी करते थे और जो अन्य कोई भी कला नहीं जानते थे, यह समस्या न सुलम्क सकने वाली उलम्बन बनकर रह गई थी। और फिर बिना पूंजी के तो कुछु भी नहीं हो सकता था। अन्त में सिवा मजदूरी के दूसरा कोई उपाय नहीं रह गया। फिर भी घर का ख़र्च पूरा नहीं पड़ता था। जान-पहचान वालों के सामने यद्यपि इस प्रकार का काम करने में वह अपनी बड़ी हेठी समभता था क्योंकि पहले वह उसके सामने अच्छान्खासा सम्मानित जीवन बिताता था। सारांश यह कि इस प्रकार जीवन की गाड़ी चर-मर्र करती हुई विसटती चली जा रही थी।

बस्ती में पहुँते ही गुरुद्वारे में सर्दार बुद्ध सिंह से उसकी मुलाकात हुई। या ही बुद्ध सिंह को उसकी बातों में दिलचरपी पैदा हो गई। साँभ के समय बिसाखा सिंह उनके यहाँ चला जाता ख्रौर उन्हें उन विपदाख्रों की कहानियाँ सुनाता जो रास्ते में उस पर पड़ी थीं। बिसाखा सिंह के मन

में एक हल्की-सी आशा थी कि सदीर बुद्ध सिंह से उसे कुछ न कुछ लाभ अवश्य पहुँचेगा। इसी लिए उसने उनके यहाँ आना-जाना शुरू कर दिया।

विसाखा सिंह के दिला में बुद्ध सिंह के लिए बड़ा आदर था। एक तो बुद्ध सिंह सूरत से ही बड़ा गुरुमख दीखता था। उसका वह चौड़ा माथा, चमकती श्राँखें, लम्बी दाढ़ी जिसके श्रिधकांश बाल सफेद हो चुके थे। प्रेम रस में डूबी हुई उसकी वह मीठी-मीठी बातें श्रीर फिर वह सुबह शाम पाठ करता था । देखने में लगता था कि उसे दुनिया की भंभटों से कोई मतलब नहीं है, वह इस माया-जाल से दूर भागता है। बिसाखा सिंह की विपदात्रों का हाल वह बड़े ध्यान से सुनता। लगता था कि उन पर किये गये ऋत्याचारों का हाल सुन-सुनकर हृदय मोम की भाँति पिघला जा रहा है। इस पर बिसाखा सिंह का दिल भर ग्राता ग्रीर वह रूँधे हुए स्वर में ऋपने लहलहाते हुए खेतों की चर्चा करता जहाँ हर साल लाखों सुनहरी बालियाँ हवा में भूतमा करती थीं। वह गेहें के उन देरों की चर्चा करता जो उसके घर के अन्दर कोठियों में ठसाठस भरे रहते। श्रपने वैलों. श्रपनी भूरी श्रीर काली भैं सों. श्रपने मकान, सारांश यह कि हर चीज की कहानी सुनाता। बुद्ध सिंह उसकी बातों से बड़ा प्रभावित दिखता था। वह त्र्यादमी जिसके बारे में कहा जाता था कि उसके पास लाखों रुपया नकद मौजूद है, मकान है, कारखाने हैं विसाखा सिंह की बातें सुनने के बाद बड़ी गंभीर मुद्रा बनाकर सिर हिलाता ऋौर कहता— "विसाखा सिंह जी ! पाठ किया करो।"

बिसाखा सिंह ने खूब पाठ करना शुरू कर दिया। स्वयं भी किये त्र्यौर पत्नी तथा बच्चों से भी कराये किन्तु जब उनका कोई फल न निकलता तो बिसाखा सिंह कहता—"सर्दार साहब जी! देखिए जवान लड़कियों का भी कितना भार होता है! सन्तो बड़ी हो गई है। ऊपर से कर्जाजुग का ख्याल किजाए। मेरे पास तीन-चार सौ रुपया भी हो तो मैं किसी न किसी तरह बड़ी लड़की के भार से मुक्त हो जाऊँ।"

"वाह गुरू ! वाह गुरू !!" बुद्ध सिंह जवाब देता—"विसाखा सिंह जी ! नाम जपा करो नाम । नाम में बड़ी शक्ति है ।"

विसाखा सिंह ने नाम जपना शुरू कर दिया। खूब जी भर कर नाम जपा। यहाँ तक कि एक माला भी खरीद डाली। हर समय उग-लियों में मनके घूमते रहते थे। एक पहर रात बाक़ी रहती तभी वह जाग उठता, स्नान करता और फिर एक टाँग पर खड़ा होकर माला जपने लगता।...सारे दिन काम की तलाश में मारा मारा फिरता। बेटे अलग जीविका की खोज में परेशान थे लेकिन फल कुळुन निकलता।

बिसाखा सिंह कहता—"महाराज जी! यदि मेरे पास कहीं से पाँच सौ रपया भी त्रा जाय तो कोई छोटी मोटी दूकान ही खोल डालूँ।"

जवाब मिलता—"बिसाखा सिंह जी! गुरूद्वारे जाया करों। सारे परिवार को ले जाया करों। गुरू के दर्बार में क्या नहीं है ! जो माँगेगा सो मिलेगा। गुरू के घर में किसी चीज की कमी नहीं है। खालसा जी! लेकिन श्रद्धा होनी चाहिये ! बिना श्रद्धा के कुछ भी नहीं प्राप्त हो सकता। श्रजी बाबा श्रमीख सिंह जी कह गये हैं कि श्रद्धा का फल श्रवश्य मिलता है। चाहे दो, चार, दस, बीस या पचास वर्ष के बाद ही मिले...लेकिन श्रद्धा का फल मिलता श्रवश्य है।

श्रतएव श्रव गुरुद्वारे के चक्कर लगाने लगे। उसकी पत्नी उसकी इन बातों से परेशान हो गई। एक दिन विसाखा सिंह ने ऋाँखें मूँद कर बड़े भेम से कहा—"सन्तों की माँ, श्रद्धा का फल श्रवश्य मिलता है। चाहे दो, चार, दस, बीस या पचास वर्ष के बाद ही मिले।"

यह मुनकर उस दुखी नारी ने यकायक ऋपनी मैली-मैली ऋाँखें ऊपर उठाई। पहले कुछ च्चणों तक तो उसके मुँह से एक शाब्द तक नहीं निकल सका फिर बड़ी कठिनाई से एक-रुककर रूँवे हुए स्वर में बोली—

"दस, बीस, पन्वास वर्ष ?" श्रीर फिर उसकी काँपती हुई श्रावाज बन्द हो गई। सिर में जुम्बिश हुई श्रीर उसके होंठ काँप कर श्रीर नथुने पड़क कर रह गये।

इसके बाद कुळु कहने सुनने की ग्रावश्यकता, ही नहीं रही थी। क्या सनतो ग्रीर उसकी बहनें चालीस-पचास वर्ष तक श्रद्धा के फल का इन्तजार कर सकती थीं। क्या उसके नौजावन खड़के श्रद्धा के फल के इन्तजार से बूढ़ें न हो जायँगे १ क्या दुनियाँ के किसी मनुष्य की इतना धैर्य भी है कि वह दस, बीस, चालीस .

बिसाखा सिंह के दिमाग में खलवली सी मच गई।

उस रात दिये के मन्द प्रकाश में वह टागें समेटे दोनों घटनों को बाहों में दबाये दीवार से पीठ लगाये अपने विचारों में देर तक खोया रहा। उसकी धनी भवों के नीचे काली पतिलयाँ वडी तेजी से इधर-उधर नाच रही थीं। दिये की थरथराती लो में घर के लोग चलती हुई परछाइयों के समान दीख रहे थे। दृष्ठि सीमा तक रात के धंघले वायमंडल में टूटे फूटे घरों के सिलसिले ग्राजीय भयानक दृष्टि प्रस्तुत कर रहे थे । जिस घर में वह रहता था उसका श्रिषकांश भाग गिर चुका था। शायद दंगाइयों ने ही उसे आग लगाई होगी। दीवारों और छत की कड़ियाँ कुछ जल जाने के कारण और कुछ धुआँ लगने की वजह से विलकुल काली पड़ गई थी। कडियाँ तो इतनी कमजोर हो गई थीं कि निवासियों को हर समय उनके गिर जाने की श्राशंका रहती । उस दिन श्राटा न होने के कारण खिचड़ी पकाई गई थी श्रीर घर के सब लोग उसी पर सन्तोष करने के लिये मज़बूर ये । उसकी तीन लड़िकयाँ— वह उन्हे एकटक खोई खोई दृष्टि से देखने लगा। मानो उसने उन्हें पहले कभी न देखा हो-यह आकृतियाँ कैशी हैं, कौन है, कहाँ से आई हैं स्त्रीर सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह था कि वे जायँगी कहाँ ? उसके दोनों बेटे नंगे सिर बैठे खिचड़ी खा रहे थे। बार बार कीर के लिए मुँह

फाड़ते थे। उनके जूड़ों में में निकलकर ऊपर को लहराते हुए बालों के गुच्छे मुगें की कलंगी की माँति दीख रहे थे। वे लगातार मुँह चलाये जा रहे थे। विसाखा सिंह बिलकुल अचेत-सा हो रहा था। मानो उसका उस वातावरण से कोई सम्बन्ध न हो। जैसे वह सब से ऊपर और अलग बैटा इस दुनिया के खेल देख रहा हो। लेकिन वह अधिक देर तक इस तिन्द्रल अवस्था में लीन न रह सका। उसे जल्द ही इस बात का अनुभव हो गया कि यह सब कुछ स्वम नहीं था और न वह उनसे अलग था। कितनी विचित्र बात थी। कोसों तक फैली हुई घरती पर गेहूँ के सुनहरे गुच्छों से लदे हुए पौधे खड़े थे। विशाल आकाश के नीचे वाह गुरू अकाल पुरुख की विशाल घरती मौजूद थी किन्तु उसके भक्तों को न खाने को अनाज मिलता था और न सिर छिपाने को जगह मिल पाती थी। आश्चर्य ! बुद्धू सिंह के पास इतना रूपया है, मकान हैं, कारखाने हैं, वेकिकी है, आनन्द है...

दूसरे दिन संध्या समय विसाखा सिंह बस्ती में बेनकेल घूमता फिर रहा था। उसके मन में त्राजीव उलफने पैदा हो रही थीं। घरेलू परेशानियाँ दिन पर दिन बढ़ती जा रही थीं। उनका कोई हल दिखाई नहीं देता था। पहले उसे कभी इतने सोच विचार ग्रौर चिन्ता की ग्रावश्यकता ही न पड़ी। उसे याद था कि वे दो भाई थे ग्रौर एक बहन। उनके बाप को उन सब से बड़ा प्रेम था। लड़कपन ग्रौर युवावस्था उसने बड़ी बेफिकी से विताया था। खेल कृद गीत ग्रौर ग्रालगोजी तथा प्रेम ग्रीर मुहब्बत के सिवा उसने ग्रौर किसी चीज के सम्बन्ध में सोचा ही न था।

जब वह जवान हो गया तो निश्चिन्तता श्रीर स्वच्छन्दता के कारण जब श्रीर कुछ न सूफा तो उसने चोरों श्रीर डाकुश्रों से याराना गाँठा। दो तीन वर्ष इसी प्रकार के कामों में बीत गये। जब बाप ने देखा कि बेटा सीचे रास्ते से भटककर श्रपनी जिन्दगी खराब करने पर तुला है तो

उसने उसका विवाह कर दिया। दाम्यत्य-जीवन के बन्धन कुछ ऐसे मजबूत सिद्ध हुए कि वह जिम्मेदार गृहस्थों की भाँति जीवन व्यतीत करने लगा।

विवाह के पश्चात बाल-बच्चे भी हुए । जीवन के किन उतार चढ़ाव से होकर भी गुजरना पड़ा, लेकिन उसे आज तक ऐसा कड़ अनुभव नहीं हुआ था कि मनुष्य पेट की रोटी और तन के कपड़े के लिये ईमानदारी से काम करना चाहे तो उसे काम ही न मिले । वर्तमान आर्थिक पेचीदिगियाँ उसकी समभ में बिलकुल नहीं आती थीं। उसे ये सब चीज़ें एकदम अस्वाभाविक दीखती थीं। किन्तु उसका दिमाग इन समस्याओं को हल करने में असमर्थ था।

वह मुहल्ले-मुहल्ले घूमता फिरा। गन्दी-गन्दी गलियाँ जहाँ रके हुए पानी की नालियों से ऐसी तीव दुर्गन्ध उड़ती थी कि दिमाग फटा जाता था। जगह जगह गली सड़ी सिक्जियों, प्याज के छिलकों और कृष्टे करकट के देर दिखते थे। ऊँची-नीची गलियों में जगह-जगह टूटे फूटे मकानों की ईंटें, मिट्टी, चूना और रोड़ी फैली हुई थी। मिट्याले रंग की मड़ी और गन्दी दीवारें तबीयत को और अधिक परेशान कर देती थीं। फटे पुराने चीथहें लटकाए छोटे-बहें बच्चे चीखते और चिल्लाते हुए एक दूसरे के पीछे और आगे भाग रहे थे। अधिकांश मकान ऐसे थे, जिनके बार तक जल चुके थे। उनके अन्दर आँगन के दृश्य साफ दिखाई देते थे। ढीली रिस्सियों वाली चारमाइयाँ, उन पर बैठी हुई मैले कुचैले दुपट्टों के आँचल उड़ाती स्त्रियाँ और उनके भूख से विलखते बच्चे जो चीख़ चीख़ कर माँओं की छातियों को टटोलते थे। परन्तु उन छातियों में अब दूध कहाँ रह गया था १ कहीं कहीं हलकी आँच पर तीन तीन दिनों की बासी रोटियाँ उवाली जा रही थीं।

घूम फिर कर विसाखा सिंह बुद्धू सिंह के मकान के आगो पहुंच कर रुक गया। साँभ्त के समय बुद्धसिंह के दर्शन करना उसका नित्यक्रम बन गया था। बुद्धसिंह को, जिसे घर में बहे सर्दार जी के नाम से पुकारा जाता था ग्रीर गुरुवानी की बातें करने ग्रीर व्याख्यान देने का बड़ा चस्का था ग्रायएय वह इस प्रकार के लोगों से बड़े तपाक से मिलता था जो उसकी ग्राध्यात्मिकता के कायल होकर उसकी बातें ध्यानपूर्वक सुनना ग्रापना कर्त्तव्य समभ्तते थे। वह ग्रन्थ साहब में से श्लोक पढ़ता ग्रीर ज्ञान ध्यान की बातें सुनाया करता था।

विसाखा सिंह ने ड्योड़ी में से ऊपर को जाती हुई खुली श्रीर साफ सुथरी सीढ़ियों की श्रोर देखा, जो श्रमी-श्रमी धोई गई थीं। सीढ़ियों के ऊपर वाले दरवाजे में से चितिज में चमकते सूर्य की तेज रोशनी दीख़ रही थी। प्रकाश एक प्रकार से सागर था जो निचली सीढ़ियों तक लहरा रहा था।

यह दृश्य देख उसकी ऋाँखें चौंधिया गई।

नीकर से मालूम हुआ कि नहें सर्दार जी घर ही में हैं। वह धीरे धीरे सीढ़ियों पर चढ़ने लगा। ऊपर के दरवाजे के दाईं ओर पूरा कुटुम्ब रहता था और बाईं ओर का, जिसमें दो कमरे और एक आँगन था, उसमें केवल बड़े सर्दार साहब रहते थे। बड़े हिस्से से छोटे हिस्से तक एक चौड़ा मार्ग था जिसके दोनों छोर फूलों के गमले रखे थे।

विसाखा सिंह ऊपर पहुँचा तो उस समय सर्दार साहब त्राँगन में चबूतरे पर त्रासन विद्धाये बैठे थे। पासही चौकी पर पानी का लोटा त्राँर त्रांगीछा धरा था जिससे प्रकट होता था कि वे क्रामी-स्रामी पाठ करके उठे हैं। सूर्य चितिज तक पहुँच चुका था स्त्रौर बदली का एक दुकड़ा उसे ऋपने ऋगँचल में छिपा लेंने का प्रयास कर रहा था।

यह श्रागे बढ़ा तो सर्दार साहब ने पाँव की श्राहट पाकर पीछे घूमकर देखा । उसने सत सिरी श्रकाल का नारा लगाया । सर्दार साहब की मूछें

होठों पर वड़ी मनोहर मुस्कान उत्पन्न हुई, "आइये-ख्राइये, विसाखा सिंह जी ! कहिये, क्या हाल है ?"

"कुपा है! श्रपनी कहिए।"

बड़े सर्दार साहब ने सिर पर लिपटी हुई छोटी पगड़ी पर हाथ फेरते हुए कहा—"ग्रभी-ग्रभी पाठ खतम किया है।...जरा सामने के दृश्य का ग्रानन्द ले रहा था।"

दृश्य ?

विसाखा सिंह ने गर्दन उठाकर देखा । उसे कोई ऐसा दृश्य न दिखा, जिसका वह भी आनम्द ले सकता । धूमिल वायुमण्डल में ध्वस्त जले फुँके मकानों के सिलसले और उनकी आँधेरी गन्दी गलियाँ में निरीह कीड़ों के समान रेंगनेवाले दुखी मनुष्यों में से कोई भी ऐसा दृश्य नहीं प्रस्तुत कर रहा था जिसका आनन्द लिया जा सके...सचमुच, बड़ों की वार्ते भी बड़ी होती हैं।

वह श्रीर निकट पहुँचा तो सर्दार साहब ने बड़ी ही मिहरबानी से चौकी की श्रीर इशारा करते हुए कहा—"लोटा श्रीर श्रंगीछा मुँडेर पर रखकर चौकी पर बैठ जाइये।"

विसाखा सिंह ने आज्ञा का पालन किया !

उसने अपने धूलों से अटे हुए पुराने जूतों की ओर छिपी हिन्द से. देखा श्रीर मैले टखनों की तहबन्द के कोनों से ढाँपते हुए पाँव समेट लिये।

"वाह गुरू ! वाह गुरू !!" सर्दार साहव की धनी मूछों में से आवाज निकली, "देखिये सर्दार साहव ! मगवान की लीला भी कैसी न्यारी है ।...में दिन रात सोचा करता हूँ कि आख़िर यह जग, माया ही तो है । ये मकान, यह जमीन, यह भोग-विलास के सब सामान एक दिन धरे के धरे रह जायेंगे । धन्य हैं वे लोग जो रूखी-सूखी खाकर भी वाह गुरू के नाम का सुमिरन करते हैं । स्वर्ग भी तो आकास पुरुख ने ऐसे ही लोगों के लिये

## वैबले, ३८

बनाया है। हम लोग तो गुनहगार हैं, पापी हैं। हे वाह गुरू! हे वाह गुरू!!..."

इसके बाद उन्होंने एक गुरूभिक्त की कहानी सुनाई। एक साधू था। रामनाम का प्यासा। उसका जी चाहा कि खोर खाया। बुद्धि ने कहा, मूर्ख ! तू साधू है, सन्यासी है, तुमें इन चीजों से क्या मतलब ? मन नहीं माना तो उसने श्रपने घर जाकर खीर खाई। इतनी खाई, इतनी खाई कि मन बस-बस पुकार उठा किन्तु श्रव बस कहाँ। साधु तो मन को सीख देना चाहता था...।

यह कथा सुनकर बड़े सर्दार साहब ने मिस्कीन स्रत बनाई श्रीर श्राँखें मटकाकर आकाश की श्रोर देखा, जो उस समय रक्त के समान लाल हो रहा था।

पहले जब बिसाखा सिंह उनकी यह बातें सुनता तो श्रद्धा से गदगद हो जाता था किन्तु आज यह सब बातें उसे बड़ी अजीब-सी मालूम हो रही थीं ओर फिर सर्दार साहब के मुँह से वह और भी अनोखी लगती थीं। बिसाखा सिंह पर यह भेद तो तब खुला था कि खाली पेट लम्बे पाठ करना तो एक ओर रहा, मनुष्य के मुँह से एक शब्द 'वाह गुरू' तक निकलना असंभय है। उसे ख्याल आया कि इस आदमी के वातावरण के उजलेपन में हजारों गरीबों की तमन्नाओं के खून की लाली बड़ी कुशलता से छिया दी गई।

बड़े सर्दार साहब की बातों का सिलसिला जारी था।

धुएँ के खम्मे बस्ती से ऊपर उठने शुरू हो गये थे। वे एक साथ मिलकर बोफिल बादलों का रूप धारण कर रहे थे। मकान के बहे हिस्से की त्रोर से सफेद और उजली दीवारों के सिलिसिलों में से हँसते, खेलते, बोलते-बहकते बच्चों और औरतों के स्पहले स्वर गूँज रहे थे।

यकायक सर्दार साहब बोले—"ग्राइए विसाखा सिंह जी ग्रान्दर चलें। सर्दी बढ़ती जा रही है।"

दो कमरों में से एक में गुरुग्रन्थ साहब का प्रकाश किया गया था । उस कमरे में मीत की-सी खामोशी छाई थी। गुरु ग्रन्थ साहब ऊँचे चब्तरों पर रंगीन रूमालों में लिपटे हुये थे। उनके ग्रागे दरी पर विछे हुए रूमाल के दामन में कुछ रंगीन-फूल दिखाई दे रहे थे। मक्खियाँ भताने की चबरी के सफेद बाल घोड़े की ग्रायाल की तरह एक ग्रार को लटके थे। दायें-बायें छोटे-छोटे फूलदान ग्रीर उनमें बासी वास में कुछ फूल उड़से दीख रहे थे। बिजली ग्रामी वहाँ नहीं ग्राई थी, इसलिए एक छोटा सा सुन्दर लैम्प चौकी पर रक्खा था।

वड़े सरदार साहब का कमरा भी बड़ा था। कर्श पर दरी श्रोर दरी पर दा छोटे-छोटे पुराने गालीचे बिछे थे। सरदार साहब उजले बिस्तर पर बैठ गये। सिरहाने से पास रखी तिपाई पर एक बहुत बड़ा श्रीर मुन्दर तेल का लैम्प जल रहा था।

बिसाखा सिंह के लिए वही परिचित वातावरण था। एक ग्रांर दीबार पर गुरु नानक साहब का बड़ा-सा चित्र था जिसमें वे नाम जपते हुए दिखाये गये थे। ग्राँखें भक्ति रस में डूबी हुई, हाथ में माला। 'नाम खुमारी नानका चढ़ी रहे दिन-रैन'। उन्होंने लोगों की गाड़ी कमाई का रुपया नहीं खाया था बल्कि सच्चा सौदा किया था जिस पर बाप ने उन्हें बुरी तरह पीटा था। घार्मिक बटनात्रों से सर्वन्थित ग्रोर भी कई चित्र लटके थे। एक ग्रोर दीवार के साथ ड्रोसंग टेबुल रखी थी, जिस पर कंघे, ब्रश तेल की शीशियाँ वेतरतीवी से रखी हुई थीं। एक ग्रोर फर्श पर कुछ पीले रंग की कौड़ियाँ बिखरी पड़ी थीं। शायद बच्चे उन्हें वहाँ मुल गये थे।

सर्दार जी ने गावतिकया बगल में द्वाया श्रीर पास की श्रालमारी में से हरे रंग की जिल्द वाली एक मोटी-सी किताब निकाली। उसमें अनेक भक्तों की कविताएं टीका सिंहत छुपी थीं। सर्दार जी ने बड़े प्रेम से किताएं सुनानी शुरू की। विसाखा सिंह कुसीं पर मोंड़े अन्दाज में बैठा देखने में सुन रहा था परन्तु वास्तव में उसका ध्यान उन चीजां की श्रोर नहीं था। कभी-कभी स्वयं सर्दार साहब भी पड़ोस के कुम्हार के धोड़ों की हिनहिनाहट में पंक्ति भ्लाकर कहीं के कहीं जा पड़ते।

अन्त में यह कार्यक्रम समाप्त हो गया तो सर्दार साहब ने किताब बन्द करके तिपाई पर रख दी। आकाश पर इका दुका तारे फिलमिलाने लगे थे।

सहसा सदार साहब बोले— "ग्राज मैंने एक पिस्तील खरीदा है..."
"पिस्तील !" विसाखा सिंह का मुँह खुले का खुला रह गया।
"हाँ।" यह कहकर सरदार साहब त्र्यालमारी की न्त्रोर बढ़े।
"वह क्यों!" विसाखा सिंह ने न्त्राश्चर्य में पूछा।

सरदार साहब तिनक एके फिर एक चपटा डिब्बा निकालकर लाये, "देखिए न आज कल समय बड़ा खराब है। दुनिया में किसी का कोई घरम-ईमान नहीं रहा। हम यहाँ रहते तो हैं लेकिन हमेशा डर लगा रहता है कि कहीं इधर-उधर के उचकों में से कोई घर में हुस ग्राये तो क्या हो ? वाह गुरू ! वाह गुरू !! आजकल तो लोग ख़ामखाह हाथा-पाई पर उत्तर आते हैं "

यह कहकर उन्होंने पिस्तील की फलक दिखाई। विसाखा सिंह ने देशी बनावट के पिस्तील तो देखे थे किन्तु इतना श्रच्छा पिस्तील देखने में नहीं श्राया था।

सरदार साहब कहने लगे—"यह वैबले कम्पनी का बना हुन्ना है। बहुत ग्रन्छी कम्पनी है। स्टैगडर्ड चीज है।... ग्राटोमेटिक है।... ग्राड़तीस बोर है।"

बिसाखा सिंह चुपचाप पिस्तौल की श्रोर देख रहा था।

"श्राप जानते ही हैं श्राजकल जमाना खराब है। कभी बक्त बे वक्त इधर-उधर स्त्राना जाना पड़ता है। रात को भी इसे तिकिये के नीचे रखकर सोया जाय तो काफ़ी निश्चितता का श्रनुभव होता है"

विसाखा सिंह ने गर्दन तिनक आगे बढ़ाकर पूछा—"क्यों जी, इसकी क्या क़ीमत होगी ?"

सरदिर साहब ने लापरवाही से कहा—"यह तो सस्ता ही मिल गया। ग्राजी ग्राजकल यह चीज बिलकुल नायाब हो गई है। मुमे तो चौदह सौ रुपये! में मिल गया है।"

"चौदह सौ ?...यानी एक हजार चार सौ में ?..."

यह कहते-कहते विसाखा सिंह का गला सूख गया त्रौर उसकी स्रावाज भी फसँकर रह गई।

"यह देखिये...इधर से कारत्सों की मैगजीन अन्दर दाखिल की जाती हैं। आठ कारत्स होते हैं एक मैगजीन में। इसे इधर को हटाया और उसको उस तरफ़ दगया...बस, अब तैयार है...एक के बाद एक, आठ गोलियाँ चल सकती हैं।"

विसाला सिंह ने देखने के लिए हाथ श्रागे बढ़ाथा। सरदार साहब ने पिस्तौल उसके हाथ में थमाते हुए कहा—"ध्यान रहे। मरा हुग्रा है। घोड़ा दवाने की कसर है...उँगली लिबलिबी से दूर ही रखो...'

उस लोहे के ठगडे श्रस्त्र को पकड़ते समय पहले तो विसाखा सिंह का हाथ कँपकपाँया किन्तु फिर उसने उसे मजबूती से पकड़ लिया। उसे इधर-उधर धुमाकर देखा। फिर हत्था मुडी में लेकर उंगली लिबलिबी पर रख दी।

सरदार साहब ने एकदम हाथ आगो बदाया—"आरे,चल न जाय।" विसाखा सिंह ने पिस्तीलवाला हाथ तुरन्त पीछे हटा लिया और फिर उसने घीरे-धीरे सिर ऊपर उठाया। उसके होंठों पर निराश-सी मुस्करा-हट उत्पन्न होकर घीरे-घीरे लुप्त हो गई । उसकी आँखें राख की तरह काली और नीरस दिख रही थीं।

सरदार साहब पीछे हट गये । उनके सिर पर छोटी मलमल की पीली सी पगड़ी लिपटी हुई थी। दाड़ी लटक रही थी। श्राँखों से समम्भ में न स्त्रानेवाले भाव भलक रहे थे। उन्होंने खुखे होठों पर जीम फेरते हुए कहा—"चुप क्यों हो ? क्या तुम सोच रहे हो कि यदि इस समय तुम्हारे दुश्मन तुम्हारे सामने हो तो तुम उन्हें चनों की तरह भून डालों ?"

"कौन दुरमन ?" बिसाखा सिंह ने नीरस स्वर में पूछा ग्रौर फिर वह समक्त गया कि सरदार साहब के इस संकेत का क्या मतलब है।

वह उठकर कुर्सी से अलग खड़ा हो गया। उसने मारी स्वर में कहना शुरू किया — "सुबह से शाम तक माथे से एड़ी तक पसीना बहाने वाला कोई भी व्यक्ति मेरा दुश्मन नहीं हो सकता। अब धर्म केवल दो रह गये हैं। एक दूसरों का खून चूसने और उन्हें लूटने वालों का और दूसरा अपना खून देने वालों और लुटने वालों का। इसके अलावा तीसरा कोई धर्म नहीं रहा। आप समसे...? आप न जाने कोन से जानध्यान की बातें किया करते हैं।...वह बातें मेरी समक्त में बिलकुल नहीं आतीं...शायद इसलिए कि में भूखा हूँ, मेरे बन्चे भूखे हैं, मेरी स्त्री भूखी हैं...में जीवन की छोटी से छोटी आवश्यकता की पूर्ति के लिए तरसता हूँ...।'

'फर वह एक दम चुप हो गया । उसने दोबारा चौदह सौ रुपये वाले पिस्तील का ऋोर देखा ऋौर निगाहिं सरदार जी की निगाहों से मिलाई । सरदार जी हड़बड़ाकर चारपाई से उठ बैठे । तिपाई को धका लगा

तो लैम्प नीचे गिर पड़ा। तेल वह निकला श्रौर गालीचे को श्राग लग गई।

बड़े सर्दार साहब के लिए बाहर जाने का रास्ता बिलकुल बन्द था! रास्ते में लम्बा-तड़ंगा बिसाखा सिंह खड़ा था! उसके चौड़े कन्धे, मजबूत टाँगे, मछलियों वाले भरपूर बाजू, तनी हुई गर्दन, चौड़े-चकते हाथ...ऐसा प्रतीत होता था मानो उसके शरीर में नसों के बजाय फौलाद के तार खींच दिये गये हैं...मजबूत, अभिमानी, अटल—बड़े सरदार साहब दीवार से चिपके खड़े थे। रंग पीला पड़ चुका था। साँस तेजी से चल रहां थी। पुलपुना पेट नीचे-ऊपर हो रहा था। माथे पर पसीने की बूँदें फूट पड़ी थीं। वह इतने भयभीत हो चुके थे कि सूखे कपठ से कोई आवाज तक नहीं निकल पाती थी। वे मूर्तिवत पथराई हुई आँखों से उजड़ किसान की स्रोर देख रहे थे।...

सहसा एक शोर सा मच गया । कुम्हारों के घोड़े जीर जोर से हिनहिनाने लगे । इधर से रेलगाड़ी गड़गड़ाहट का शोर मचाती पुल पर से गुजर रही थी श्रौर उधर इंजन श्रपने फ़ॅंके हुए सीने से भयानक चीखों की श्रावार्जे वायुमगड़ल में क्षिर रहा था...

गालीचे में लगी हुई आग त्य प्रति च्या बढ़ती जा रही थी...

### पहला पत्थर

तब शास्त्री और फीसी एक स्त्री को लाए जो व्यभिचार के अपराध में पकड़ी गई थी और उसको बीच में खड़ी करके कहा:— ऐ गुरु, यह स्त्री व्यभिचार करती हुई पकड़ी गई है। मूसा के कानून के अनुसार ऐसी स्त्री का, पत्थरों से मार कर अंत कर देना उचित है मा तू इस स्त्री के बारे में क्या कहता है! जब वे उससे पूछते रहे तो उसने सीधे होकर उनसे कहा:— 'तुममें से जिसने कोई पाप न किया हो पहले वह इसे पत्थर मारे?' ( यू हन्ना रसूल आयत ३,४,५,७)

्र्रेट्रिंट् रदा हाथ से रखकर बाज सिंह ने चौकन्ने तीतर की भाँति गर्दन दरवाजे से बाहर निकाली श्रीर एक नज़र शाही श्रस्तवल पर डाली... कोई खास चीज़ दिखाई नहीं पड़ी । यद्यपि उसे सन्देह यही हुन्ना था कि धुकी ही बड़े दरवाजे में खड़ी किसी को ग्रावाज़े दे रही थी उसने सोचा था कि रात के अन्धकार में घुकी के दर्शन ही हो जार्थेंगे । परन्तु अफ़-सोस कि सामने शाही अस्तबल के इघर घृकी तो क्या कोई भी आकृति दिखाई नहीं पड़ती थी। शाही अस्तज्ञल वास्तव में कोई अस्तज्ञल नहीं था। बलिक यह सर्दार वधावा सिंह की शानदार हवेली थी. जिसे बाज सिंह उर्फ बाज और उसके चेले-चाँटे शाही अस्तवल के नाम से पकारते थे। क्योंकि हवेली की सबसे बड़ी खूबी थी—उसकी विशालता। हवेली बहुत बड़े सन्दक के समान थी। छत इतनी लम्बी चौड़ी कि पूरी बारात के लिए चारपाइयाँ विछ सकती थीं। कमरे पूरे हाल कमरे थे। दरवाजे श्राठ-श्राठ फ़ीट ऊँचे थे। उन हाल कमरों में भीमकाय सर्दार वधावा सिंह फीलपाँव के कारण घायल शेर की भाँति ऐंठ-ऐंठ कर चला करते थे। हवेली के एक भाग में लेबिल प्रिपिटंग प्रेस था। इसके त्रातिरिक्त नानक फ़नींचर मार्ट भी उन्हीं की मिल्कियत थी। ्वेली से इधर फनीं-

हवेली की बाल में बाजार की स्रोर कुछ साधारण ढंग की हुकानें स्रोर उनके पिछुवाड़े मकान भी सर्दार साहब ने बनवा डाले थे। स्राखिर उनके पूर्वज जालन्धर ही में रहते श्राये थे, इसलिए इतनी-सी जायदाद का बन जाना कोई स्रसाधारण बात नहीं थी। सन् १६४७ के स्रारम्म में जब पिश्चमी पंजाब में मुसलमान माइयों ने स्रपने 'कराड़' स्रोर सिक्ख माइयों का नाका बन्द कर दिया तो शरणार्थियों की एक बड़ी संख्या पूर्वी पंजाब में श्रा गई। उनमें घुछी का पिता मुल सिंह भी था।

चर का कारखाना छालग बना हुआ था। ग्रीर बाजसिंह अपनी हाथ की सफ़ाई ग्रीर हरमजदगी की चुस्ती के कारण सब कर्मचारियों का (चाहे वे प्रेस के हों या कारखाने के ) उस्ताद समभा जाता था।

#### पहला पत्थर

वधावा सिंह ने बिलकुल बरालवाली दूकान और मकान उसे किराये पर दें डाला और वह वहाँ पंसारी की दूकान करने लगा । उसकी पत्नी को ससलमान भाइयों ने मार डाला था, लेकिन उसका अपनी तीन लड़िकयों सिंहत सही-सलामत निकल आना एक चमत्कार से कम नहीं था । उनमें सबसे बड़ी लड़िकी का नाम घुकी था।

घुकी न केवल सुन्दर थी, बिल्क बड़ी बाँकी भी थी, ग्रीर मौका पाकर सबसे पहले बाज सिंह ने उसकी 'चुम्मी' ली। चुम्बन लेने के सिलिसिले में 'खुल जा समसम' का मंत्र तो बाज ने पढ़ा लेकिन फिर बाकी लोगों का रास्ता भी साफ हो गया। इसमें ग्रमीर-गरीब का कोई भेद नहीं था। सदिर साहब के बेटे, उन बेटों के यार-दोस्त सब एकाध चुम्बन की ताक में रहते थे। यह बात नहीं थी कि उनमें से हर एक का दाँव लग ही जाता था। कुछ तो दूर ही से चटलारे लेने वालों में से थे क्योंकि चुकी लेबिल काटने वाले चरन के कथनानुसार बड़ी चलती-पुर्जी थी। पुर्छ पर हाथ नहीं रखने देती थी किसी को। ग्रीर तो ग्रीर स्वयं बाज सिंह जो बड़ा ढीठ ग्रीर साहसी ग्रादमी समक्षा जाता था, 'चुम्मी' से ग्रागे न बढ़ पाया था, तो मला दूसरों को घुकी कहाँ पास फटकने देती!

निराश होकर बाजिसंह होठां पर जवान फैरते हुए कार्ड़ाने के दरवाजे में ही खड़ा रह गया। उसके हाथ कुहनियों तक लकड़ी के बुरादे से सने थे। पैतालिस वर्ष की अवस्था में भी उसका इकहरा शरीर मज्जूत था। सूरत 'धिनावनी' होने से बाल-बाल बची थी। मूछों के बाल कड़बेरी के काँटों के समान कड़े हो गये थे। एक आँख में फूला था। होठ मोटे-मोटे और ऊँट की कोहान-सी नाक के नथुनों में से भी बाल बाहर निकल आया करते थे, जिन्हें वह चिमटी से खींच लिया करता था।

वहाँ खड़े-खड़े बाज ने देखा कि जिस हलचल का उसे अनुभव हुआ। शा यह बेमतलब नहीं थी क्योंकि हवेली के एक के बाद दूसरे चार दर-

वाजों से आगे पक्की सड़क वाले बरामदे में बिजली की रोशानी हो रही थी। लकड़ी के छोटे से फाटक में से कुछ सामान अन्दर लाया जा रहा था जिससे प्रकट था कि कोई नया मेहमान आया है। वैसे तो सर्दार साहब के यहाँ पहले ही मेहमान आया-जाया करते थे, लेकिन पश्चिमी पंजाब में दक्के होने के कारण तो मेहमानों की खूब रेल-पेल हो गई थी।

कुछ समय पहले उनके एक हिन्दू दोस्त रिटायर्ड पुलिस अफ़सर अपने बाल-बच्चों सहित आ गये। उनका आपस में बड़ा गहरा मेल-जोल था। उनके साथ एक नवयुवक भी था, जिसका नाम चमन था। उनकी गर्दन मोर के सामान थी और आँखें सुर्माई थी। वह भी घुकी को दिल चस्पी से देखा करता था और बाज के चेले-चाटों का ख्याल था कि घुकी भी उस पर मरती है! बाज के मन में ईच्या नहीं उत्पन्न हुई। वह इन चीजों से बहुत ऊँचा था। वह कहता—"अरे हमारा क्या, हमने आते ही बुक्की की चुक्मी लेकर उसे कानी कर डाला। अब चाहे दुण्डा लाट भी चुम्मी लिया करे, हमारे...से। और वह अपनी अच्छी और फूली पड़ी आँखों से सबके चेहरों का निरीक्षण करता।

दूसरे मकान में चले जाने के बाद भी चमन का ग्राना जाना जारी था। बाज ने घुकी से ग्राधिक उसकी छोटी बहन निक्की को ग्रापने ग्राकर्षण का केन्द्र बना लिया था।

दरवाजे में खबे-खबे पहले तो उसके मन में श्राया कि जाकर नये मेहमानों को देखे, शायद कोई लाडिया भी हो। लेकिन श्राज कल काम बहुत श्राया हुआ था जिसे जल्दी से जल्दी खत्म करना जरूरी था।

"हटात्रो !" उसने मन ही मन कहा—"सुबह सब कुछ सामने श्रा जायगा ।"

× × ×

श्राँख खुली तो बाज ने जलता-फुँकता सूरज श्रपने माथे पर नाचता पाया।

### पहला पत्थर

इधर यह हड़बड़ा कर उठा, उधर बड़ी सर्दारिनी भूरी मैंस की भाँति कह्-कह् भर छातियाँ थलथलाती, सीना जोरी दिखाती, त्राग जलाने के लिए बुरादा लेने को उसकी श्रोर बढ़ी।

वड़ी सर्दारिनी के शारीर का प्रत्येक ग्रङ्ग ग्रापनी चरम सीमा को पहुंच चुका था। यानी जो चीज जितनी मोटी, जितनी दीली, जितनी फैली जितनी भही हो सकती थी, हो चुकी थी। चलती तो ऐसा प्रतीत होता मानो तन्दूर ढाँकने के चापड़ को टांग लग गई हो।

ऐसी डील-डौल को सर्दारिनी भी वधावा सिंह के लिए क्राफ़ी सिद्ध नहीं हुई। अतएव उसे एक छोटी सर्दारिनी भी कहीं से उड़ा लानी पड़ी।

जब भी मौका मिलता, बड़ी सर्दारिनी श्रावश्यकता से कहीं श्रिधिक बाज के पास श्राकर खड़ी रहती क्योंकि बाज बड़ी ही मिस्कीन सूरत बना कर कई बार कह चुका था—"पर बड्डी सर्दारिनी, श्राप श्रव्हतालीस बरस की तो नहीं दिखाई देती जी.....जी, श्राप तो मुश्किल से तीस साल की दिखाई देती हैं जी ।"

इस पर बड़ी सर्दारिनी मन ही मन में चहक उठती और श्रपना चौड़ा मुँह श्रीर भी फैलाकर कहती—"हट बे पर्रा, कौन कहता है कि मैं श्राहतालीस बरस की हूँ।"

इसके बाद वह दरवाजे से कन्धा भिड़ाकर वहीं ज़मी खड़ी रहनी। एक टाँग सीधी रखतीं, दूसरी की हौले-हौले हिलाती रहती और अपने दलके हुए पपोटां तले दबी हुई पुतिलियाँ से बाज की ओर स्विमल हिन्द से देखती रहती।

बाज मन ही मन सोचता कि घुकी की कमर तो इसकी न्डलीपि से कही ग्राधिक पतली होगी।

त्राखिर जब सर्दारिनी टूटे हुए छु।ज में बुरादा भरकर लौटी तो उसका पिछ्नवाडा देखकर बाज सिंह के मुँह से एक बार फिर ग्राप ही ग्राप निकल गया—"बल्ले-जल्ले...क्यों ग्रोए बौंगिया! ग्रागर सर्दार जी बिना ज़जीर के हाथी हैं तो सर्दारिनी भी वह चङ्कान है जो जितनी जमीन से बाहर निकली होती है उससे चार गुना जमीन के नीचे गड़ी होती है!" यह कहकर उसने फुलाह की दात्न मुँह में डाली तो उसकी चुरमुराहट से उसका कुरूप चेहरा ग्रीर भी भद्दा हो गया।

बोंगे ने जवाब में कहा—"श्रबे तू सर्दार जी को क्या समभता है ? श्रगर सर्दारिनी चार गुना जमीन में गाड़ी है तो वे दसगुना जमीन के श्रन्दर हैं...।"

बाज़ सिंह ने बैठे-बैठे बौंगे को लात रसीद करते हुए कहा—''स्रोए चल, स्रोए मऊँ द्या मुतराड़ा।''

फिर उसे घुकी की कमर याद ग्राई तो बोला—"पर बौंगिया ! युक्की की कमर तो सर्दारिनी की पिन्हुली से भी कम पतली होगी ।...यार !"

''तो फिर क्या ?''

"...न, न, सोचा भला...इत्ती पतली कमर ?...बहुत पतली है कमर...कितनी मुश्किल पड़ेगी बेचारी को..."

"ऋो बई !" बौंगे ने कहा—"ऋौरत की कमर में बड़ी ताकत होती है।"

"हच्चा ।" बाज ने गाल के ऋत्दर जवान घुमाई।

"श्राहो भई...मर्द की सारी ताकत छाती में श्रीर श्रीरत की सारी ताकत कमर में होती है। श्रवे नहीं तो तड़क न जाय सकोरे की तरह।'

इसी बीच में चमन भी उधर त्रा निकला। वह हर समय चहकता रहता था। बाह्रों में से हँसी तो इस प्रकार फूटी पड़ती थी मानो रेवड़ियाँ

खा रहा हो । चलता तो लहराता श्रीर बल खाता हुआ। बदन इकहरा, रुखें ग्राभी जम रही थीं।

बौंगे ने कहा-"ले मई, कन्हैया जी तो आ गये।"

"गोपी भी आती ही होगी।" बाज ने छिदरे दाँतों का प्रदर्शन किया श्रीर मुँह से टपकती राल को पहले रोकने की चेष्टा की फिर मुँह ढीला छोड़ दिया।

ग्रेंगे ने पहले तो चमन की ग्रोर दिलफेंक ग्रंदाज से देखा श्रीर फिर एक ग्राँख चन्द करके दूसरी ग्राँख बाज की बिना फूलीवाली ग्राँख से मिलाई ग्रीर घी में डूबी हुई ग्रावाज में बोला—"यार, यह लौंडा भी गोपी से कम नमकीन नहीं है।"

बाज ने एक ग्रौर लात रसीद की, "बड़ा ठिरकी है बे तू।"

बैंगे ने भाव बताकर कहना शुरू किया—"भगत कबीर भी तो कह गये हैं..."

इस पर बाज ने एक ग्रौर लात रसीद की, "ग्रोए लुच्चा मुख्डा..." कुछ देर के बन्द छोटी सर्दारिरी भी कूल्हे मटकाती, धम-धम करती दरवाजे से निकलकर ग्राँगन में ग्रा पहुँची।

वह कहने को छोटी सर्दारिनी थी लेकिन डील-डील में यदि बड़ी बीस थी तो छोटी उन्नीस । ऐसा लगता था मानो धुनिये ने दो रजाइयों की कई धुनककर हवा में उड़ा दी हो । ऋलबत्ता, उसके नख-शिख तिनक तीखें थे। रङ्ग निखरा हुआ, चेहरा चिकना-चपड़ा, अगले दोनों दाँतां में सोने की कीलें ।

कहते हैं कि वह बड़े सर्दार जी की व्याहता नहीं थी। बाज के कथनानुसार कुछ 'जोर-चबर' मामला था। मोटापे के बावजूद छोटी सर्दारिनी की बोटी-बोटी थिरकती थी। बड़ी सर्दारिनी को परिस्थितियों ने तिनक दार्शनिक बना दिया था छोर परिस्थितियों ने ही छोटी सर्दारिनी को 'चल-चल चमेली बाग में तुम्हें मेचा...' बना दिया था। यही कारण

था कि बड़ी सर्दारिनी के सामने लड़कियों से हँसी ठिठोल करने के लोग-बाग कतराते थे ग्रौर छोटी सर्दारिनी के सामने निःसकोच छेड़-छाड़ जारी रहती थी। ग्रौर कभी-कभी उसके क्ल्हे में भी चुटकी मर ली जाती, जिस पर वह कुम:री कन्या की माँति कुलबुलातो, बा खाती ग्रौर खिल-खिलाती थी।

बड़ी सर्दारिनो केवल सर्दारिनी श्रोर छोटी सर्दारिनी मासी कहलाती थी। बहुत कम लोगों को ज्ञात था कि बड़ी सर्दारिनी के भीमकाय रारीर मी गुदगुदी होती है। मासी तो सबकी महफिलों की जान थी। बद्यपि उसकी श्रवस्था चालीस पार कर चुकी थी फिर भी सर्दार जी उस पर कड़ी निगरानी रखते थे क्योंकि मासी बैटती तो फमकड़े के साथ श्रोर चलती तो फमकड़े के साथ। उसे ऐसी महफिलों में श्रांकों लड़ाने, चुटकियाँ लेने, हाय-वाय करने के श्रवसर बड़ी श्रासानी से प्राप्त हो जाते थे। कभी कभी मासी एकाध बदतमीज पर कुछ बिगड़ भी जाती थी तािक कहने को हो जाय कि वह नौजवानों पर कड़ी निगाह रखती है। ऐसे श्रवसरों पर जब कि वे रूठ जाती थीं, सब लड़के लड़िकयाँ उन्हें मनाने लगते। उनके शरीर पर हाथ फेरे जाते, उनसे लिपट-लिपटकर खुशामदें की जातीं श्रीर श्रवस में वे मन जातीं।

ग्रतएव ग्रव जो मासी सहन में दाखिल हुई तो मानो प्रभात-समीर की भाँति ग्राईं ग्रीर ग्रपने साथ न केवल फूलों की सुगन्ध लाई बिल्क ग्रपना ग्रोट में बेला, चमेली, गुलाव इत्यादि भी ले ग्राई । धुक्की, निक्की, साँवली तथा ग्रन्य लड़िकयाँ उनके पीछे छिपी-छिपी ग्रा रही थीं । इसका उद्देश्य केवल उपस्थित जनों को ग्राश्चर्य के साथ-साथ ग्रानन्द भी प्रदान करना था। वही बात हुई कि सहसा ''ग्रोए'' के शोर से वायुमण्डल गूँज उठा ग्रीर कन्चे-कुँवारे ठहाकों के ग्राविरल संगीत से सारा सहन रसमसा गया।

इन सब से दूर सड़क वाले कमरे में किसी जटाधारी सन्यासी के

समान पाठ करते हुए बड़े सर्दार के कान भी इन श्रावजों से थरथराये, माथे की लकीरें गहरी हो गईं श्रीर उन्होंने जल्दी से बड़े-बड़े दाँतों पर दोनों होंठ फैलाकर बेन्वैनी से पहलू बदला श्रीर कहा—

''वाह गुरू नाम जहाज है जो चढ़े सो उतरे पार ।"

x x x

दातून की आखिरी मंजिल पर पहुँचकर बाज ने कनस्तर उठाया श्रीर बढ़े श्राँगन के एक कोने में पानी के नल के पास पहुंचा।

अब वातावरण शान्त था। कुछ लोग तो मासी को वेरे में लिए थे, शेप ग्रपने ध्यान में मम थे।

नल के नीचे कनस्तर रखकर बाज ने हत्थे को दो-तीन बार ही चलाया होगा कि सामने से निक्की जरूदी-जरूदी पग बढ़ाती हुई उसकी छोर खाई छाते ही बोली—" कनस्तर हटाछो तो।"

वाज की खुशी का मला क्या ठिकाना था। दात्न चकाते-चवाते उसका मुँह कक गया। ऋषाँकों के कोने शरारत के कारण सिमट गये। "नीकडिये, की गल ए ?"

"ऐ देख, गल-वल कुछ नहीं, कनस्तर हटा ऋटपट ।"

बाज ने दाँत पीसकर हाथ फेंका लेकिन निक्की जैसे पहले से तैयार थी। कप से पीछे, हटकर बदन चुरा गई। ग्रीर तिनक नखरे के साथ चिल्लाकर बोली—''हम क्या कह रहे हैं, कनस्तर हटाग्रो न।''

"ग्ररी कनस्तर से क्या बैर है...हमारी हर चीज से विदकती हो ?"
"पाना पिथेंगे।"

वाज ने कनस्तर हटा दिया और बोला—"लो जानी, पिद्यो ग्रौर जियो । जियो ग्रौर पियो ''

निक्की ने नल के पीछे हाथ रख दिया और तिनक इन्तजार के बाद इन्जन की सीटी की-सी आवाज में बोली—''ऐ है...हतथी हिलाओं।"

बाज ने कहा-- "तुम्हीं हिलास्रो न हत्थी..."

"देखों, तंग मत करो ।"

"ग्ररी नाम निका है तो इसका यह मतलब तो नहीं कि तू सचमुख निका है..."

"छोटी नहीं तो क्या बड़ी हूँ ?"

त्र्रव बाज ने बड़ी ही उदार हँसी हँसकर हत्थी हिलाना ग्रुरू कर दिया।

पानी पं.कर निक्की भागने लगी तो बाज ने तुरन्त कलाई थामकर धीरे-से भरोड़ दिया ।

"उई ! ?

"क्या है ?"

"मेरी कलाई टूट जायगी।"

"यहाँ जो दिल टूटा पड़ा है ।"

''छोड़ न, कोई देख लेगा।"

"अरी कभी हमसे भी दो बात कर लिया कर "

"कह रही हूँ न, कोई देख लेगा।"

"तो फिर आयगी हमारे पास ?"

''में नहीं जानती।''

एक और मरोड़। निक्की की वास्तव में बड़ी तकलीफ हो रही थी। जान छुड़ाने के लिए बोली—"ग्रन्छा-ग्रन्छा, त्राऊँगी।"

''पक्का वादा १''

"हाँ !"

"मार हाथ पर हाथ "

हाथ पर हाथ मारा गया।

"ग्रन्छा देख, अब तेरी कलाई छोड़े देता हूँ कि भागेगी नहीं..."

"श्रम्छा नहीं भागूँगी, छोड़ न, कोई देख लेगा।"

[ २१६ ]

''बस दो मिनट बात कर ले हमसे। ब्रौर याद रख, अगर हमें भोखा दिया तो बाँस पर लटका दूँगा।'

हाथ छूटने पर निक्की शिकायत भरे ऋदांज में नाक चढ़ाये श्रीर भाथे पर बल डाले श्रनमने दङ्ग से इक गई श्रीर ठुमककर बोली— "कह श्रव।"

"पत्थर मारती है कि बात करती है ?"

"श्रव जो समको, जल्दी से बात कर डालो । इतना वक्त नहीं।" "किसी से मिलने जाना है ?"

"कोई सुन लेगा...तुम बड़े..."

"बड़े क्या ?"

"बदमाश हो !"

"हाय रारीफ़जादी...कभी-कभी बदमाश से भी बात कर लिया कर... अन्ह्या निक्की, यह बता कि तेरी उमर कितनी है १ ?

"सोलह बरस।"

"कैसी ग्रन्छी उमर है !"

'होगी ! बस ऋब जाँय हम १७

"भला घुकी की उमर क्या है।"

"मुभासे डेढ-दो बरस बड़ी है।"

''श्रीर सॉबली...?"

''चौदह की होगी।'

"लेकिन तू तां चौदह की भी नहीं दिखती।"

"दिखती कैसे नहीं ?"

"देखने से तो कुछ पता नहीं चलता ।"

"हट।"

"त्राजकत मस्ती भाड़ रही हो। पहले तो घुको ही थी स्रव तुमने ि २१७ ]

भी पर निकाल लिए हैं...तुममें क्या, ऋब तो साँवली भी रंग दिखा रही है।"

"ऐ देख ! साँचली को कुछ मत कहियो। वह बिचारी अधी है। उससे बरी-भली बार्ते मत करना।"

"श्ररी निक्की, जवानी बोले बिना ही बात करती है। किसी के बुलाने श्रीर न बुलाने से क्या होता है...उसको श्रंधी कहती हो श्रीर श्राप मज़ा उड़ाती हो...लो, वह रही साँवली। चुपचाप दरवाजे में बैठी है।"

सहन के पहले कोने में दहलीज पर अन्धी साँवली जुपचाप बैठी थी। निक्की ने बाज के इशारे पर उधर देखा तो बाज ने पूछा— "साँवली जन्म की अन्धी है क्या ?"

<sup>44</sup>नहीं ।"

''तो कैसे हुई ग्रन्धी ?''

"देखों, बेकार-बेकार बातें करते हो। हम जा रहे है।"

"ठहर न...बता दे " बाज ने कहा जो केवला निक्षी को पास खड़ी रखने के लिए ही बेकार बातें किये जा रहा था।

"भई इम कुछ नहीं जानते । बापू कहता है, वह बचपन में ऋत्धी हो गई थी । ऋब मैं क्या जानूँ । लो हम चले ।"

"श्ररे हाँय...दरवाज़े में वह कौन खड़ा है ?"

निकी चलते-चलते रुक गई, "मैं नहीं जानती।"

इस पर बाज बाछों को खूब खींच कर हँसा—"तुभे मालूम नहीं... मुहल्ले में सभी तो तेरे यार हैं।"

"देख, इमसे बकवास मत कर....हम उसे क्या जाने १ रात ही तो ऋगया है।"

"ऋरे रातवाला... ऋच्छा-ऋच्छा, याद ऋाया। मैं जग रहा था। ऋरे मैंने उस समय ऋन्दर से सिर निकाला, मैं समभा... मैं समभा... कि निकी है। लेकिन निकी तुम..."

निको ने भुँभालाकर कहा-"लो हम चले।"

इस पर बाज ने ज़ोर से नाक साफ की श्रौर नल की हत्थी हिलाने लगा।

× × ×

लड्ड सरपट भागता हुआ आया और कारखाने के दरवाज़े के दोनों तस्तों को इस जोर और धमाके के साथ इटाया कि बाज सिंह और उसके साथियों के काम में जुटे हुये हाथ इक गये।

वे तिनक चिकत होकर उसका मुँह ताकने लगे कि ऋाखिर लड्ड् लेबिलों की गड्डियाँ बाँधनी छोड़ कर बेबक्त यहाँ कैसे ऋा टपका।

श्चन्दर पहुँचकर स्वयं लड्ड को भी इस बात का श्चनुभव हुन्ना कि इतने धमाके से श्चपने श्चागमन का श्चीचित्य सिद्ध करने के लिये जो सामग्री श्चास-पास है वह प्रयाप्त भी है या नहीं। फिर भी उसने गर्दन धुमाकर हाँफते हुये सबकी श्चोर देखा श्चौर बोला—"यार! श्चाज बहै मजे की बात देखने में श्चाई।"

मजे की बात !!...उस समय ग्यारह बजने वाले थे। कारीगर सात बजे से लगातार काम कर रहे थे इसलिए वे मजे की बात सुनने के मूड में भी थे। उघर बाज सिंह ने सुबह बासी मछे से सिर धोया था। उसके बालों से अभी सड़ी लस्सी की बिसाँघ दूर नहीं हुई थी यद्यपि बाल सूख गये थे। उसने भी मौक्ता गनीमत जाना कि मजे की बात सुनने के साथ साथ वह अपने बालों में कंषा भी कर लेगा।

अतएव उसने अपना फावड़ा सा कंघा उठाया और उसे दाढ़ी से उड़स कर बोला—"अबे लड्डू! मऊँ के मुतराइ...जब से त् पैदा हुआ है त् ने आज तक कभी कोई मजेदार वात नहीं कही। आज मेंद्रकी को भी जुकाम वाली कहावत तुम पर लागू होती है...अञ्झा बोल बेटे बिजीरे।"

वातावरण त्रानुकृत पाकर शेष कारीगर भी जाँचे खुजलाते हुए लडु के निकट त्रा गये। उनमें से मोनो (मुँडे हुये सिर वालों) ने बीड़ियाँ जलाकर दाँतों में दबा थी।

इस उत्साह से स्वागत होने पर लड़ुूकी जान में जान ग्राई । उसने विधियाकर एक बीड़ी माँगी जो तनिक नाक भी चढ़ाने के बाद दे दी गई।

यह देर उपस्थित जनों के लिए असहा होती जा रही थी। बाज ने दो लत्ती रसीद करने के अदाज़ में पाँच ऊपर उठाते हुए कहा—"ओए भेन के बैगन, जल्दी से उगल डाल साले हम तेरे बाप के नौकर तो नहीं हैं कि बैठे मह तकते रहें तेरा…"

"यार त्राज बड़े मज़े की बात हुई।" लड़ू ने इस तरह बात युक्त की मानो उबलते हुए पानी की केतली का दकना भक से उड़ जाय, "ऋगज मुबह जब बाज निक्की से...जब निक्की से..."

बाज ने भुका हुआ सिर ऊपर उठाया और बोला — "श्रोप तेरी बेन को चोर उठाकर ले जाय...यह हमारी ही बात मिली सुनाने को ?"

"नई नई जी।' लड्ड ने शुद्ध पंजाबी स्वर में हलक से धिधियाकर स्त्रावाज़ निकली—''पादशाहों! स्त्रापकी बात नहीं है...वह तो बात घुक्की की है।"

एक कारीगर ने संकेत करके साथियों से कहा—"यह चोंगा भी है। घुकी पर ठरक माड़ने वालों में यह भी शामिल है। हाँ, तो बेटा, क्या बात है घुकी की ! हम भी तो सुने।"

"श्रोए जब मासी मास्य तारा सिंह की श्रखबार में लगी हुई सूरत सबको दिखा रही थी तो घुकी श्रौर चमन की नजरें मिलों...में देख रहा था चुपके से ।"

"तू तो देखा ही करता है घुक्ती को। पर साले चमन ने जित्ती चुम्मियाँ ली हैं घुक्की की उतनी ही ठोकरें खाई हैं तूने घुक्की की।"

इस पर लाडू ने रूठने के अन्दाज में मुँह विस्रा तो किसी ने हम-दर्दी जताई— "मई ऐसा मत कहो बेचारे को। इसके लिए उन ठोकरों में चुम्मियों से ज्यादा मजा था...हाँ, तो लाडु बोल फिर क्या हुआ दि"

"बस फिर क्या था, आँखों में इशारे हुवे, होंठ हिले और फिर खुकी बड़ी मासूमी से उठकर दुमक-दुमक चल दी।"

"कहाँ को, कोठे पर ?"

"ग्रबे नहीं...उस समय तो वह अपने घर को गई लेकिन थोड़ी देर बाद चमन ने कहा कि वह जरा टट्टी जाता है और फिर सदारें (सदार जी का बड़ा लड़का) ने ख़ास अन्दाज में ताककर कहा कि मई ज़ल्दी ग्राना। तुम न जाने घरटा-घरटा भर टट्टी में बन्द क्या किया करते हो। इसपर चमन बड़े मीठे अन्दाज में मुसकराता हुआ पिछुले कमरें में चला गया, जहाँ से छुत को सीढ़ियाँ जाती हैं।"

एक दो ने जँभाइयाँ लेकर कहा- ''त्राबे लड्डू के धिस्से ! ये सब पुरानी वार्ते हैं, रोज़ का किस्सा..."

"ग्रवे सुन तो"...लड्डू ने डाँटा, "सबकी आँख बचाकर मैं भी चमन के पीछे हो लिया। और भई जब ऊपर पहुँचा तो देखा कि सीढ़ियों का दरवाजा बन्द है...बस मई यह देखकर मेरी फूँक निकल गई।"

बाज हँसा, "साले तेरी फूंक तो खूब अच्छी तरह निकलनी चाहिए। फूलकर गुब्बारा हो रहा है।"

लड्डू ने सुनी-श्रनसुनी करते हुए बयान जारी रखा— "पहले तो मैं समभा कि वे दरवाजे के पास ही खड़े होंगे लेकिन कोई श्रावाज सुनाई न देती थी। दरार में से भाँका तो छत पर भी कोई सूरत नज़र नहीं श्राती थी। फिर मैंने सोचा कि वे ज़रूर बरसाती के श्रन्दर बैठे होंगे।"

''बड़ी जसूसी दिखाई तुमने ।''

इस पर लड़ू ने बोड़ो का गहरा करा लिया, "बस मई फिर ती मैंने

नीचे ऊपर से हाथ डाल चटज़नी सरका दी। यह देखो, मेरी बाँह पर खून जम गया है..."

"आगे बोल।"

''मैं छत पर से होता हुआ बरसाती की तरफ बढ़ा और ईंटों की जाली में से भाँककर देखा तो...तो वे दोनों चारपाई पर बैठे थे।"

एक नया कारीगर बोला-"लेकिन घुकी वहाँ कैसे ऋाई ?"

लड्डू को उसकी मूर्खता पर बड़ा तरस ऋाया, "यार तुम भी बस... छुत से छुत मिली हुई है। घुक्की की छुत जरा नीची है। उधर से इधर ऋाना कीन मुश्किल है। ऋरे यार लोग तो पहले ही ताड़ गये थे कि यह ऋपने घर से होकर इस छुत पर चली ऋायगी।"

"भई तू बड़ा ग्राकिलमन्द है...ग्रब ग्रागे चल।"

"बस आगे क्या पूछते हो । बहें मजे में थे दोनों । बुक्की का चेहरा तो आग-भभूका हो रहा था । इतनी प्यारी लग रही थी कि बस ...।"

"वाह बेटा वाह !" बाज बोला—" "ग्राव तो बात पक्की हो गई कि मामला यहीं तक नहीं है...ग्राच्छा फिर !"

"बड़े प्रेम को बातें हो रही थीं। चमन ने धुक्की के बाल उसके मुँह के हटाकर उसे खूब प्यार किया।"

"ऋबे यह तो हुआ ही होगा। यह तो बता कि बातें क्या हो रही थीं उनमें ? जरा यह तो मालूम हो कि क्या इरादे उनके ?"

"फिर एक दम ही घुक्की ने बढ़े प्यार से उसके गले में बाँहें डाल दीं श्रीर उसकी नजरों से नजरें मिलाकर बोली—" 'चमन, तुम सचमुच मुक्ते प्यार करते हो ११

"चमन ने मोर की तरह गर्दन हिलाई श्रौर जवाब दिया— 'सचमुच ।'

" 'मुक्ते यक्तीन नहीं आता।'

" 'जालिम !'

"'जालिम तुम हो।'

" 'त्रारी हम तो जान निसार करते हैं। त्राब तुमे कैसे विश्वास दिलाऊँ ?'

"घुक्की ने सिर भुका लिया और गहरी सोच में हूव गई। इस पर चमन बोला—'कहो तो आसमान के तारे तोड़ लाऊँ। कहो तो अपनी छाती चीर कर...'

"घुक्की ने उसके होंठों पर उँगली रख दी श्रौर फिर ऐसे बोली मानां सपने में बोल रही हो—'तुम तारे मत तोड़ो, श्रपनी छाती मत चीरो...मुफे श्रपनी दासी बना लो।'

" 'दासी ? दासी ? ऋरे तुम तो रानी हो मेरी ।'

"घुक्की कुछ देर चुप रही फिर बोली—'तुम मेरा मतलब नहीं समभे, मुभसे शादी कर लो।'

"उस समय चमन ने एकदम मुँह पीछे, हय लिया। जैसे घुक्की खूबसूरत लड़की नहीं नागिन है और उसकी तरफ बड़ी अजीब नजरों से देखने लगा। लेकिन उस समय घुक्की का सिर भुका हुआ था। साली छपने ख्याल में मगन बोली—'मैं गरीब की लड़की हूँ। हर कोई मुक्के भूखी नजरों से देखता है। हर कोई मुक्के खा जाना चाहता है। मुक्के एक कदम चलना मुश्किल है... फिर भी मैं अपनी इज्जत बहुत बचाती रही। लेकिन तुम हो जिसके आगे मेरा कोई बस नहीं चला।'

"यह कहते-कहते उसकी श्राँखों से टप्-टप् श्राँस गिरने लगे। इसपर चमन ने उसका हाथ पकड़ लिया। बोला—'श्रारी वाह, रोती काहे को हो। बेफिकर रहो। तुम्हें कुछ नहीं होगा। मुहब्बत में ऐसी बातें दिन रात होती रहती हैं। तुम बड़ी वहमी हो।'

" 'लेकिन मैं तुम्हारी हां चुकी हूँ । सदा के लिए तुम्हारी...'

"यह कहकर उसने अपने पीते रंग के कुर्ते से अर्थेलें पोछीं। लेकिन अर्थेस् नहीं थमते थे। हिचकियाँ भरती हुई बोली—'चमन, मैं उमर भर

तुम्हारे पाँव घो-घोकर पियूँगी। तुम्हारी नौकरानी बनकर रहूँगी। तुम्हारी श्राँख के इशारे पर नाचूँगी। बाबा को मेरी बड़ी फिकर लगी है। माँ मर गई है। मैं सबसे बड़ी हूँ। मुक्ते छोटी बहनों का भी ख्याल करना है। मैं तुम्हारे हाथ जोड़ती हूँ। मुक्ते छोड़ना मत।

"चमन बोला—'हाय-हाय ! तुम्हें छोड़ता कौन हैं ? पगली हुई हो ?

"इसपर घुक्की ने नजर उठाकर चमन की ग्रोर देखा भ्रौर फिर सिर भुकाकर बोली—'नहीं, वादा करो कि मुक्के शादी कर लोगे...में बड़ी मुँहफट हूँ। लेकिन मेरा कोई नहीं है। बेशरमी माफ करो। मुक्के श्रपनी बना लो, मैं खूब पढ़-लिख लूँगी। जैसा तुम कहोगे वैसे ही कहँगी...कहो, मुक्के ब्याह करोगे १

"यह कहकर उसने चमन की श्रोर देखने के लिए सिर ऊपर उठाया लेकिन चमन ने जल्दी से उसका सिर दबाकर उसे छाती से लगा लिया। शायद वह नहीं चाहता था कि घुकी उसकी श्राँखों से उसके दिल का हाल जान ले। किर बनावटी श्रावाज में कहने लगा—'हाँ-हाँ, मैं तुम से ही ब्याह रचाऊँगा। श्ररी तुम्मों किस बात की कमी है...तुम कितनी सुन्दर हो! हजारों में, बल्कि लाखों में एक हो...लो श्रव में चला। तुम भी घर को जाश्रो, नहीं तो नीचे वाले सब शक करेंगे..."

"यह सुनकर मैं बगदुट भागा।"

× × ×

दोपहर के समय गर्मा इतनी भीपण हो उठती थी कि क्या कारखाने के कारीगर श्रौर क्या प्रेस के, सभी काम छोड़कर श्रलग बैठ जाते। दिन का यह भाग सबसे प्यारा होता था। हवेली बहुत बड़ी थी। छोटे बब कमरे श्रौर उनमें ऊँची ऊँची श्रलमारियों, पलंग, संदूक—मानो श्रौंल मिचौनी खेलने की सारी सामग्री एकत्रित थी।

बाजिसिंह तंदूर से रोटी खाकर वापस आया तो सीधा श्रान्दर वाले

बड़े कमरों की श्रोर चला गया, जहाँ बड़े सरदार जी के श्रातिरिक्त सभी लोग मौजूद होते थे। श्राज उसे रोटी खाने का मज़ा नहीं श्राया। दाल में कंकड़ श्रीर राशन के श्राटे में रेत। तन्दूर वालों की ऐसी तैसी करके भूखा ही लौट श्राया था।

कमरे में प्रवेश करते ही उसकी निगाह सबसे पहले बड़ी सरदारिनी पर पड़ी जो सब से अलग बैठी थी। आश्चर्य ! आज वे पान चवा रही थीं। छोटी सरदारिनी तो खौर, रोज मोजन के पश्चात एक बीड़ा पान कल्ले में दवा लिया करती थी न जाने कहाँ से लत लगी थी उसे। लेकिन बड़ी सरदारिनी को पान खाते हुए उसने पहली बार ही देखा था। उसके होंठ और बार्छे लालों से सनी हुई थीं। नज़रें चार होते ही बड़ी सरदारिनी ऐसे न्यापक रूप से मुस्कराई कि एक बार तो बाज सिंह बिदक गया लेकिन फिर वहीं फर्श पर बैठ गया और अपने टखनों तथा पिंडु लियों पर से लकड़ी का बुरादा काड़ने लगा।

बड़ी सरदारिनी ने चौकी ढकेलते हुए कहा—"हाय हाय, जमीन पर काहे बैठते हो । चौकी पर बैठो ।"

"नहीं बड़ी सरदारिनी! ईटें ठंडी लग रही हैं। मजा आ रहा है। आच्छा करो हो जो दोपहर से पहले पानी फिकवा दो हो फर्श पर...सच है बड़ी सरदारिनी, बड़ी दूर की स्किती है तुमको।"

यह मुनकर बड़ी सरदारिनी ने चाहा कि मारे खुशो के फूली न समाये । लेकिन छौर फूलने की गुंजायश ही कहाँ थी छातएव उसने पहते तो विनम्रता से सिर नीचे मुकाया छौर फिर तिनक मस्ताने ढंग से चेहरा ऊपर उठाया ! . बेचारी एक मुद्दत से छोटी सरदारिनी के घर में छा जाने के कारण दुख मोग रही थी । कभी कभी उसकी पीड़ा उसकी छाँखों में छा बैठती थी।

बाज को कोई बात स्फ नहीं रही थी अतएव उसने पगड़ी के अन्दर दो उंगलियाँ डाल कर सिर खुजाना शुरू कर दिया ।

सरदारिनी ने स्नेह पर्वक कहा -- "रोटी खा कर श्रा रहे हो ?"
"जहर मार करके त्रा रहे हैं।"

बाज को दुःखी देख बड़ी सरदारिनी बहें ऋतिशयोक्ति पूरा दंग से परेशान हुई — ''ऋाखिर मा गरा क्या है ?''

बाज ने माजरा सुनाया और तान इस पर तोड़ी, "रोटी १ हाय, रोटी तो, बड़ी सरदारिनी, तुम्हारी होती है। मक्खन ससुरा रोटी की नस नस में रच जाता है। कौर साला मुँह में स्कता हीं नहीं, घुलकर तुरन्त अन्दर।"

बड़ी सरदारिनी को श्रापनी प्रशंसा में कहे गये ये वाक्य हंजम करने के लिये काफ़ी प्राणायाम करना पड़ा। जब दम में दम श्राया तो खास सुर ताल में बोली—"कभी हमारे यहाँ खाते भी हो १०

"खिलाती भी हो ?" बाज ने उसी सुर श्रौर ताल में जवाब दिया। इस पर ताव में श्राकर जो बड़ी सरदारिनी उठी तो बाज को ऐसा

लगा जैसे जमीन से स्त्रासमान तक काली घटा छा गई हो ।

रोटी खाते-खाते बाज ने पूछा—"क्यों जी, श्राज सरदारजी दफ्तर में किससे बातें कर रहे हैं ?"

सरदारिनी ने भाजरदार पंखा भजते हुए जवाब दिया—''मालूम नहीं।''

चर में बिजली का एक ही टेबुल फैन था। जिधर सरदार जी जाते पंखा उनका पीछा करता।

बाज ने नमक हलाल कर डालने के ख्याल से कहा—''क्यां मजाक करती हो बड़ी सरदारिनी। मला यह कमी हो सकता है कि उधर बात-चीत हो रही हो और तुम्हें पता तक न हो।''

सरदारिनी ने बड़े बहुये की भाँति मुँह खोला लेकिन फिर सहसा मुँह छोटा करके मेद पूर्ण स्वर में बोली—"जासूस छोड़ रक्खे हैं। श्रभी मालूम हो जायगा सब कुछ।"

इसी बीच छोटी सरदारिनी बगल वाले कमरे में से उनके कमरे में श्राई ! क्तीसी निकली हुई थीं । सुनहरी कीलें चमक रही थीं । उस समय भी लड़िकयाँ उनके साथ थीं—जब लड़िकयाँ साथ थीं तो स्वाभाविक ही था कि लड़के भी साथ होते।

बड़ी सरदारिनी छोटी सरदारिनी के लच्छन पसन्द नहीं करती थी अतएव उसने चुपके से नाक भौं चदाकर हाथ को तनिक मंदगति से घुमा श्रीर भटका कर नापसन्दी का प्रदर्शन किया लेकिन इस सफाई से कि बाज ही देख सके उसे!

बाज पेट भरकर रोटी खा चुका था । श्रब बड़ी सरदारिनी का उसकी हिंद में विशेष महत्व न रह गया था श्रतएव उसने श्रत्यधिक निर्भाकता से काम लेते हुए श्रपने बेडील दाँतों का प्रदर्शन किया और तर माल देख कर उसने मन ही मन नारा लगाया—'जो बोले सो निहाल.....'

छोटी सरदारिनी कमिसन परियों ग्रौर जिन्नातों सिहत धूम-धड़क्के से ग्रागे बढ़ी। बगल में उनका हाथ मुलाती घुक्की चहकती-फुदकती चली ग्रा रही थी। बुक्की केवल बाँकी हो नहीं थी, बल्कि उसे ग्रापने बाँकेपन का ग्रानुभव भी था। प्रत्येक हिंद, जो उसके चेहरे या शारीर पर पड़ती थी, उसकी प्रतिक्रिया उसकी भौहों के कम्पन, होंठों की फड़कन या शारीर की किसी न किसी हरकत से प्रकट हो जाती थी।

इसके बाद निक्की... घुक्की नोक पत्तक श्रौर नख-शिख की दृष्टि से गज़ब थी तो निक्की शरीर के श्रांगों की सुडौल बनावट, तनाव श्रौर तड़प की दृष्टि से कयामत थी। उसकी न मरें बड़ी बहन की भाँति दूर तक नहीं पहुँचती थीं। बस उस व्यक्ति की भाँति दीख पड़ती थीं जो वीराने में मटकता-मटकता श्रकस्मात मेले में श्रा निकले.....

निक्की की चुँदरी का आँचल अन्धी साँवली के हाथ में था। उसका चेहरा ऊपर को उठा रहता। वह दोनों बड़ी बहनों से कम गोरी थी। नख-शिख साधारण किन्तु चेहरा सब मिला-जुलाकर आकर्षक या। उसे

इस बात का बिलकुल अनुभव नहीं था कि मुरलीवाला उसके शरीर में आयु के साथ क्या-क्या परिवर्तन कर रहा था क्योंकि इस परिवर्तन का अनुभव तो लड़की को आँखें चार होने पर ही हो सकता है। वहाँ एक भी देखने वाली आँख नहीं थी, इस लिए आँखें चार होने का प्रश्न ही नहीं उठता था।

"बल्ते-बल्ते ?" बाज को श्रापने कान में द्यावाज सुनाई दी। देखा कि बींगा भी उसे कारखाने में न पाकर वहाँ श्रा पहुँचा था। वह राल टफ्काते हुए बोला—"यार, घुक्की की कमर तो देखी, कैसी पतली, कैसी खचकदार है! श्राँख नहीं टिकती इस पर.....

"ग्रोए, मैं जुड़ी पंजाब दी। मेरा रेशम बरगा लक...."

सहसा बाज ने बोंगे को कुहनी का टहोका देते हुए कहा—''देख स्रोए जलकुकड़ !"

जलकुकड़ प्रोस में लेबिल छापा करता था। उसकी आयु चौंतीस वर्ष के लगभग होगी। दो बच्चे भी थे। वह भी सींग कटाकर बछड़ों में आप मिला था। यह भेद बाज की समभ्र में श्रव तक न आया था किन्तु आज उसने देखा कि कैसे जलकुकड़ ने जानबूभकर निक्की को धक्का दिया और कैसे निक्की ने माश्रकाना श्रदा के साथ उसकी हरकत की बर्दाश्त किया। लेकिन आखिर जलकुकड़ में रखा ही क्या था? उसकी हास्यास्पद। सूरत के कारण ही तो यारों ने उसका नाम जलकुकड़ रख छोड़ा था...लेकिन श्रीरत के दिल को कीन रोक सकता है।

लोगों ने कहा—"जार जे तो दूर मार तोप निकला, कैसा मिस्कीन बनता था ?"

श्राजकत जलकुकड़ श्रधिकतर रंगीन बुशशर्ट पहने रहता था, जिसके कपड़े पर चीनी ढंग के श्रजगर नाचते दिखाई देते थे।

सर्दारजी के लड़के भी "चल कन्ह्री तारा सुलतान बेग मारा" कहते

हुए साथ-साथ चले आ रहे थे। और उनके पीछे वह नवयुवक था जो वहाँ कोई परीक्षा देने के लिए नया नया आया था। उसे देखते ही बाज ने पूछा—"ओए इह कौन है ?''

"ग्रोए जे भी श्रपना मुख्डा है। नवाँ दाखिला हो याये हरक दे मदरसे दे बिच।"

"हच्छा, हच्छा...इह ताँ परसों ही त्र्याया है।"

"ग्राहो जी लौंडों की बात छोड़ो ग्रब नारियों की बात करो।"

परियां के इस काफिले ने जमीन पर डेरे डाल दिये और उनकी चहक-फुदक में सरदारिनी अपने आपको अकेला महसूस करने लगी!

"श्रोए परजी चमन कहाँ है ?"

एक छोटा लड़का जो सम्भवतः बड़ी सर्दारिनी का जासूस था, बैठक से उसी समय वहाँ ऋाया था, बोला—"चमन उधर बैठक में बैठा है।"

बाज को श्राश्चर्य हो रहा था, यह क्या १ गुल इघर श्रीर बुलबुल उधर १ फिर इसी भावना के श्रान्तर्गत उसने घुक्की की श्रोर देखा। वह नजरों ही नजरों में सब कुछ समक गई। उसकी भवें कॉपी, पलकें कपकी कमर लचकी श्रीर फिर वह निश्चल हो गई। बाज ने दिलफेंक तेवर बनाकर श्रांखां ही श्रांखों में समकाया कि लो हम जॉच करते हैं श्रीर हुस्न के चीर को हुस्न के हुजूर में हाज़िर करते हैं। श्रतएव उसने उच्च-स्वर में पूछा—"लेकिन भई वहाँ क्या कर रहा है!"

"उधर एक जरनैल साह्य बैठे हैं।"

बाज ने सोचा, कोई फ़ौजी अपसर होगा। ये लौंडे हर एक अपसर को एकदम जरनैल बना देते हैं। फिर बोला—"पर बाई, चमन का यहाँ क्या काम ?"

"चमन के बाबू जी भी बैठे हैं।" इससे मतलब यह था कि चमन को पिता के कारण विवश हो वहाँ [ २२६ ]

बैठना पड़ रहा है, "श्रन्छा तो बन्चू चमन को उन्होंने वहाँ किस लिए फाँस रखा है !" बाज ने जिरह की ।

"वह भीज में भरती हो रहा है।" लड़के ने टैं-से जवाब दिया।
श्रव बाज ने एक नज़र बड़ी सरदारिनी पर डालना जरूरी समभा
श्रीर फिर मुँह टेबा करके उसके एक कोने में से साँप की फुफकार की सी
श्रावाज निकालते हुए वह बोला—"ए जी श्रापका जासूस तो बड़ा
होशियार निकला।"

श्रपनी प्रशंसा सुन बड़ी सरदारिनी हाथी की भाँति भूमने लगीं श्रौर देर तक भूमती रहीं।

जन जासूम लींडे को अनुभव हुआ कि वह ऐसी बातें कह रहा है जिनसे सबको बड़ी दिलचस्पी महसूस हो रही है तो उसने अधिक जान-कारी पहुँचाने के लिए कहा-- "चमन माहान जा रहा है।"

"श्रोए, माहाव कौन जगह का नाम है ? वहाँ तेरी माँव (माँ) रहती है क्या ?" बौंगे ने बहुत धीरे-से कहा जिसमें कि केवल बाज सुन सके। सर्दार ने कहा—"श्रोए, माहाव नहीं महू कहो महू।"

"क्या चमन महू जा रहा है !" सर्दार जी के छोटे लड़के ने सवाल किया और साथ ही पहले तो बनावटी श्राश्चर्य के मारे दोनों टाँगे खूब फैलाकर और पाँव फर्श पर जमाकर बिल्कुल निश्चल खड़ा रहा और फिर सिमट कर जो कृदा तो कमरे से बाहर और बैठक के श्रन्दर!

"श्रोप चमन, हमको छोड़कर महू जा रहा है श्रीर हमको ख़बर तक नहीं दी १"

'हम' शब्द से उसका संकेत घुक्की की श्रोर था। यह शब्द उसने खड़े होकर कहे। उस समय उसकी मैली कच्छा का श्रीर भी श्रिधिक मैला इजारबन्द उसके दोनों घुटनों के बीच मूल रहा था। श्रीर फिर उसने मेदपूर्ण ढंग से कनखियों से घुक्की की श्रीर देखा। मला घुक्की को उसकी बातका मतलब पा लेने में क्या कठिनाई हो सकती थी। उसके

मन में ऐसी गुदगुदी उत्पन्न हुई कि वह उठकर नाचती, गाती छोटी सरदारिनी को एक बगल से उठकर उसकी दूसरी बगल में जा बैठी श्रीर श्रत्यधिक सुरीली श्रावाज़ में बोली—"हमें पहले ही से मालूम था।"

घुक्की ने यह बात ऋषिक जोर से नहीं कही लेकिन उसका स्वर इतना ऊँचा ऋवश्य था कि बाज उसे ऋासानी से सुन सके।

इस पर बाज ठएडा होकर ठएडे फर्श पर इस प्रकार बैठ गया जैसे गुब्बारे में से यकायक सारी हवा निकल जाय । श्रौर फिर उसने भवें हिलाकर श्रौर मूँछुँ फड़काकर बौंगे के कान में कहा—-"जार! सचमुच यह लौंड़िया बड़ी चलती-पुर्जी है।"



#### इतवार

स्राज सर्दार जी के दोनां लड़के दस बजे का ऋँगरेजी शो देखने जा रहे थे। बड़े जोर-शोर के साथ तैयारियाँ हो रही थीं। न जाने कब की पुरानी नेकटाइयाँ खोज निकाली गईं। एक मच्छरदानी लगाने के बाँस के सिरे पर बँधी थी और दूसरी बड़े ट्रंक के पीछे, से गैंदे की माँति गोल-मोल की हुई निकली।

क्योंकि उस समय छोटी सरदारिन स्नान कर रही थीं। इसलिए उनकी चेलियाँ बेजान-सी होकर इधर-उधर मटक रही थीं। निक्की बड़ी सदिरिनी के साथ रसोईघर के अन्दर बैठी थी। साँवली परे नल के पास एड़ियों को रगड़-रगड़कर थी रही थी। हत्थी हिलाने वाला नया नवयुवक या। घुक्की हवेली के बड़े दरवाजे के आगे बनी हुई कुछ पक्की सीदियों के बीच-वाले भाग पर बैठी थी। उसकी दोनों कुहनियाँ उसके घुटनों पर टिकी थीं और दोनों इथेलियों के बीच उसका चेहरा फँसा हुआ था।

उसकी ब्रॉलें उदास थीं। चमन को गये पचीस दिन हो चुके थे किन्तु घुक्की को उसकी एक चिङ्ठी तक नहीं मिली थी, यद्यपि दूसरों के नाम उसकी चिट्ठियाँ ब्रा चुकी थीं...

इतवार के कारण छुट्टी थी। इसलिए कारीगरों की चहल-पहला नहीं थी। हाँ, बाज श्रीर बींगा मौजूद थे क्योंकि वे स्थायी रूप से वहीं पर रहते थे।

दीवारों की सफेदी करने के काम में आने वाली पांच फीट ऊपर स्टूल पर पाँव के बल बैठा बाज दातून चबा रहा था। स्टूल के साथ सट कर ज़मीन पर बैठा हुआ बौंगा आइने में देख-देखकर चिमटी से नाक के बाल नोच-नोच कर फेंक रहा था।

दूर बैठक की स्रोर से एक बड़े शंख के से स्वर में सर्दार जी का पाठ सुनाई पड़ रहा था। सर्दार जी का पाठ स्रोर बाज की दात्न दोनों मशाहूर घीजें थीं। उधर सर्दार जी लगातार कई-कई घन्टे पाठ करने में जुटे रहते इधर इतवार को फुर्सत पाकर बाज सुबह से ही मुँह में यह लम्बी दात्न उड़स कर बैठ जाता। पहले उसे चवाता फिर दाँतों पर घिसता। यहाँ तक कि दात्न खतम हो जाती।

बौंगे ने ऋपने काम से फ़र्सत पाकर इतमीनान से टाँगे जमीन पर फैला दीं।

ऊँचाई पर बैठे वाज ने श्रपने तेजी से हिलते हुए सुँह की स्तृण भर के लिए रोका श्रीर बींगे को सम्बोधित कर दबे स्वर में फुफकार कर बोला — "बौंगिया! श्राज घुकी उदास है। शायद छोटी सरदारिनी का इन्तजार हो रहा है।"

इस तरह बोलने से बाज की मूँ छों से फँसी हुई थ्क की बूँदें उड़कर बोंगे के चेचक के मारे चेहरे पर पड़ी और उसने भड़ककर स्टूल की जरा सा हिला दिया और छोटी-छोटी आँसे लाल चिनगारी बना कर कहा—

"श्रोए, ग्रामी हिला दूँ तो राजसिहांसन से सिर के बल नीचे गिर पड़ें। हम पर थूकता है।"

स्ट्रल के तिनक हिल जाने पर बाज ने गिद्ध की भाँति बाजू फड़-फड़ाये ग्रार उसकी बात की ग्रोर ध्यान दिये विना बोला—"क्यों, यही बात है न! मलकाँ (छोटी सरदारिनी) का इंतजार हो रहा है ?"

"ग्रोए नई ! बींगे ने नथुने फुलाकर विद्वानों के से श्रन्दाज में जवाब दिया—"हीर को राँके का, ससी को पुननू का, गोपी को कन्हैया का इन्तजार है। समके ?"

"समभा !" बाज से भला क्या बात छिपी थी। उसने बौंगे की केवल गरमाने श्रीर फिर उससे श्रानंदित होने के लिये अनजानपन प्रकट किया।

श्रव बींगे ने इधर-उधर देखा, किसी को निकट न पाकर हल्का-सा नारा लगाया—"हाय !"

उसका संकेत घुक्की की खोर था।

"क्या है ?' बाज ने पूछा श्रीर समक्त गया कि बौंगे की मस्ती सूक्त रही है।

"दर्दं !" बौंगे ने जवाब दिया ।

"따霞" 1"

"जे तो मैं मर जाऊँ ताँ भी न दस्ताँ !" बींगे ने खास जनानी स्त्रावाज में जवाब दिया श्रीर फिर तिनक मौन के बाद गाने लगा —

''छोड़ गये वालम...।

श्रकेली मुमकूँ छोड़ गये।"

वातावरण बींने की टरटराती स्रावाज से गूँज उठा ।

श्रव दोनों छोटे सर्दार तैयार होकर अन्दर से निकले तो इस शान से कि पहले बढ़े भाई ने अन्दर से छलाँग लगाई तो घुक्की के ऊपर से कूदकर आँगन में। वह कुछ समभने भी न पाई थी कि दूसरा भाई

साफ़ कूद गया ऊपर से । घुकी हड़बड़ा कर उठ खड़ी हुई । उसका चेहरा लाल भभूका हो गया । चमककर बोली—"हमें नई अञ्छा लगता ऐसा मज़क । अगर हमारी गर्दन टूट जाती तो १००

इस पर छोटे भाई ने पंजाब के प्रसिद्ध लोकनाच भंगड़ा के श्रन्दाज में कुछ चकफेरियाँ लीं ख्रीर गले की गहराइयों में से श्रत्याधिक घिघियाई हुई ख्रावाज़ निकालकर गीत का बोल दोहराया —

''छोड़ गये बालम.....!''

इधर बौंगा भी बस तैयार ही बैठा था। तुरन्त छाती पर हाथ मार कर रोने के से स्वर में गा उठा— "श्रकेली मुफ्को छोड़ गये!"

इस पर बाज ने जो ठहाके लगाये तो वह सीधे आकाश के उस पार पहुँचे। बड़ी सरदारिनी निक्की सहित रसोईचर के दरवाजेमें आ खड़ी हुई। छोटी सरदारिनी भी स्नान से निवृत्त हो निकल आईं। साँबली समभी अवश्य कोई मजेदार बात हो रही है। अत्तर्यव वह नल के पास बैठी जोर-जोर से हँसने लगी।

चलते-चलते छोटा सर्दार वही बोल दोहराता गया और बौंगा भी गर्मी खाकर छाती पर हाथ मार-मारकर जवाब देता गया।

श्राँगन में श्रिधिक शोर सुनकर बड़े सर्दार जी मीतर ही से कड़के तो छोटे सर्दार बगद्धट भागे । बाज स्टूल-से कृदा श्रीर बैंगे सहित कारखाने में जा घुसा चड़ी सरदारिनी श्रीर निक्की ने मीतर से रसोईघर का दर-बाजा भेड़दिया । घुक्की उछली श्रीर छोटी सरदारनी ने उसे बगल में दाबा श्रीर एक बार फिर स्नानगृह के श्रान्दर ।

× × ×

देवीदास के मकान ग्रौर दूकान के ग्रागे कागाज की रंग त्रिरंगी क्रिपिडयाँ लहरा रही थीं। बाजे बज रहे थे। घर के श्रन्दर किसी श्रुँधेरे

कोने में कुछ स्त्रियाँ बचलों की 'कें-कें' की-सी आवाज़ में टूटे फूटे गीत गा रही थीं।

घुकी की शादी हो रही थी! चमन के साथ ! नहीं!

बारात श्राने वाली थी। मुहल्ले के लौंडे दौड़ दौड़ कर दूल्हा को देखने जाते किन्तु बड़े-बूढ़ों की ज़बानी यह मुनकर कि श्रामी बारात नहीं श्राई, निराश हो जाते श्रीर चुपचाप चूड़े रेबड़ियाँ चबाने लगते।

बैठक में बढ़े सर्दार जी ग्रौर उनके कुछ प्रतिष्ठत तथा बुजुर्ग साथी काठ के उल्लुग्रों की भाँति निश्चेष्ट बैठे थे। कभी एकाध बात हो जाती तो सब स्वीकारात्मक ढंग से सिर हिलाकर संतोष प्रकट करते।

प्रेस के कारीगर सड़क की स्रोर बरामदे में खड़े तमाशा देख रहे थे उधर कारखाने के कारीगर बगलें बजाते छत पर चढ़ गये। वहाँ से देवी-दास की नीची छत साफ़ दिखाई देती थी। इसकी छत पर दस-पन्द्रह चारपाइयाँ बिछी थीं, क्योंकि ऋधिक बारातियों के स्नाने की स्नाशा नहीं थीं। कुछ बच्चे स्नौर स्त्रियाँ निर्जीव रंगों के कपड़े पहने सुस्त-सुस्त कदम उठाती इधर-उधर के काम करती फिरती थीं। पास बाले पीपल के पेड़ की काली छाया छत पर फैल रही थी... स्नौर बाजे स्रजाग कराह रहे थे।

छत वाले कारीगरों में से एक सिर हिलाकर बोला—"च्-च्! ऋौरत की बेवफ़ाई के बारे में सुना था लेकिन ऋाज ऋपनी ऋाँखों से देख ली।"

बौगे ने नथुने फ़लाकर उसकी श्रोर देखा श्रौर फिर कुछ कहने के लिए मुँह फ़लाया...श्रौर फिर नथुने श्रौर मुँह दोनों सिकोड़कर दूसरी श्रोर सिर धुमा लिया।

कारीगर को स्त्राश्चर्य हुन्ना । उसने बाज को कन्धा मार-कर कहा---"कहो उस्ताद ! स्त्राज बौंगे को क्या हो गया है ?"

ि २३५ ]

बाज ने पहले फूली वाली आँख दिखाकर बेरुखी बरती किन्तु फिर अच्छी वाली आँख से अंगारे बरसाकर कहा—"औरत की बेवफाई नहीं, मर्द की बेवफाई कहो।"

"यानो १"

"जानी जे कि चमन को यहाँ से गये तीन महीने हो चुके, उसने एक लाइन तक नहीं लिखी घुक्की को...।"

"ग्रौर घुक्की ?"

उसने अपने हाथ से टूटी-फूटी हिन्दी में उसे कई चिडियाँ लिखी पर एक का भी जवाब नहीं आया।"

श्रव बौंगे ने बोलना शुरू कर दिया—"चमन ने श्रपने जार-दोस्तों को लिखा कि किसी न किसी तरह घुकी को चिट्ठी लिखने से रोका जाय। हर चिट्ठी में उसकी इस बात से कि यदि मेरे पर होते तो मैं उड़ कर श्रापके पास श्रा जाती, तंग श्रा गया हूँ।"

"उधर कहीं चमन के पिता जी वहाँ जा निकले।" याज ने बात आगो बढ़ाई, "उनके सामने कहीं कोई खत आया तो उन्होंने पढ़ लिया। पहले बेटे के कान मरोड़े और फिर यहाँ आकर बड़े सदिर जी को बताया। सदीर जी ने देवीदास को बुलाया और कहा—'ओए, लींडिया की शादी कर दे शटपट, पन्द्रह दिन के अन्दर; नहीं तो दूकान खाली कर दे और उठा अपना बोरिया-बिस्तरा मकान से भी। ऐसे मुश्किल समय में भला देवीदास कहाँ जाता हिथा जोड़कर कहने लगा—'पर जी, गरीब की लड़की की शादी भला इत्ती जल्दी कहाँ हो सकती है ?' चमन के बाप ने कहा—'आखिर तुम्हारी लौंडिया को ऐसे खत लिखने की हिम्मत कैसे हुई ! जमीन की धूल सिर को चढ़े !' बड़े सदिर जी ने डाँट पिलाई—'अब मैंने कह दिया, ज्यादा रियायत नहीं हो सकती। पन्द्रह दिन के अन्दर-अन्दर शादी कर डाल कहीं, नई' तो मकान और दूकान दोनों से खारिज।'

बातचीत यहाँ तक पहुँची थी कि बड़ी सरदारिनी जी भी ऊपर श्रा निकलीं श्रीर श्रपनी श्रादत के श्रनुसार बाज के पास खड़ी हो गईं। श्रपने श्रागमन पर सबको चुप देखकर बोलीं—"बारात न जाने कब श्रायगी !"

उनकी बात खतम भी नहीं होने पाई थी कि लोग-बाग चिल्ला उठे-''बारात त्रा गई, बारात त्रा गई ।''

शहनाइयाँ श्रीर जोर से पें-पें करने लगीं।

थोड़ी देर बाद सर्दार जी का छोटा लड़का दौड़ा-दौड़ा श्राया, "श्रोए, लुटिया डून गई, धत्तेरी की ।"

"क्यों ? कुशल तो है ? दूलहा देखा ? कैसा है !" सब ने एक स्वर में पूछा ।

लड़के ने बड़े वाहियात ढंग से बाज् इधर-उधर फैंक कर जवाब दिया—"धत्तेरे की...चिड़ीमार...बिलकुल चिड़ीमार जैसा ही दिखाई देता है।"

### × × ×

श्रगस्त १६४७ के दंगे भीषण रूप से श्रारंभ हुए तो हवेली के निवासियों श्रीर कारीगरों के समय का कुछ भाग मार-काट, हिन्दु श्रों तथा सिक्खों पर दाये गये श्रत्याचार श्रीर उनकी क्षियों की इजत लूटने जैसे विषयों पर खर्च होने लगा। लेकिन वहाँ के दैनिक जीवन श्रीर चहल-पहल में कोई विशेष श्रन्तर नहीं श्राया था, सिवा इसके कि घुक्की के विवाह को तीन-साढ़े तीन महीने बीत चुके थे। इन तीन महीनों के बीच में चमन दो चार दिन के लिए जालन्धर घर श्राया। उन्होंने श्रलग मकान प्रबन्ध कर लिया था, फिर भी चमन सरदार जी के घर चोरी-छिपे श्राता रहा। वह घुकी से बचकर रहता था। स्वयं घुकी ने भी विशेष रूप से इस बात का ध्यान रखा कि उसकी चमन से मुठभेड़ न हो।

चमन ने सरदार जी के लड़कों को बताया कि महू में उसका जीवन

बड़े श्रानन्द श्रौर चैन में व्यतीत हो रहा था। श्रासपास माश्क्षों की भी कुछ कमी नहीं थी। उसने एक नई कला सीखी थी, जिसका प्रदर्शन उसने धुएँ के छल्ले बना-बनाकर किया। यदि घुक्की की कोई बात चलती तो कहता—"हिन्दुस्तानी लड़कियाँ भी बस श्राजीब होती हैं। जरा हँसकर बात कर लो, तो गले का हार हो जाती हैं। फुलिश...! चाइलडिश !!"

श्राखिर वह घुकों से एक भी बात किये बिना ही चुपचाप लोट गया।

देखने में घुक्की पर इसकी कोई विशेष प्रतिक्रिया न दीख पड़ती थी। वह अब भी छोटी सरदारिनी के साथ उठती-बैठती, हँसती-बोलती। लेकिन उसके दिल को छुन लग चुका था। उसका शरीर नर्भ और दुर्बल तो पहले ही था, किन्तु अब तो बिलकुल ही हिंडु यों का ढाँचा सा होता जा रहा था। वह अत्यन्त कोमल और खिले हुए फूल के समान थी। यदि परिस्थितियाँ उसके अनुकुल होतीं, तो अवश्य ही उसकी महक दूर-दूर तक फैलती। किन्तु अब वह दर्द दबाकर खामोश हो गई थी। उसके चेहरे पर ऐसी गम्भीरता और ओज आ गया था कि अब किसी को उससे चुहलबाजी करने का साहस तक न होता था। उसे खाँसी आने लगी थी। जब खाँसी शुरू होती तो वह अपने कमजोर सीने को छोटे-छोटे हाथों से थामकर खाँसते-खाँसते बेहाल हो जाती। उसका चेहरा लाल हो जाता। कुछ देखने वालों को तो उस पर तरस आने लगता किन्तु वह मुसकराती हुई अपने सिर को पीछे की ओर फेंककर उसे दायें-बायें दो-चार फटके देती और फिर बातचीत में व्यस्त हो जाती।

निक्की अवश्य उड़ निक्ली थी। उसे बात-बात पर इतनी हँसी छूटती थी कि बस लोट-पोट हो जाती। पहले मुक्की उन महफिलों की जान

थी तो अब निक्ही ! घक्की का व्यवहार पहले भी गम्भीर था । अब छाती पर घाव खाकर वह ऋौर गम्भीर हो गई थी। लेकिन निक्की ग्रारंभ से से ही चंचल थी। श्रीर श्रब मैदान साफ पाकर वह तड़पती हुई विजली बन गई थी। छेड़छाड़ की उसमें बहुत बर्दाश्त थी, इसलिए वह घुकी की अपेद्धा सबको अधिक प्रिय थी। खफा होना तो उसे आता ही नहीं था । सिमटना, बनना, बचना, भूडमूठ माथे पर बल डालना पुर्हे पर हाथ न रखने देना. यह सब सही. फिर भी वह खका नहीं होती थी। चाहे कुछ भी हो जाय. उसकी चहक छोर महक में फर्क नहीं ग्राताथा।

श्रम ताइने वालों के लिये यह भी कोई भेद की बात न रहा थी कि निक्की का खास प्रेमी प्रेस का वह ऋादमी था, जिसे सब जलकुकड़ कहते थे। परन्त समक्त में न आनेवाली बात यह थी कि आखिर उसके पास कीन सी गीदड़सिंगी थी जिसके कारण निक्की सबको छोड-छाडकर उसी की दगल गरम करती थी।

एक दिन साँभा के समय एक बहुत बड़े तन्द्र पर लोहे की कढ़ाई जमाई गई, जिसे देख कर सब के सुँह में पानी भर आया। क्योंकि कुछ महीनों के श्रान्तर के बाद यह वह शाम होती थी जब बडी सरदारिनी कदाई में रेत गर्म करके उसमें मक्की, चना और चावल भूनती । गुड़ मिलाकर उनके लड्ड तैयार करती श्रीर सबको जी भर कर खिलाती। अतएव जब कारखाने के अन्दर बसूला चलाते हुए बाजिसह को बौंगे ने खबर सनाई कि ऋाज ऋाँगन में कढ़ाई जमाई गई है ऋौर बड़ी सरदारिनी के क्या तेवर हैं तब उससे न रहा गया । वह बस्तुला, रुखानी फेंक बाहर निकला और देखा कि बौंगे ने, जो अधिकतर भूठ बोला करता था, ऋब की फुट नहीं कहा था।

बड़ी सरदारिनी ने जब बाज को देखा तो इस ढंग से मुसक्राई मानो उसे पहले ही से विश्वास था कि बाज सब काम छोड़ छाड़कर

तुरन्त बाहर त्रा जायगा । त्राज सरदारिनी ने जामुनी रंग का दुपट्टा त्रोढ़ रखा था । वैसे तो कोई भी रंग उनपर नहीं फबता था किन्तु जामुनी रंग तो बहुत ही भोंडा लग रहा था । उस रंग के नीचे उसके पुलपुत्ते होटों पर मुस्कराहट फैलती जा रही थी । बाज से न्नांखें चार होते ही वह न्रार्थ-पूर्ण ढंग से दुमक कर रसोई-घर में चली गई ।

धीरे-धीरे हर प्रकार के दाने भुन चुके तब फिर निक्की की सहायता से बड़ी सरदारिनी ने सोंधी-सोंधी सुगन्ध वाले दाने को गुड़ में मिलाकर विभिन्न प्रकार के लड्ड तैयार किये।

चरन मिनट-मिनट की खबर प्रेस में पहुँचा रहा था। कारलाने के कारीगर रसोंईघर के अधिक निकट थे इसलिए वे काम में मन लगा ही नहीं सके। वे इसकी प्रतीचा कर रहे थे कि कब सरदारिनी अपने लोच-दार स्वर में उन्हें खाने को आमंत्रित करे और कब वे पिल पहुँ चुबैने के लडुआं पर।

सबसे पहले सरदारिनी ने घुकी को आवाज दी। अब उसे घुकी पर प्यार-सा आने लगा था। घुकी दोनों कुहिनयाँ घुटनों पर टिकाये और मुँह हाथों में छिपाये खाँस रही थी। जब खाँस चुकी तो अपनी आदत के अनुसार उसने सिर को पीछे की ओर फेंककर उसे दायें-बायें दो चार भटके दिये और फिर हँसने लगी......उसकी हँसी बड़ी उदार होती थी। इसके बावजूद उसके चेहरे पर आजीब से भाव छाये रहते थे। अब उस पर पहली वाली आकर्षक प्रतिक्रिया नहीं प्रकट होती थी। ऐसा लगता था मानो वह स्वयं अपने लिए हँस रही है।.....इसी तरह खिलखिला कर हँसती हुई वह आगे बड़ी और उसने दोनों हाथ ऐसे फैलाये मानो उसे मन्दिर या गुरुद्वारे से प्रसाद मिल रहा हो।

बड़ी सरदारिनी ने सबको नाम ले-लेकर बुलाया—''वे बौंगिया, वे चरन, नी साँचिलिये, नी प्रेमो....."

बाज श्रपने प्रिय स्टूल पर टंगा हुआ था।

उसे नहीं बुलाया गया ?

नहीं, उसे नाम लेकर नहीं बुलाया गया बल्कि सबकी नजरें बचाकर सरदारिनी जी उसे श्रांखों श्रीर सिर के इशारों से बुलाती रहीं। मानो उसके लिये विशेष निमंत्रण भेजे जा रहे थे। बाज भी एक काइयाँ या। वह हैरान होकर सोच रहा था कि कहीं ऐसा न हो किसी दिन सरदारिनी उससे लिपट न जाय। कुछ देर सरदारिनी के व्यवहार से श्रानंदित होने के बाद वह कुलाँच भर कर स्टूल से उतरा श्रीर दूसरी कुलाँच में सरदारिनी के निकट पहुँच गया। चनैने के लड्डू लेते समय उसने उनकी पसलियों में कोइनी का एक टहोका भी दिया। क्योंकि... श्रव इतना श्रिषकार तो श्रवश्य था उसका सरदारिनी पर।

बौंगा स्राज बहुत लाड़ में स्राया हुस्रा था। बाज के पास बैठने के बजाय वह छोटी सरदारिनी के पास जा बैठा स्रौर बन्दर की भाँति बड़ी स्रातिशयोक्ति के साथ मुँह स्रागे को बढ़ा कर स्रौर 'चप-चपा-चप' के शब्द निकालता लड्ड चबाने लगा। उसी समय निक्की को पास से खास स्रम्दाज में उठते स्रौर तिनक स्रौर स्रम्वाभाविक स्रम्दाज में चलते देख बौंगे ने छोटी सरदानी को सम्बोधित कर निर्भाकता से कहा—"स्रो जी, निक्की का पाँव तो भारी सा दिखता है।"

बाज ने भी यह बात सुन ली। उसने ध्यान से देखा तो उसे भी विश्वास सा होने लगा। उसने सोचा कि श्राखिर बात क्या है जो ब्राज बौंगा सच ही बोले जा रहा है।

×

धीरे-धीरे निक्की का पाँव और ऋषिक भारी होता गया तो हवेली में कानाफुसी होने लगी। और फिर ऋकस्मात वह गायब हो गई तो पहले यह ऋफवाह उड़ी कि वह जलकुकड़ के साथ गायब है, लेकिन जलकुकड़ पूर्ववत काम पर ऋाता रहा।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि जब निक्की गायब हुई तो उसके

घरवालों ने तिनक भी परेशानी नहीं प्रकट की । तीसरे दिन घुक्की ने देवे स्वर में स्वीकार किया कि मौसी गाँव से ऋाई थी, वह उसके साथ चली गई । मौसी कब ग्राई थी १ बस, वह ग्राई ऋौर चली गई । किन्तु निक्की ने कभी कहीं जाने की इच्छा प्रकट नहीं की थी।.....इन सब प्रश्नों का टाल मट्टल के ग्रातिरिक्त कोई उत्तर नहीं था।.....यदि कोई ग्राधिक कुरेदकर पूछता तो घुक को खाँ सी ग्रा जाती। वह खाँसते-खाँसते बेहाल हो जाती, यहाँ तक कि बात श्राई गई हो जातीं।

श्रक्त्वर का महीना खतम होने को था किन्तु श्रगस्त से जो दंगे ग्रुरू हुए थे वे खत्म होने ही में न श्राते थे।

हवेली के लम्बे-चौड़े श्राँगन के इर्द गिर्द श्रनेक कोठरियाँ बनी हुई थीं। बहुत से कारीगर नगर के खतरनाक भागों से निकल कर बाल बच्चों सिहत श्रस्थाई रूप पर वहाँ ठहरे थे। श्रतएव रात को कारखाने में काफ़ी रौनक हो जाती। भोजन से निवृत्त हो कारीगर कई रात तक श्रापस में गप-शप हाँकते श्रीर पश्चिमी पंजाब में जो श्रत्याचार हिन्दुश्रों तथा सिक्खों पर दाये जा रहे थे उनकी जी खोलकर निन्दा करते।

ऐसी ही एक रात थी।

भोजन करने के बाद कारीगरों का एक गिरोह कारखाने में घुसा गप-शप में लगा था। उराडी हवाएँ चलने लगी थीं इसलिए ऋग्दर से कुराडी चढ़ा दी गई थी। बल्कि बींगा तो सुलगते हुए उपलों की मिट्टी की ऋँगीठी रानों में दबाये बैठा था। किसी ने ऋगवाजा कसा--- "ऋषे बोंगे! ऋन्छी जवानी है साले, ऋँगीठी रानों में दावे है।"

"जार ! ऋब तो दिल उदास रहता है।"

"हाँ भई, डेंद महीना हो गया, निक्की को गये हुए।"

एक बोला—"जार श्राच्छी बात याद दिलाई सुमेत। श्राज एक त्रादमी मिला था, जो निक्की की मासी के गाँव के पास वाले गाँव में रहता है।"

''क्या निक्की की कोई ख़बर मिली १'' दो एक ने दिलचरपी ली । ''हाँ !''

"क्या ?"

"उसने कुएँ में छलाँग लगा दी थी।"

"श्ररे राम !"

"उसने जे भी बताया कि उसके बच्चा होने वाला था।"

"हाँ...श्रो...पिर ! '

"उसने ज्यादा खनर नहीं नताया। सुना था कि लड़की बच जायगी।"

बाज ने राय दी—"मेरे ख्याल में तो देवीदास ने उसकी हालत देख कर गाँव मेज दिया होगा जिसमें कि कहीं बच्चे से जान छुड़ाकर लौट स्रायगी तो जल्दी से शादी कर दी जायगी उसकी।"

इस दुखद घटना का सबके दिलो पर श्रासर हुआ और हँसती-बोलती महफिल पर सन्नाटा छा गया। इतने में किसी ने दरवाजा खटखटाया।

''कीन ?'' बाज ने पूछा, लेकिन उत्तर में फिर लगातार दरवाजा खटखटाने की स्रावार्जे स्राती रहीं ।

सबको यह बात विचित्र सी लगी ! बाज ऋपनी जगह से उठा किन्तु उसके गन में खुदबुद-खुदबुद हो रही थी कि कहीं बड़ी सरदारिनी न हो ! मौका पाकर उसने चढ़ाई कर दी हो शायद !

बाज ने कुएडी खोल दी।

बाहर से किवाड़ की बहुत धीरे-धीरे दकेला गया।

दिये की थरथराती लौ के मन्द प्रकाश में एक खड़की भीतर प्रविष्ट हुई ।

साँवली !

बाज दो कदम पीछे हट गया ।

सभी की आँखें दरवाजे पर लगी हुई थीं। साँवली को देखकर उनके

[ २४३ ]

मुँह से श्रनायास विभिन्न शब्द निकल पड़ते किन्तु बाज के संकेत पर वे उसी प्रकार चुपचाप बैठे रहे।

साँवली श्रीर श्रागे बढ़ी। उसका गोल-गोल चेहरा, थीवन की गर्मा से तमतमाए हुए चेहरे की त्वचा, तिनक मोटे श्रीर भर पूर होंठ, चिकने गाल... इन सब चीजों के सौन्दर्थ को पहले कभी किसी ने ध्यान देने योग्य नहीं समका था। इन सब मनोहर गुणों के साथ-साथ उसके चेहरे पर दुधमुंहे बच्चे का सा भोलापन था।

लेकिन इतनी गई रात को वह वहाँ क्या करने आई थी!

साँवली ने हाथ फैलाकर उस ऊँची श्रीर भारी भरकम मेज का सहारा लिए जिस पर बाज फर्नीचर बनाते समय विभिन्न भागों पर रन्दा किया करता था। लड़की ने मुँह खोला श्रीर बहुत धीरे से बोली—"बाज चाचा!"

"हाँ !" बाज ने दाढ़ी पर हाथ फेरा।

साँवली ने गर्दन इधर-उधर घुमाकर कोई और आवाज सनने का असफल प्रयत्न किया। उस समय उसके अधखुले मुँह के अन्दर दन्तपंक्ति के पीछे उसकी जीभ छोटी-सी मछली के समान फड़क रही थी। फिर उसने भेद पूर्ण स्वर में पूछा—"क्या तुम अकेले हो १११

यह सुनकर सबने गर्दन आगे को बढ़ाई । उनकी आँखें फैल गईं। बाज ने तिनक भी बदले बिना जवाब दिया—"हाँ साँवली, मैं आकेला हूँ।"

''कहाँ हो १'' यह कह वह बाजू फैलाकर हाथ हिलाती हुई ग्रागे बढ़ी, फिर उसने उसे छू लिया।

"यह रहे तुम !" वह उसे ख़ूकर बड़ी प्रसन्न हुई। "साँवली, तुम इस बखत यहाँ क्यों ख्राई हो !" "क्यों, इस बखत क्या है!"

[ 388 ]

"इस बखत रात है । तुम...तुम जवान हो...करीब-करीब " "मेरे लिए रात श्रोर दिन समान हैं ।"

"लेकिन इस बखत रात के ग्यारह बज चुके हैं... श्रीर फिर तुम श्रकेली हो।"

यह सुनकर साँवली के साफ-सुथरे चेहरे पर वेदना के चिन्ह उभर त्र्याए । वह चिकत होकर बोली—"पर बाज चाचा ! भला तुम्हारे पास त्र्याने से क्या बुराई हो सकती है ? तुम तो देवता हो..."

बाज ठिठककर पीछे हटा ।

"तुम नहीं जानते चचा," साँवली ने फिर कहना शुरू किया, "तुम्हारी दुनिया और है और अन्धों की दुनिया और । चाचा, तुम कितने अच्छे हो, कितने दयालु हो। जब मैं तुम्हारी आवाज सुनती हूँ तो धरटों उसकः मिठास और प्यार के बारे में सोचती रहती हूँ। जब कभी लाला सुके गुरसे होता है तो हैं सोचती हूँ, कोई बात नहीं। मेरा बाज चाचा जो है। वह सुके लाला से कम प्यार तो नहीं करता...ठीक है न ""

इस बीच में बाज मूँछ का एक सिरा धीरे-धीरे चबाता रहा । उसकी बात खतम हो जाने पर वह तिनक रका और फिर उसके कुरूप चेहरे पर एक मनोहर मुस्कान उत्पन्न हुई और वह अपना खुरदुरा हाथ उसके सिर पर रखकर बोला—"हाँ साँवली, यह सच है...लेकिन...इस बखत तुम जाओ ।"

"नहीं-नहीं चाचा, मैं बार्ते करने ऋाई हूँ।" "ऋच्छी लड़की बनो साँवली। इस टैम जाओ। कल करेंगे बार्ते ू।" "ऋो नहीं चाचा! कल तक सब हो सकता तो मैं बिस्तर से उठकर

क्यों त्र्याती ?''

सब चुपचाप थे। कारखाने के कमरे में एक बार फिर साँवली की आवाज घरटी की [ २४५ ]

तरह गूँज उठी—"बाज चाचा, तुम समक्ते नहीं। मैं तो तुमसे बात करने आई हूँ, इस बखत यहाँ कोई तो नहीं, तभी तो मैं तुमसे बातें करना चाहती हूँ।"

"क्या बातें करना चाहती हो ?"

"बाज चाचा!" श्रव साँवली की श्रावाज बदल गई। वह तिनक कि श्रीर फिर बोली —"चाचा ...! कुलदीप बाबू बहुत श्रच्छे हैं। वे कहते थे कि मेरी श्राँखें ठीक हो सकती हैं। मैं जन्म हो श्रांधी हूँ न! इसलिए...श्रीर... वह...कहते थे कि तुमसे ब्याह...कहँगा।

इस पर बाज ने श्रपनी दाढ़ी को मजबूती से मुद्धी में पकड़ लिया— "कौन कलदीप !"

"वह जो नये ऋाये थे, वही।"

"क्या कहता था वह...?"

"वह कहते थे, साँवली ! तुम मुक्ते बड़ी प्यारी लगती हो । मैं कहती, मैं अन्धी हूँ, भला अन्धी लड़िक्यों भी किसी को प्यारी लगती हैं... वह कहते, बावली ! प्यार किया नहीं जाता, होजाता है । मैं तुम्हें प्यार करता हूँ । श्रीर फिर तुम जन्म की अन्धी नहीं, तुम्हारा इलाज हो सकता है । तुम देखने लगोगी ।...पर चाचा । उनको गये पन्द्रह दिन हो चुके हैं । लीटकर नहीं श्राये । श्रीर... श्रीर... "

यह कहते-कहते साँवली ने अपनी निस्तेज आँखों को और फैलाया, मानो कुछ, देखने की चेष्टा कर रही हो। और फिर मेंपकर बोली— "और...और मेरा पाँव भी भारी है।"

बाज ने हठात् खुल जाने वाले ऋपने मुँह पर हाथ रख लिया।

साँवली कुळ देर के लिये मौन हो गई ज्यौर उत्साहहीन दुखी स्वरं मं उसने फिर बोलना शुरू किया—"ग्राज बिस्तर पर लेटे मैं सोच रही थी कि श्रगर वह न श्राये तो...! लाला बहुत दुखी हैं। वह कहता है— घुकी और निक्की दोनों खराब हैं। एक को ऐसा रोग लग गया है जिससे बचना असमव है। दूसरी का पाँव...सच बात चाचा, लाला अत्यधिक दुखी है। वह रात रात भर रोता रहता है।...वह मुक्तसे प्यार करता है। मुक्ते गले से लगाकर कहता है, यह मेरी रानी बिटिया है। इसे पाप छू भी नहीं गया...लेकिन उसे नहीं मालूम कि मेरा पाँव भी...में सोचती हूँ कि यदि कुलदीप बाबू न आये तो... लाला को मालूम हो जायगा। वह मर जायगा, एकदम मर जायगा...यह सोचते सोचते मुक्ते रोना आ गया। मुक्ते कुछ नहीं स्का तो जी का बोक्त हल्का करने के लिये तुम्हारे पास चली आई.. लेकिन वह जहर आयेंगे.. है न चाचा र वह आयेंगे न ?"

सब लोग दम साधे बैठे रहे।

बाज ने एक बार फिर ऋपना भारी भरकम हाथ उसके सिर पर रखा ऋौर उसे सान्तवना देते हुये कहा—''हाँ साँवली, कुलदीप ऋायगा वह जरूर ऋायगा।"

थरथराती हुई मिद्धम रोशनी में बाज ने देखा कि साँवली के निज्योंति नेत्रों में ऋाँस दमक रहे हैं...

"ग्रौर ग्रब साँवली, तुम्हें वापस जाना चाहिए ।"

यह कहकर बाज ने धीरे से दरवाजा खोला और साँवली की पीठ पर हाथ रखकर उसे आगे बढ़ाया । वह धीरे-धीरे कदम बढ़ाने लगीं ।

बाज दरवाजे पर ही रक गया। वह सौं-ली को जाते हुए देखता रहा। चारो स्त्रोर निस्तब्धता छाई थी। तारों के मन्द प्रकाश में साँवली एक छाया के समान दिख रही थी। उसके लिए स्प्रॅंपेरा-उजाला एक सा था। वह बिना किसी हिचकिचाहट के बढ़ती चली जा रही थी।

रसोईचर के कोने से होकर हवेली की भन्य किन्तु काली दीवार की ऋौर भी काली छाया से होती हुई जब वह बड़े फाटक पर बनी हुई उस ऊँची महराब के नीचे पहुंची जिसके नीचे से तीन हाथी ऊपर-नीचे

श्रासानी से निकल सकते थे तो बाज को मैले कुचैले कप पहने वह इकहरे बदन की हल्की-फ़ल्की श्रन्धी लड़की बहुत निर्वेल, बहुत चीए श्रीर श्रास्तित्वहीन-सी दीख पड़ी। मानो वह कोई रेंगता हुश्रा निरीह कीड़ा हो। बाज वहीं खड़ा रहा। उसने श्राकाश के विस्तार, हवेली की ऊँची ऊँची दीवारों, बेजान इमारतों के सिलसिलों श्रीर फिर उस लम्बे-चौड़े दालान पर निगाह दौड़ाई जिसके वातावरण में कई कच्चे-कुँवारे ठहाके गूँजते-गूँजते सहसा दर्दनाक चीखों में बदल गये।

रात—कोई रात इतनी काली उसके देखने में पहले कभी नहीं आई थी... और तारे पीप के धब्बों के समान दीख पड़ रहे थे।

### × X

जैसे-जैसे दिन बीतते जा रहे थे वैसे-वैसे साँवली का मेद जानने वाले कारीगरां, विशेषकर बाज की परेशानी बढ़ती जा रही थी। वे नहीं चाहते थे कि साँवली ऋपनी बहनों की तरह बरबाद हो। नल के पास या दरवाजे की सीढ़ियों पर या ऊँची महराब के नीचे बैठी ऋन्धी साँवली की दशा बड़ी दयनीय दीख पड़ती थी। ऋाते-जाते जब भी उसकी उनसे मुठभेड़ हुई, साँवली ने उनसे या बाज से दोबारा उस विषय में कुछ नहीं कहा।

बीस दिन श्रीर बीत गये।

पंजाब बरबाद हो रहा था—वारिस शाह का पंजाब, गेहूँ के सुनहरे गुच्छों वाला पंजाब, मदभरे गीतों वाला पंजाब, हीर का पंजाब, कूँजों ह्यौर रहटों वाला पंजाब !—ह्यौर उसकी एक निस्तेज ह्याँखों वाली निरीह बेटी भी बरबाद हो रही थी।

एक रात, जब कि सब कारीगर भोजन त्र्यादि से निवृत्त होकर नित्य की भाँति कारखाने में बैठे बातें कर रहे थे, यकायक साँवली की चर्चा छिड़ गई। उन सब की हार्दिक इच्छा यही थी कि काश, साँवली का

अपनी बहनों का-सा हाल न हो। किन्तु वे इस बात को भली भाँति समभते थे कि यह असम्भव है और ऐसा सोचना नितान्त मूर्वता है।

बाज खुले दरवाजे में खड़ा काले आकाश की ओर देख रहा था। बौंगे को सरदी लगी तो उसने चिल्लाकर कहा— "ओए मऊँ दे मुत्राण! दरवाजा बन्द कर दे। साले तू तो साँड़ हो रहा है फूल कर। हम गरीबों का तो ख्याल किया कर।"

ग्रीर कोई मौका होता तो बाज बौंगे की गाली के उत्तर में कीई नई ग्रीर भारी-भरकम गाली गढ़ता। किन्तु उस समय उसने चुपके-से दर-वाजा भेड़ दिया ग्रीर स्वयं बड़ी मेज पर हाथ टेक कर खड़ा हो गया।

सब उसे हँसने-बोलने के लिए उकसाते रहे। किन्तु जब उसका मूड ठीक नहीं हुआ तो उन्होंने बड़े आग्रह से पूछा—"बई! बात क्या है?" "मैं सोच रेया हूँ।"

बैंगे ने सरदी लगने के बावजूद सह से उठाकर कबड़ी खेलने वाले खिलाड़ी की-सी मुद्रा बनायी और पास आकर बोला—"सन्चे पातशाहों! क्या सीच रहे हो?"

बाज ने उसकी स्रोर दार्शनिक भाव से देखा तो उसे हँसी स्रागई। किन्तु बाज के तेवर वैसे के वैसे रहे।

बोंगे को हास्यास्पद ढंग से ऋपनी ऋोर देखते पाकर बाज ने मुँह के ग्रन्दर जीम धुमाई ऋौर फिर सिर को हिलाकर उसने बोंगे तथा श्रन्य साथियों पर छा जाने वाली निगाहों से देखा ऋौर कहा—''में एक बात सीच रहा हूँ।''

''क्या १''

सबको उसका दार्शनिक मूड देखकर हँसी आ रही थी जिसे वे बड़ी कठिनाई से रोके हुए थे।

बाज ने सिर को इस प्रकार फटका दिया मानो नह बहुत बड़ा च्रौर अनुभवी बुजुर्ग हो त्रौर फिर मेज को दोनों हाथ से मजबूती से पकड़ कर

# पंजाब को कहानिथाँ

बोला—"पंजाब में कित्ता जुलम हो रहा है। ऐसा खून-खराबा न देखा न सुना—ठीक ?''

"ठीक !"<sup>1</sup>

"... ख्रौर फिर हिन्दू और सिख औरतों की जो बेजती पिछ्यमी पंजाब में सुसलमान कर रहें हैं, वह सब तुमको मालूम हैं, ठीक !''

"ठीक !" सबने तनिक जोश में आकर जवाब दिया।

श्रव कुछ देर शान्त रहने के बाद वह धीरे-धीरे सिपाहियों के से श्रन्दाज़ में सीघा खड़ा हो गया श्रीर एक-एक शब्द पर ज़ोर देकर बोला—"पर...में सोचता हूँ कि मुसलमान गुस्से में श्राकर ब्याक़्फी कर रहे हैं, वही ब्याक़्फी हम भले चंगे श्रपनी बहनों श्रीर बहू-बेटियों के साथ कर रहे हैं। बताश्रो, गुसलमानों को दोष देने से पहले हमें खुद को नहीं सरम श्रानी चाहिए ?"

महिंकत पर सन्नाटा छ। गया।

नन्हें-से दीपक की पत्तती-सी थरथराती लों के मन्द प्रकाश में बाज ने ख्रपनी मोटी तथा लम्बी उँगली उठाते हुए ख्रपनी बात जारी रखी—'ऐसे ही पाकिस्तान में घुकी, निक्की ख्रीर साँवली की हजारों-लाखों बहनें होंगी। तो फिर सावल यह उठता है कि हम या वे किस इजत के लिए लंड रहे हैं ? क्यों एक-दूसरे को जंगली कहते हैं ?...''

इतने में दरनाजा बहै धपाके के साथ खुला। सब ने उधर निगाह डाली तो देखा कि साँवली चौखट के बीचो बीच खड़ी हैं। उसके रखे-सूखे बाल रुई की भाँति धुने हुए, उसके बाजू फैले हुए। अंगों में कम्पन था। इसके पहले कि कोई बोलता वह जोर से चिल्लाई—"बाज चाचा! बाज चाचा!!"

साँवली की त्रावाज उस वायु मएडल में दो बार गूंजी।
"हाँ-हाँ साँवाली, बोल घबराई हुई क्यों हैं तू! बोल..."
"वह त्रा गये!"

धकौन १"

"कुलदीप बाबू ऋा गये।"

"ग्रा गया वह ?" सब ख़ुशो के मारे चिल्ला उठे ।

" श्रीर श्राते ही वह मुक्ते डाक्तर के पास ले गये। डाक्तर ने हहा, श्राँखें ठीक हो जायँगी लेकिन इलाज बहुत दिन करना पड़िसा।"

बाज ने बढ़कर साँवली के दोनों निर्वल कन्धों को स्रपने हाथों में दशोच लिया स्रोर उसे हिलाकर बोला - "सच १ कब १"

"हाँ, सच । उनकी माता मी साथ ऋाई हैं।"

"ग्रारी वह इसे दिन कहाँ गैंच रहा ?"

"उन्होंने मुफे बताया कि पहले उनकी बात कोई नहीं मानता था। उन्होंने भूख हड़ताल कर दी। बड़ी कठिनाई से उन्होंने उनकी बात मान ली। वे कहते हैं कि ऐसा रगड़ा फगड़ा हुआ कि मैं खत भी न लिख सका। लिखता भी तो क्या लिखता ''

''ग्रांहो-हो-हो !" सब एकदम खुलकर हँसे।

साँवली ने भूमकर कहा—"वह मेरी मिन्नते करने खगे। कहने लगे साँवली, सुके माफ कर कर दो…त्रागर तुम्हें कोई दुख पहुँचा हो। हम पेसे वाले नहीं हैं लेकिन सब काम ठीक हो जायँगे ..। हम तुम्हें दिल्ली ले जायँगे।"

अब सब लोग साँवली की ओर बढ़े और अपने अपने दंग से प्रसन्नता का प्रदर्शन करने लगे। आखिर बाज ने दोनों हाथ उठा कर कहा—"भाइयों, ठहरां। मेरे ख्याल में अब साँवली को आराम करना चाहिए। इसे रात के समय घर से बाहर नहीं रहना चाहिये...साँवली हम बहुत खुश है। अब कल बातें होगी। चलो, अब तुम जल्दी से घर जाओ।"

साँवली के साथ किसी का जाना उचित नहीं था। क्योंकि वह घर वालों की चोरी से त्राई थी।

सब उसे बहे स्तेह से कारखाने के दरवाजे तक छोड़ने गये।
ग्राट-दस मिनट के बाद जब सारा टोला बाजार जाने का प्रोग्राम
बना बाहर निकला तो ऊँची महराब के नीचे से निकलते समय उन्हें
दीवार के साथ एक मिट्याली सी मूर्ति दीख पड़ी।

वे सब चक गये।

बाज ने आगे बढ़कर देखा तो मालूम हुआ कि साँवली है। "साँवली तम अभी घर नहीं गईं ?''

साँवली ने सूत्य में घूरते हुये कहा — ''बाज चाचा ! न जाने मेरे मन को क्या हो गया है । कुछ सूमता ही नहीं कि क्या कहाँ । जरा दम लेने को रुक गई थी बाज चाचा, सोचती ऐसी खुशी की बात क्या हो सकती है । लेकिन चाचा तुम्हें मेरी बात पर श्रकीन है न !''

वाज ने धूमकर अपने साथियों की ओर प्रश्न सूचक दिन्छ से देखा । सब चुप थे। वह भी चुप रह गया।

सबकी चुप पाकर साँबली ने अपना सवाल दोहराया—"आप सब को अकीन नहीं आता ?"

''बाज की आँखों के काने भींग गये। उसने हाथ बदाकर साँबली के सिर पर रख दिया और फिर धीमी आवाज में बोला—हमें अभीन है और देखो तुम्हें बेबखत घर से बाहर नहीं रकना चाहिये। और फिर सरदी पड़ने लगी है। कहीं तुम बीमार न हो जाओ।''

साँवली ने उसकी मजबूत कलाई को श्रपनी कमजोर उंगालियों से खूकर पूछा—"पर बाज चाचा, श्राप सब लोग वेबलत कहाँ जा रहे हैं।"

"हम ?" बाज ने पितृप्रेम से काँपते हुए हाथ से उसके गाल की के के खान दिया—साँवली नेटी ! हम इस खुशी में बक्षी खाने जा स्टिपाइक Sah Municipal Library,

Naini Tal,

दुर्गा साह म्युनिसर्पल की इबेरी